डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

उपन्यास

धन यात्रा

मुश्ताक़ अहमद यूसुफ़ी

अनुवाद - तुफ़ैल चतुर्वेदी

अनुक्रम

- 1. तुजुके-यूसुफी (यूसुफी की जीवनयात्रा)
- 2. धन यात्रा (आत्मकथा)

अनुक्रम 1. तुजुके-यूसुफी (यूसुफी की जीवनयात्रा) आगे

1. तुजुके-यूसुफी (यूसुफी की जीवनयात्रा)

जिस्म तो खाक है और खाक में मिल जाएगा
मैं बहरहाल किताबों में मिलूँगा तुमको

- होश नोमानी

फजल हसन
और
मुसर्रत अली सिद्दीकी के नाम

अच्छा हूँ या बुरा हूँ पर यार हूँ तुम्हारा

प्राचीन काल में प्रचलन था कि धनी-मानी, श्रीमंत जन कोई निर्माण कराते तो उसकी नींव में अपनी क्षमता के अनुसार कोई मूल्यवान वस्तु रख दिया करते। नवाब वाजिद अली शाह अपनी एक मुँहचढ़ी बेगम, माशूक महल से कुपित हुए तो उसकी हवेली ढा कर एक नया भवन निर्माण कराया। माशूक महल जात की डोमनी थी। इसलिए उसकी खिल्ली उड़ाने और उड़वाने के लिए उसकी नींव में सारंगी और तबला रखवा दिया।

मैंने इस किताब की नींव अपनी जात पर रखी है जिससे एक-लंबे समय से कुपित हूँ।

पेशा समझे थे जिसे हो गई वो जात अपनी

न्यूनाधिक बीस बरस पुरानी यादों और बातों की यह पहली किस्त 1972 में पूरी हो गई थी। याद पड़ता है कि इसके दो चैप्टर 1971 में मोमबत्ती की रौशनी में उन रातों में लिखे गए जब कराची पर लगातार बमबारी हो रही थी और रॉकिटों तथा एक-एक गज के गोलों ने आसमान पर आग का जाल सा बुन रखा था। हमारे इतिहास का एक रक्तरंजित चैप्टर लिखा जा रहा था। कार्यों की अधिकता और तबियत के उकताएपन ने तीन साल तक पुनर्दृष्टि डालने की अनुमति न दी। सितंबर 1975 में जब पेट से खून आने लगा और डेढ़ महीने तक चलना-फिरना बिस्तर के आस-पास तक सिमट कर रह गया तो एकाग्र हो कर जीवन की उपलब्धियों की गिनती और धन्यवाद देने का समय मिला। पांडुलिपि पर दूसरी नजर डालने का मोड़ भी लेटे-लेटे तय हो गया। अपने लिखे की काँट-छाँट और फालतू की चीजें निकालने का काम बड़ा टेढ़ा होता है। यह तो ऐसा ही है जैसे कोई सर्जन अपना एपेंडिक्स निकालने की स्वयं कोशिश करे। कुछ बरस पहले की बात है। रावलपिंडी में कर्नल मुहम्मद खाँ (प्रसिद्ध व्यंग्य लेखक) से भेंट हुई। स्वभाव के विपरीत कुछ निढाल, कुछ थके-थके दिखाई पड़े। पूछा, 'तबियत ठीक है?' बोले, 'किताब पर दूसरी नजर डाल रहा हूँ। एक कृपालु ने धड़ल्लों की गणना करके बताया कि आपने यह शब्द 37 बार प्रयोग किया है। सुबह से 25 धड़ल्ले तो निकाल चुका हूँ। शेष को कान पकड़ कर निकालने लगा तो रोने मचलने लगे।' इन घटना की चर्चा इसलिए आवश्यक है कि मैंने भी विभिन्न प्रकार के धड़ल्ले स्वयं निकाले हैं। लाख जी कड़ा किया। फिर भी कुछ जड़ें, कुछ शाखें, कुछ कलियाँ जो मुरझा चली थीं आत्मालंभ के पौधे में आशा की तरह खुभी रह गईं।

यह जीवन यात्रा एक आम आदमी की कहानी है कि जिस पर खुदा के करम से किसी बड़े आदमी की परछाईं तक नहीं पड़ी। ...एक ऐसे आदमी की बात जो हीरो तो क्या Anti Hero होने का दावा भी नहीं कर सकता। आम आदमी तो बेचारा इतनी भी क्षमता नहीं रखता कि अपने जीवन को आदमी के लानती तीन प्रमुख हिस्सों में बाँट सके। यानी जवानी में दुर्गत, ढलती उम्र में नसीहत और बुढ़ापे में वसीयत। यह समकालीनों से नोंक-झोंक, और राजनैतिक उठापठक की कहानी नहीं है। न किसी लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास और उसकी विजय का 'सागा' है।

मैं स्वयं को सिकंदर महान से अधिक भाग्यशाली और सफल समझता हूँ। इसलिए कि मैं जीवित हूँ। मेरी एक साँस की बादशाहत अभी शेष है। अपने दिल में छुपी हीरो-गैलरी पर दृष्टि डाली तो किसी की परछाईं भी अपने व्यक्तित्व में न पाई। हेनरी सातवाँ, सैम्यूअल जानसन, गौतम बुद्ध, फाल्स्टाफ, बाबर, गालिब, पिकविक बच्चे, अमीर खुसरो....हाँ दिमाग पर जोर डाला तो कई सुप्रसिद्ध व्यक्तियों के जिन कुछ-कुछ गुणों का अपने व्यक्तित्व में जमघटा दिखाई दिया, काश वो न होतीं तो जीवन सँवर जाता। उदाहरण के लिए नेपालियन की लंबाई, जूलियस सीजर का चटियल सिर, जैना लूलू ब्रिजेडा का वज्न, सैम्यूअल जानसन की दृष्टि, नाक बिल्कुल क्लिओपेत्रा की तरह कि अगर 1/2 इंच भी कम होती तो उस दुखिया की गिनती बदसूरतों में और हमारी सुंदर लोगों में होती। उम्र वही जो शेक्सपियर की मरते समय थी। गालिब ने स्वयं को इस आधार पर आधा मुसलमान कहा था कि शराब पीता हूँ सुअर नहीं खाता। लेखक सूद खाता है शराब नहीं पीता कि उससे पैसा नहीं कमाया जाता। मूसा के मानने वालों ने तो सोने के बछड़े की केवल पूजा की थी, हम तो उससे नस्ल बढ़ाने का काम भी लेने लगे हैं। ब्याज पर रुपया चलना मनुष्य का दूसरा सबसे पुराना व्यवसाय है। इसके बारे में कम-से-कम उर्दू में कुछ नहीं लिखा गया। पहले प्राचीनतम व्यवसाय का हक तो मिर्जा हादी रुसवा ने 'उमराव जान अदा' में और बाद में सआदत हसन मंटो ने बहुत सुंदरता से अदा किया बल्कि कहना चाहिए कि मंटो तो सारा जीवन लेखनी ही पकड़े रहे।

इन घटनाओं, अनुभवों और प्रभावों का संबंध मेरे बैंकिंग कैरियर के उन प्रारंभिक वर्षों से है जब इस व्यवसाय का सम्मान बना हुआ था। अलबत्ता इंश्योरेंस एजेंटो से लोग छुपते फिरते थे। फिर वो भी समय आया जब इंश्योरेंस एजेंट भी बैंकरों से मुँह छिपाने लगे।

फिरते हैं सूदखोर कोई पूछता नहीं

करतूत-कथा में कुछ परिवर्तन किए गए हैं जो इस लिए आवश्यक थे कि उनमें कुछ पर्दादारों के अतिरिक्त कुर्सीदारों के नाम भी आते हैं। इसलिए मिस्टर एंडरसन का अपवाद-स्वरूप नाम और जगह बदल दी गई है। कहीं-कहीं घटनाओं में आगे-पीछे का क्रम बदला लगेगा। कुछ चरित्र भी गुड़-मुड़ कर दिए हैं। समाज के कोलाहल के डर से काले-सफेद को सफेद-काला कर दिया गया है। इसके बाद भी अगर कहीं व्यक्तित्व और वास्तविकता में साम्य मिले तो उसे 'फिक्शन' की कमी माना जाए कि यह एक नए सीखे बैंकर की तीव्रगति की कथा है, किसी मरणासन का अंतिम स्टेटमेंट नहीं जिसके समाप्त होते ही उसे मरने की अनुमति और आरोपी को फाँसी दे दी जाए।

कुछ ख्वाब है , कुछ अस्ल और कुछ हैं अदाएँ

कुछ उदारता से बनाए हुए चारकोल स्केच हैं। कुछ कैरी कैचर (Caricature) और तीन-चार जी लगा कर बनाई हुई केमियो तस्वीरें (Camea Portraity) हैं। आपबीती में एक मुसीबत ये है कि आदमी अपनी बड़ाई आप करे तो यह आत्म प्रदर्शन कहलाए और शिष्ट संकोच से काम ले या झूठ-मूठ अपनी बुराई करने बैठ जाए तो लोग झट विश्वास कर लेंगे। संभव है कई पाठकों को इस आपबीती, जीवन-यात्रा में लिखने वाला स्वयं कहीं न दिखाई पड़े। अगर ऐसा अनुभव हो तो यह सच के निकट होगा। इसलिए कि अपने जीवन में पग-पग पर दूसरे ही घुसे दिखाई पड़ते हैं। आम आदमी की एक पहचान ये भी है कि उसके जीवन में केवल तीन अवसर ऐसे आते हैं जब वो अकेला सबकी आँखों का केंद्र बिंदु होता है, खतना, शादी और दफनाते समय। इस किताब का केंद्रीय चरित्र कौन है? लेखक? मिस्टर एंडरसन? वो दीवाने जिनके कारण सूदखोरों की गली में चहल-पहल है? या काल की गति Alice in Wonder Land की बिल्ली की तरह स्वयं तो 'फेड आउट' हो जाती है लेकिन अपनी अमर मुस्कुराहट पीछे छोड़ जाती है।

अमरीका के लोकप्रिय शायर रॉबर्ट फ्रास्ट से किसी ने पूछा, वो कौन सी घटना है जिसका प्रभाव आपके जीवन पर सर्वाधिक पड़ा?' फ्रास्ट ने उत्तर दिया 'जब मैं बारह साल का था तो एक मोची के यहाँ काम करता था और दिन भर मुँह में कीलें दबाए फिरता था। आज मैं जो कुछ भी हूँ जिस जगह पर भी हूँ उसका एक मात्र कारण यह है कि साँस लेते समय मैंने वो कीलें और कोके नहीं निगले।' अगर आपको भी सच जानना है तो मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि 1974 में मेरे यूनाइटिड बैंक लिमिटिड का प्रेसीडेंट होने का मात्र कारण यह है कि जिस अंग्रेज जनरल मैनेजर ने 1950 में इंटरव्यू करके मुझे बैंक में नौकरी पर रखा वो शराब के नशे में धुत्त था। इस घटना से देशना मिलती है कि शराब पीने के परिणाम कितनी दूर-देर तक आते हैं।

प्रसिद्ध व्यंग्य लेखक जार्ज मैकश का विचार है कि पश्चिम में हास्य मर चुका है, अब जीवित न होगा, लेकिन पश्चिम ही पर क्यों ऐसा लगता है मनुष्य में अपने आप पर हँसने का साहस नहीं रहा। दूसरों पर हँसने में उसे डर लगता है।

न कोई खंदा रहा और न कोई खंदानवाज

इंग्लैंड में लार्ड रौचेस्टर नाम का एक बांका हुआ है। शराबी, शायर, जुमलेबाज, ऐबदार, हजलगो (गंदी शायरी करने वाला) बदनाम ही नहीं सचमुच बुरा, हरामीपन में अद्‌वितीय। उसके जुमलों से लोग डरते थे। मरने को हुआ तो बेटे को बुला कर कहा 'बेटे! मेरी एक मात्र वसीयत यह है कि हास्य से दूर रहना।' मालूम होता है कि उसके हास्य में एक नहीं कई आँच की कमी रह गई वरना यह नौबत न आती। जहाँ सच बोल कर सुकरात को विष पीना पड़ता है वहाँ चतुर व्यंग्यकार अलिफ लैला के शहरजाद की तरह एक हजार एक कहानियाँ सुना कर अपनी जान और सम्मान साफ बचा ले जाता है। मैंने गम्भीर अंतर्राष्ट्रीय, समाजी, राजनैतिक और आर्थिक प्रश्नों से जान छुड़ाने के लिए एक वाक्य गढ़ा था। 'संसार में जहाँ कहीं, जो कुछ हो रहा है, वो हमारी अनुमति के बिना हो रहा है।' व्यंग्यकार को जो कुछ कहना होता है वो हँसी-हँसी में इस तरह कह जाता है कि सुनने वाले को भी बहुत बाद में खबर होती है। मैंने कभी किसी ठुके हुए मौलवी और व्यंग्यकार को लिखने-बोलने के कारण जेल में जाते नहीं देखा। व्यंग्य की मीठी मार भी चंचल आँख, रहस्यमई सुंदरी और दिलेर के वार की तरह कभी खाली नहीं जाती -

नैन छुपाए ना छुपें , पट घूँट की ओट
चतुर मार और सुरमा , करें लाख में चोट

हमारे समय के सबसे बड़े व्यंग्यकार इब्ने-इंशा के बारे में कहीं निवेदन कर चुका हूँ कि बिच्छू का काटा रोता और साँप का काटा सोता है। इंशाजी का काटा सोते में मुस्कुराता भी है। जिस व्यंग्यकार का लिखा इस कसौटी पर न उतरे उसे यूनिवर्सिटी के कोर्स में सम्मिलित कर देना चाहिए।

यहाँ एक छोटे से संसार की झलक दिखाना उद्देश्य है। मौलाना हाली के अनुसार -

जानवर , आदमी , फरिश्ता , खुदा
आदमी की हैं सैकड़ों किस्में

उद्देश्य उपदेश देना नहीं, न अपने सीने में ऐसी कोई अमानत या आग दिखाना कि अमीर खुसरो की तरह यह कह सकें कि 'इस हड्डियों के संदूक में अनगिनत आसमानी उपहार ऐसे थे जो मैंने इस दिन के लिए बचा रखे थे।' अपने प्रस्तुतिकरण के माध्यम... हास्य... के संदर्भ में मैं किसी अभिमान से ग्रस्त नहीं। ठहाकों से किलों की दीवारें नहीं टूटतीं। चटनी और अचार लाख चटपटे सही लेकिन उनसे भूखे का पेट नहीं भरता। न मृग मारीचिका से यात्री की प्यास बुझती है। हाँ मरुस्थल का तीखापन कम लगने लगता है। जीवन के उतार-चढ़ाव, ऊंच-नीच, सुख-दुख की मंजिलों से गुजर जाना बड़े हौसले की बात है।

बारे - अलम उठाया , रंगे - निशात देखा
आए नहीं हैं यूँ ही अन्दाज बेहिसी के

मगर यह नहीं भूलना चाहिए कि खुश रहने का एक पड़ाव बेहिसी (असम्पृक्तता) से पहले आता है और एक उसके बाद आता है।

सभी की मुस्कुराहटें और हँसी एक सी नहीं हुआ करती। फालस्टाफ अट्टहास करता है तो रोम-रोम मुस्कुरा उठता है। कोई बड़ा जब गिरता है तो छोटे ठठ्ठे लगाते हैं। समाज जब अल्लाह की धरती पर इतरा-इतरा कर चलने लगते हैं तो धरती मुस्कुराहट से फट जाती है और सभ्यताएँ इसमें समा जाती हैं। दूध पीते बच्चे खुश होते हैं तो

किलकारियाँ मारके हुमक कर माँ की गोद में चले जाते हैं। उधर मोनालिजा है कि सदियों से मुस्कुराए चली जा रही है और एक मुस्कुराहट वो भी है जो निर्वाण के बाद बुद्ध के होठों को हल्का सा तिर्यक करके उसकी नजरें झुका देती है। ये सब सही लेकिन मुस्कान से परे वो विपरीतता और व्यंग्य जो सोच-सच्चाई और बुद्धिमत्ता से खाली है, मुँह फाड़ने, फक्कड़पन और ठिठोल से अधिक की सत्ता नहीं रखता। धन, धरती, स्त्री और भाषा का संसार एक रस और एक दृष्टि का संसार है, मगर तितली की सैकड़ों आँखें होती है और वो उन सब की सामूहिक मदद से देखती है। व्यंग्यकार भी अपने पूरे अस्तित्व से सब कुछ देखता, सुनता, सहता और सहारता चला जाता है। फिर वातावरण में अपने सारे रंग बिखेर कर किसी नए क्षितिज, किसी और रंगीन दिशा की खोज में खो जाता है।

पहली किताब 'चराग तले' पर पहला दृष्टिपात स्वर्गीय जनाब शाहिद अहमद देहलवी ने किया था। (दूसरी दृष्टि घर के हमसफर ने डाली थी अतः किताब भी सूख कर आधी रह गई)। दूसरी किताब 'मेरे मुँह में खाक' पर जनाब शानुल-हक हक्की ने दृष्टिपात किया। शाहिद अहमद देहलवी की तरह वो भी, वां के नहीं पे वां के निकाले हुए हैं। सोचा तीसरी किताब का स्वाद बदलने के लिए इस बार क्यों न किसी लखनवी भाषाविद से सुधार के बहाने छेड़-छाड़ का प्रारंभ किया जाए। (यूँ तो मैं भी ठेठ भाषाविद हूँ बशर्ते भाषा से अभिप्राय मारवाड़ी भाषा हो) इसलिए पुराने कृपालु जनाब मुहम्मद अब्दुल जमील साहब से संपर्क किया जिनके परदादा मौलाना फजल हक खैराबादी, गालिब का दीवान व्यवस्थित करते समय बीसियों शेर अलग कर प्रोफेसरों और रिसर्च स्कालरों के स्थाई काम की व्यवस्था कर गए। जमील साहब ने मेरी भाषा और जवानी की भी छान-फटक कर डाली और उन्हें कथनानुसार दागदार और बेदाग पा कर अपनी मायूसी जताई। बोले कि क्रम अगर उल्टा होता तो क्या बात थी।

पांडुलिपि के कुछ हिस्से पढ़ कर बोले 'ऐसा लगता है कि आपने कई बातें स्पष्ट नहीं की हैं।'

'जैसे?'

'जैसे यही कि कब और कहाँ पैदा हुए?'

'पहली मुहर्रम। सतवाँसा, टोंक (राजस्थान) में जहाँ के खरबूजे और चक्कूबाज प्रसिद्ध हैं। खानदान, दिनांक और जन्म स्थान के चयन में मेरा वोट नहीं लिया गया था। पकड़े जाते हैं बुजुर्गों के किए पर नाहक। पैतृक स्थान जयपुर। शिक्षा जयपुर, आगरा और अलीगढ़ में हुई और जीवन का अधिकांश समय कराची में बीता। शहरों के इंतख्वाब ने रुसवा किया मुझे।'

जीवन में वो पहली कौन सी एक्ट्रेस थी जिस पर आप जी-जान से फिदा हुए?'

'आप इस बहाने मेरी जन्मतिथि जानना चाहते हैं?

'नशे और आत्मकथा में भी जो न खुले उससे डरना चाहिए, कुछ तो खुलिए। प्रिय रंग? प्रिय सुगंध, प्रिय सौंदर्य आदि आदि...?'

(1) 'सभी रंग पसंद हैं सौ के नोटों के रंग बदलते रहते हैं।'

(2) 'तीखी महक नहीं भाती। रात की रानियाँ, दोनों प्रकार की... दूर किसी और के आँगन में ही से महक देती अच्छी लगती हैं।'

(3) यहाँ तक सौंदर्य का प्रश्न है... आदि-आदि पसंद है।'

'अपना नया फोटो डालने में संकोच था तो हुलिया ही बयान कर देते।'

'शीशा देखता हूँ तो अल्लाह की कुदरत पर मेरा भरोसा डगमगा जाता है।'

'खानदान और बचपन के हालात पर आपने प्रकाश नहीं डाला, हद यह कि बैंक तक का नाम नहीं बताया।'

'एक आँखों-देखी घटना आपको सुनाता हूँ। इसी शताब्दी की तीसरी दहाई में एक औरत जो उर्दू मामूली पढ़ी लिखी थीं, ने उस समय का एक चर्चित नॉवेल 'शौकत आरा बेगम पढ़ा। जिसकी हीरोइन का नाम शौकत आरा और सहयोगी पात्र का नाम फिरदौस था। उनके जब बेटियाँ हुईं तो दोनों के यही नाम रखे गए। एक पात्र का नाम इदरीस और दूसरे सदा-दुखी का नाम अच्छन था। ये दोनों उन्होंने अपने छोटे बेटे को नाम और उपनाम के रूप में दे दिए। बच्चे कुल चार उपलब्ध थे जबकि नॉविल में, हीरो को छोड़ कर अभी एक और प्रमुख चरित्र प्यारे मियाँ नाम का विलेन शेष रह गया था। अतः इन दोनों नामों और दोनों दोहरे रोतों का बोझ बड़े बेटे को ही उठाना पड़ा। जिसका नाम हीरो के नाम पर मुश्ताक अहमद रखा गया। यह साधारण औरत मेरी माँ थीं। नॉविल की पूरी कास्ट शौकत आरा जिसका स्वर्गवास हो गया था, खुदा के करम से जीवित है। माँ की बड़ी इच्छा थी मैं डॉक्टर बनूँ और अरब जा कर बद्दुओं का मुफ्त इलाज करूँ, चूँकि नॉविल के हीरो ने यही किया था। मौला का बड़ा करम है कि डॉक्टर न बन सका वरना इतना बुरा स्वास्थ्य रखने वाले डॉक्टर के पास कौन फटकता। सारी उम्र कान में स्टेथेस्कोप लगाए अपने ही दिल की धड़कनें सुनते बीतती। अलबत्ता इधर दो साल से मुझे भी सऊदी अरब, बहरीन, कतर, अम्मान और अन्य अरब देशों की धूल तो नहीं रेत छानने का और शेखों की सेवा करने का सौभाग्य मिलता रहा है। नॉविल के शेष प्लाट का बेचैनी से प्रतीक्षा कर रहा हूँ। जो लोग कहते हैं कि उर्दू साहित्य का जीवन पर प्रभाव नहीं पड़ता वो जरा डबडबाई आँखों से विनम्र (लेखक) को देखें। यह है कच्चा चिट्ठा। कहिए जमील साहब अब तो ठंडक-पड़ी।'

जिस एकाग्रता और दृष्टिहीनता से जमीन साहब ने पांडुलिपि पे कृपा की वो उनकी विशेष अनुकंपा और भाषाविद होने का हँसता-मुस्कुराता प्रमाण है। उदाहरण के लिए मैंने पहले चैप्टर में लिखा है कि बच्चे सर्दी से अपनी बत्तीसी बजाते हैं। बत्तीसी को काटते हुए बोले 'ये अपने क्या लिख दिया?' डरते-डरते पूछा, 'क्या लखनऊ में कुछ और बजाते हैं?' कृपा हुई 'बच्चे, के तो अट्ठाईस दाँत होते हैं। बत्तीसी का तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता।' निवेदन किया 'अगर यह लिख दूँ कि बच्चे अपनी अट्ठाईसी बजाते हैं तो लोग न जाने क्या समझ बैठेंगे और अगर किसी बच्चे की आधी दाढ़ निकल आई तो क्या साढ़े अट्ठाईसी बजाना लिखूँ।' चश्मा उतार कर मुस्कुराती हुई आँखें दिखाते हुए बोले, 'और आपने यहाँ हरामजदगी लिखा है। हरमजदगी होना चाहिए, दोनों में जमीन-आसमान का अंतर है। एक जन्मजात गुण है दूसरा अपनी भुजाओं की ताकत से पैदा करना पड़ता है।'

एक दिन अरुचि से प्रश्न पूछा 'रोकन से आपका क्या अभिप्राय है। मैंने तो यह वाहियात शब्द आज तक नहीं सुना। दिल्ली का होगा या मारवाड़ी ढेला?' निवेदन किया, 'वो चीज जो सौदा खरीदने के बाद दुकानदार ऊपर से मुफ्त दे दे।' बोले, 'लखनऊ में इसे घाता कहते हैं।' निवेदन किया, 'मैंने तो यह वाहियात शब्द आज तक नहीं सुना।' आदेश हुआ, 'घर जा कर अपनी भाषाविद बीबी से पूछ लीजिएगा। वो जो भी निर्णय करेंगी मुझे स्वीकार होगा।' मैं शपथ ले कर कह सकता हूँ कि जमील साहब ने उन्हें पंच केवल इस आधार पर बनाया कि उन्हें सौ

प्रतिशत विश्वास था कि वो हर स्थिति में निर्णय मेरे विपरीत करेंगी। वरना वो अपनी बेगम को भी पंच बना सकते थे। खैर मैंने शाम को बेगम से पूछा, 'तुमने शब्द रोकन सुना है?' बोलीं, 'हाँ! हाँ! हजार बार!' जी खुश हो गया। कुछ देर बाद प्रमाण को और विश्वसनीय बनाने के लिए पूछा, 'तुमने यह शब्द कहाँ सुना?' बोलीं, 'तुम्हीं को बोलते सुना है।'

घर के बाहर रिसर्च से भी पता चला कि दिल्ली में खूब बोला जाता है। जमील साहब को इस खोज से सूचित किया और प्रमाण में स्वयं को प्रस्तुत किया। उन्हें और भड़काने के लिए जनाब ताबिश देहलवी और स्व. हजरत जुल्फिकार अली बुखारी का चटाख-पटाख डायलॉग जो उन्हीं दिनों कहीं छपा था दोहरा दिया। ताबिश साहब के मुँह से कहीं निकल गया 'लखनऊ वालों ने पूरे साहित्य के इतिहास में अच्छा शेर नहीं कहा। एक ले-दे के आतिश हैं उन पर भी देहलवियत की छाप है और वैसे भी लखनऊ की शायरी में सिवाय चोंचले और नखरे के होता क्या है?' बुखारी साहब तुनक कर बोले, 'और दाग देहलवी के यहाँ क्या है?' तपिश साहब ने विस्तार किया, 'जी हाँ! दाग देहलवी के यहाँ भी चोंचले और नखरे हैं लेकिन रंडीबाज हैं रंडी के नहीं।'

चेहरा पहले तो नाराजगी की अधिकता से तमतमाया फिर खिलावट के साथ बोले, 'ताबिश देहलवी की बातें ही बातें हैं। बहुत शरीफ और पवित्र व्यक्ति हैं। उन्होंने तो रंडी का फोटो भी नहीं देखा होगा। रहे आप, तो आपने रंडीबाज भी नहीं देखे। यूँ भी मेरा मानना है कि आपको ढंग की सोहबत कभी नहीं मिली। निवेदन किया 'गुरुवर अगर हमें गुमराह होने की महान योग्यता न होती तो आप तक कैसे पहुँचते?'

दोनों अपने-अपने भाषाई मोर्चों पर डटे हुए बल्कि धंसे हुए थे। अंत में समझौता इस पर हुआ कि भविष्य में टकसाली पंजाबी शब्द झोंगा प्रयोग होगा जो श्रेष्ठ व्यंग्यकार और बांके यार कर्नल मुहम्मद खाँ का बढ़ाया शब्द है।

और तो और समर्पण भी उनकी मनुष्य की पारखी दृष्टि से न बच सका। बोले 'सच-सच बताइए। इन दोनों में से मिर्जा अब्दुलवुदूद बेग कौन है? और हाँ यह तो आपकी आत्मकथा है। हर चंद आपको यह सम्मान मिला है कि आपने अपनी इज्जत बिना आशिकी किए खोई है, लेकिन अब भी कुछ नहीं गया। शायर के अनुसार -

यूसुफी गर नहीं मुमकिन तो जुलेखाई कर

नई नस्ल के पढ़ने वाले, अपने बड़ों की नालायकी और पथभ्रष्टता की कहानियाँ पढ़ कर गर्व से फूले नहीं समाते। आप भी फड़कते हुए समर्पण के जंग लगे हुए परदे में किसी माशूक को बिठा देते तो आलोचकों के हाथ चिथड़े होने से पहले ही किताब तकियों के नीचे पहुँच जाती और दस दिन के अंदर-अंदर दूसरा ऐडीशन (चटपटा और जायकेदार) निकालना पड़ता। उदाहरण के लिए -

..... के नाम

जिसने मानवीय दुर्बलता

के एक पल को

स्थायित्व प्रदान किया

निवेदन किया। 'पहले तो बिंदुओं (.....) के नाम केवल ज्योमेट्री की किताब की जा सकती है। दूसरे एक पल तो मानवीय दुर्बलता के लिए तो बहुत ही कम है। एक घंटा नहीं तो कम से कम एक मिनट तो कर दीजिए, प्लीज।' अपनी विशिष्ट शैली में सुनी अनसुनी करते हुए बोले, 'जगह-बेजगह आपकी आँतरिक सोच को दृष्टिगत करते हुए 'सोने के दाँत वाली लड़की' कैसा रहेगा? आपके हीरो गालिब ने भी तो बड़े उतरौनेपन से जुर्म स्वीकार किया कि भाई मुगल बच्चे भी गजब होते हैं। जिस पर मरते हैं उसको मार रखते हैं। मैं भी मुगल बच्चा हूँ। उम्र में एक बड़ी पेशेवर डोमनी को मैंने भी मार रखा है।' विरोध किया, 'मगर मैं तो मुगल नहीं हूँ।' बोले, 'कोई बात नहीं बच्चे तो अभी तक हैं।' इसके बाद बच्चा और बच्चे, सरगोधा और सरगोधे वज़्आ और वज़्ए के इमला/इमले पर ऐसी घमासान की बहसा-बहसी हुई कि मुँह लगाई डोमनी कच-कच की जगह से ताल-बेताल गाती, ढोलक बजाती निकल गई।

किताबत (उर्दू में पहले हर पन्ना हाथ से लिखा जाता था फिर प्रिंट होता था) का पड़ाव आया तो पहले लाहौर के एक बांके, शिष्ट और साधुस्वभाव कातिब (किताबत करने वाले) से संपर्क किया। दो-तीन बार निवेदन किया तो चुप साध ली। चौथी बार कहा, 'धन्यवाद, पंद्रह रुपए पेज मेहताने से कोई अंतर नहीं पड़ता। मैं केवल उपयोगी और मजहबी रचनाओं की किताबत करता हूँ।' उनके संकेत पर मैंने 'चराग तले की पांडुलिपि एक साहब के हाथों उनकी सेवा में भेज दी और उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा। डर-डर के की गई मगर उम्मीद की गई। दो दिन बाद जहाँ-तहाँ से सूँघ कर उन्हीं साहब द्वारा कहला भेजा कि 'रोजाना आधी रात की नमाज के बाद कुरआन लिखता हूँ। नहीं चाहता कि सारा पुण्य उनकी किताब की भेंट चढ़ जाए। मैंने अनुपयोगी किताबत छोड़ दी है। हाँ कभी-कभार किसी की फर्माइश पर कब्र की तख्ती पर लिख देता हूँ।' अब ले दे कर अपनी कब्र की तख्ती रह गई थी जो मरणदिवस डाले बिना अधूरी-अधूरी मालूम देती है उन साहब से जो संदेशवाहक का काम कर रहे थे, मैंने कहा, यह तो हुआ सो हुआ। जरा उनसे इतना पूछिएगा कि जब रोक की यह स्थिति है तो उन्होंने दीवाने-गालिब की किताबत क्या समझ कर की। उन्होंने खड़े-खड़े वहीं विवाद-निबटा दिया। बोले कि शायरी की बात और है। शेर में जिस बात पर हजारों आदमी उछल-उछल कर दाद देते हैं, वही बाद गद्य में कह दी जाए तो पुलिस तो बाद की बात है, घर वाले ही सर फाड़ डालें।

पाप की जिस गठरी ने उस बुजुर्ग को बोझिल किया उसे एक नौजवान प्रिय मुहम्मद शफीक ने खुशी-खुशी उठा लिया। लाहौर में दो पंक्ति दैनिक की गति से किताब शुरू हुई। कोई पंद्रह-बीस पन्ने पूरे हुए होंगे कि मेरा लाहौर जाना हुआ। मैंने कहा, 'अगर आप इसी स्पीड से किताबत करते रहे तो यह किताब तो पाँच-छह साल में समाप्त हो जाएगी। इसके बाद आप क्या करेंगे? लिपि अलबत्ता अच्छी हैं लेकिन जगह-जगह, उथल-पुथल और टेढ़ पाई जाती है। शब्द उखड़े-उखड़े लगते हैं।' बोले, 'लिखते में अगर हँसी आ जाए तो कलम में कंपन पैदा हो जाता है। जो हिस्से सामान्य हैं वो बहुत अच्छे लिखे गए हैं। बहुत काफी हैं। निस्संकोच किसी को भी दिखा लें।' मैंने कहा, 'बेटे! अगर ऐसा ही है तो पहले पांडुलिपि पढ़ कर हँस लिया करो। फिर एकाग्रता के साथ हाथ जमा कर किताबत किया करो।' कहने लगे, 'जनाब! मेहनताना केवल लिखने का तय हुआ है। व्यस्त आदमी हूँ। मेरी शादी हुए अभी एक महीना भी नहीं हुआ।' अतः निवेदन है कि पाठकों को जहाँ-जहाँ उन की किताबत में उछल-कूद दिखाई पड़े उसे शादी का कारनामा समझ कर क्षमा करें।

पाकिस्तान के जाने-माने कार्टूनिस्ट भाई अजीज भी लंबे समय से व्यंग्य और पेट के उन्हीं रोगों से ग्रसित हैं और मेरे दवा शरीक भाई बने हुए हैं। आभारी हूँ कि उन्होंने 'फैनी डार्लिंग को ध्यान से पढ़ कर दो कार्टूनों से सजाया।

भेंट हुई तो देर तक अपना पेट पकड़ कर बल्कि कहना चाहिए अचकन पकड़ कर उसमें हारमोनियम की तरह धौंकनी की तरह हवा भरते और निकालते हुए हँसी से लोट-पोट हो गए। उन्हें यूँ प्रशंसा करते देखा तो मैं भी झूठी विनम्रता और संकोच को ताक पर रख कर दाद लेने के लिए खूब हँसा। बोला, 'चलिए, मेहनत ठिकाने लगी। आपने पसंद किया' दोबारा अचकन धौंकते हुए बोले, 'भाई जान! बड़ा मजा आया। कार्टून गजब के बने हैं।' अबकी बार दोनों ने अपनी-अपनी कारीगरी पर मुँह मोड़ कर अपनी-अपनी धौंकनी धौंकी।

मुश्ताक अहमद यूसुफी
27 जनवरी 1976

>>आगे>>

शीर्ष पर जाएँ

धन यात्रा

मुश्ताक़ अहमद यूसुफ़ी

अनुवाद - तुफ़ैल चतुर्वेदी

तब देख बहारें जाड़े की : कराची (समुद्रतटीय नगर) में सर्दी उतनी ही पड़ती है जितनी मरी (पाकिस्तान का हिल स्टेशन) में गर्मी। इससे मरी के निवासियों का दिल दुखाना नहीं, बल्कि नगरों की दुल्हन कराची का दिल बढ़ाना उद्देश्य है। कभी-कभार सुंदर शहर का तापमान शरीर के नार्मल तापमान से यानी 98.4 से दो-तीन डिग्री नीचे फिसल जाए तो शहर की सुंदरियाँ लिहाफ ओढ़कर एयरकंडीशनर तेज कर देती हैं। आत्मलीन सौंदर्य जब 43 नंबर में सामने वाली सामग्री को 34 नंबर के स्वेटर में प्रकट करके शीशा देखता है तो शर्म की लाली गालों में दौड़ जाती है जिसे जाड़े के मौसम का असर माना जाता है और इसे कराची के मौसम विभाग की भाषा में कोल्ड वेव कहते हैं। यह खूबी सिर्फ कराची के पल-पल बदलने वाले मौसम में देखी कि घर से जो भी कपड़े पहन कर निकलो, दो घंटे बाद गलत मालूम होते हैं। लोग जब अखबार में लाहौर और रावलपिंडी की कठोर सर्दी की खबरें पढ़ते हैं तो उससे बचाव के लिए बालू की भुनी मूँगफली और गजक के फुँके मारते हैं। उनके बच्चे भी उन्हीं पर पड़े हैं। उत्तर पश्मिी हवाओं के बचने के लिए ऊनी कंटोप पहनकर आइस्क्रीम खाते हैं और बड़ों के सामने बत्तीसी बजाते हैं। नया आने वाला हैरान होता है कि अगर ये जाड़ा है तो अल्लाह जाने गर्मी कैसी होगी।

बीस साल सर्दी-गर्मी झेलने के बाद हमें अब मालूम हुआ कि कराची के जाड़े और गर्मी में तो इतना स्पष्ट फर्क है कि बच्चा भी बता सकता है। 90 डिग्री टैम्प्रेचर अगर मई में हो तो यह गर्मी के मौसम का प्रतीक है, अगर दिसंबर में हो तो जाहिर है जाड़ा पड़ रहा है। अलबत्ता जुलाई में 90 डिग्री टैम्प्रेचर हो और शाम को गरज-चमक के साथ बीबी बरस पड़े तो बरसात का मौसम कहलाता है। शायद... क्या निश्चित रूप से ऐसे ही किसी कम गर्म गुनगुने कराचवी जाड़े से उकता कर नजीर अकबराबादी ने तमन्ना की थी।

हर चार तरफ से सर्दी हो और सहन खुला हो कोठे का
और तन में नीमा शबनम का हो जिसमें खस का इत्र लगा
छिड़काव हुआ हो पानी का और खूब पलंग भी हो भीगा
हाथों में पियाला शर्बत का हो आगे इक फर्राश खड़ा
फर्राश भी पँखा झलता हो तब देख बहारें जाड़े की

हर चाल साल के बाद दो-तीन दिन के लिए सर्दी का मौसम आ जाए तो कराची वाले इसका इल्जाम कोयटा-विंड पर धरते हैं और कोयटा की सर्दी की तेजी को किसी रूपवती के संक्षिप्त स्वेटर से नापते हैं। कराची की सर्दी

विधवा की जवानी की तरह होती है, हर एक की नजरें पड़ती हैं और वहीं ठिठक बल्कि ठिठुर कर रह जाती हैं। उधर कोयटा में दस्ताने, कंबल, मफलर और समूर के अंबार में से सिर्फ चमकती हुई आँखें देख कर यह फैसला करना नामुमकिन हो जाता है कि उसके पीछे मूँछ है या, 'पंखड़ी इक गुलाब की सी है' तो कोयटा वाले इस घपले का जिम्मेदार कंधारी हवा को ठहराते हैं और जब कंधार में साइबेरिया की बहुत ही कड़ाके की ठंडी हवाओं से पेड़ों पर अनारों के बजाए बर्फ के लड्डू लटकते हैं, ग्वाले गाय के थनों से आइस्क्रीम दोहते हैं और सर्दी से थरथराते हुए इंसान के दिल में खुद को जहन्नुम में दाखिल करने की उत्कट इच्छा होती है तो कंधार वाले कंबल से चिपट कर पड़ौसी देश की ओर क्रोधित हो कर देखते हैं। छोटे देशों के मौसम भी तो अपने नहीं होते। हवाएँ और तूफान भी दूसरे मुल्कों से आते हैं, भूकंप का केंद्र भी सीमा पार होता है।

यह जनवरी 1950 की एक ऐसी ही सुबह का जिक्र है। मौसम का वर्णन हमने इतने विस्तार और बुराई के साथ इसलिए किया कि कराची में हमारी यह पहली सुबह थी। बर्दाश्त करने की हद तक गर्म होने के अलावा यह एक ऐतिहासिक भोर भी थी। सर्दी की इस भोर से बैंकरी के पेशे में हमारे लंबे फ्लर्टेशन का आरंभ हुआ और सुबह उस वक्त नहीं होती जब सूरज निकलता है, सुबह उस वक्त होती है जब आदमी जाग उठे। किसी ने फ्रांस के अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त साहित्यकार फ्रोस्ट से पूछा कि दुनिया के सैन्य इतिहास में किस घटना ने आपको सबसे अधिक प्रभावित किया तो उसने बेहिचक जवाब दिया, 'फौज में मेरी भर्ती ने।'

हमारे फ्लर्टेशन की शुरुआत : कराची में खोखरा से अभी आए हुए हमें 20 घंटे भी नहीं हुए थे। वो सुबह नहीं भूलेगी जब रेलवे लाइन के किनारे एक छोटी सी सफेद तख्ती पर पहले-पहल 'पाकिस्तान' नजर आया तो उसे हाथ से छू-छू कर देखा था फिर मिट्टी उठा कर देखी। अस्सलामुअलैकुम कहते हुए सिंधी ऊँट वाले देखे। हिंदुस्तान के नोट पर पहली बार हुकूमते-पाकिस्तान छपा देखा और फिर राजस्थानी रेगिस्तान में पुरखों की कब्रें, वो बोली जो माँ के दूध के साथ अस्तित्व में रची बसी थी और अपने प्यारों के आँसुओं से भीगे चेहरे अतीत में धुँधलाते चले गए।

मिरी बार क्यों देर इतनी करी : मुनाबाओ के उजाड़ स्टेशन पर दो रातें तारों भरे आसमान के नीचे गुजारने से गला खराब हो गया था और महसूस होता था जैसे गले में कोई बदचलन मेंढक फँस गया है, जरा मुँह खोलते तो टर्राने लगता। मैक्लोड रोड पर बैंक का हैड ऑफिस तलाश करने में कोई परेशानी नहीं हुई। पहले एक छपी हुई परची पर अपना नाम लिख कर जनरल मैनेजर मिस्टर W.G.M. Anderson को भिजवाया। भेंट के उद्देश्य के कॉलम में सरकारी लिख दिया, जिससे हमारा अभिप्राय निजी और नौकरी थी और अंत में बहुत मोटे अक्षरों में प्रेषक....मिस्टर M.A. Asfahani चेयरमैन बैंक। सिफारिश में लिपटी हुई यह धमकी हमारे काम न आई इसलिए कि हमारे बाद आने वाले मुलाकाती, जो हमारे हिसाब से हमसे अधिक अच्छे, सलीके से कपड़े न पहने हुए थे, बारी-बारी मिलने का समय पा कर विदा हो गए और हम सिर झुकाए ही रह गए कि, 'मेरी बार क्यों देर इतनी करी।'

डेढ़-दो घंटे बाद बेंच पर इंतजार का जाम पीते रहने के बाद जी में आई कि लानत भेजो। ऐसी नौकरी से बेरोजगारी भली, देर है अंधेर भी होगा। 'चल खुसरो घर आपने साँझ भई चंहु देस' मिर्जा गालिब भी सौ रुपए मासिक की फारसी शिक्षक की नौकरी के लिए इंटरव्यू के लिए गए थे लेकिन उल्टे फिर आए कि वो उनकी अगवानी के लिए

बाहर नहीं आया। कहारों से कहा बस हो चुकी मुलाकात, पालकी उठाओ, हम भी उस्ताद की देखा-देखी वापिस पालकी में सवार हो रहे थे कि अंदर वाला बोला, होश में आओ

तुम कहाँ के दाना हो
किस हुनर में यकता हो

मिर्जा तो शायर आदमी ठहरे। इसके बाद भी जब कोई नवाब या गर्वनर जनरल बहादुर नया आता तो उसके सम्मान में कविता लिखते और पेंशन के अलावा अलंकृत कपड़ों के साथ मोतियों के माला बराबर वसूल करते रहे। तुम क्या करोगे? तुम तो सिर्फ गद्य में खुशामद करनी जानते हो, फिर वापसी के लिए बाहर पालकी भी तो नहीं है कि तनतनाए हुए बैठकर वापस घर आ गए और रास्तों में कहारों को कांधा तक न बदलने दिया और यहाँ रोजी को लात मार कर चले भी गए तो स्वाभिमान के इस प्रकटन को अमर बनाने के लिए मुहम्मद हुसैन आजाद (सुप्रसिद्ध लेखक) को कहाँ से लाओगे। कहाँ वो स्वाभिमान, कहाँ यह अस्वीकार होने वाले सिजदे। मजे से बैठे हुए अपना कटोरा बजाते रहो। तीन बरस तुम डिप्टी कलक्टर रहे, सच कहो कभी किसी जुरूरतमंद से सीधे मुँह बात की।

कुछ देर बाद चपरासी हमारी बेबसी पे तरस खा कर खुद ही कहने लगा कि अगर नौकरी की सिफारिश ले कर आए हो तो आज मुठभेड़ न करो। सुबह से साले का मग्ज फिरेला है। अक्खा बाटली दारू पियेला है। पाकेट में छोटी बाटली के अंदर मिक्सचर भर के लाया है। दो क्लाक पहले सिग्रेट से तिजोरी खोलना माँगता था। अस्ली रंगत सोलह आना मूली के माफिक है, पन इस टैम जास्ती ब्लड प्रेशर से एक दम चुकंदर लगता पड़ा है, तुमेरा काम आज के दिन नहीं हो सकता।

पौन बजे जब स्टाफ एक-एक करके लंच लिए सरकने लगा और जमादार इस तत्परता से झाड़ू देने लगा कि धूल का एक-एक कण खिंच कर हमारे चेहरे और चश्मे पर बैठ जाए तो जोर से घंटी बजी और बजती ही चली गई। मालूम होता था कोई घंटी पर बैठ गया है। चपरासी ने कोई नोटिस न लिया। कुछ देर पहले सुलगाई हुई पहलवान मार्का बीड़ी के कश लेता रहा फिर उसे छंगलिया में दबा कर अलविदाई दम लगाया और जूते की एड़ी पर रगड़ कर बुझा दिया। बीड़ी का बंडल, चवन्नी और फिल्मी गानों की पतली सी किताब सिर पर रखी और उन पर तुर्की टोपी लगाई। फिर उस सेफ डिपाजिट लॉकर का फुंदना हिला कर कहने लगा, 'लगता पड़ा है अबके तुम्हारी आई है, किस्मत की बदनसीबी को क्या करें' लारा लप्पा लारा लप्पा ला, ला, ला....,

कुछ ने कहा चेहरा तिरा : कमरे में दाखिल होने से पहले हमने अपनी दांई हथेली का पसीना पोंछ कर हाथ मिलाने के लिए तैयार किया। सामने कुर्सी पर निहायत रौबदार अंग्रेज नजर आया। सिर बिल्कुल गंजा, साफ और चिकना। जिस पर पँखे का अक्स इतना साफ था कि उसके ब्लेड गिने जा सकते थे। आज कल के पँखों की तरह इस पँखे का निचला हिस्सा चपटा न था बल्कि उसमें एक चोंच निकली हुई थी जिसका उपयोग हमारे जहन में तो ये आया कि पँखा सिर पर गिरे तो खोपड़ी टुकड़े-टुकड़े न हो बल्कि उसमें एक साफ सूराख हो जाए। बाद में अक्सर खयाल आया कि सिर पर अगर बाल होते तो उसके दबदबे में निश्चित रूप से फर्क आ जाता। मेज के नीचे एक उधड़ा-उधड़ा कैमिल कलर का कालीन बिछा था। रंग वाकई इतना मिल रहा था कि मालूम होता था कि कोई खुजलटा ऊँट खाल फर्श पर बिछाए पड़ा है। भरे-भरे चेहरे पर काला चश्मा, कुछ पढ़ना या पास की चीज देखनी हो तो माथे पर चढ़ा कर उसके नीचे से देखता था, दूर की चीज देखनी हो तो नाक की फुनंग पर रख कर उसके ऊपर

से देखता था। अलबत्ता बंद करके कुछ देर सोचना हो तो ठीक से चश्मा लगा लेता था। बाद में देखा धूप का चश्मा भी नाक पर टिकाए, उसके ऊपर से धूप का मुआयना करते हुए बैंक आता जाता है। आँखें हल्की नीली जो यकीनन कभी रौशन-रौशन रही होंगी। नाक सुतवां, तरशी तरशाई, निचला होंठ राजसी अंदाज से हल्का सा आगे निकला हुआ, सिग्रेट के धुँए से कजलाया हुआ। बाईं भौं बेईमान दुकानदार के तराजू की तरह हमेशा ऊपर चढ़ी हुई, गरजदार आवाज, जिस्म... रंग वही जो अंग्रेजों का होता है। आप ने शायद देखा होगा चीनियों के चेहरे से भावनाएँ पता नहीं लगती बल्कि कभी-कभी तो चेहरा भी पता नहीं लगता लेकिन यह बिल्कुल अलग चेहरा था एक अजीब दर्प और दबदबा था इस चेहरे पर। कमरे में फर्नीचर भरा-भरा नजर आता था। वो सामने हो तो और कोई चीज... उसका अपना जिस्म भी... नजर नहीं आता था।

उसका सरापा है यह मिसरा
चेहरा ही चेहरा पाँव से सिर तक

हमने तैयार किया हुआ हाथ मिलाने के लिए बढ़ाया तो उसने अपना हाथ पतलून की जेब में डाल लिया। कुछ देर बाद केवन ए कॉर्कटिप्स सिग्रेट डिब्बे से निकाल कर उल्टी तरफ से होठों में दबाया। वो बहुत बुरे मूड में था, काँपते हुए हाथ से जियादा काँपते हुए हाथ को थामा तो कप की डुगडुगी सी बजने लगी और चाय छलक कर हमारी दरख्वास्त को रंगीन कर गई। अब एक दियासलाई को अपने बेहतर हाथ में मजबूती से पकड़ कर उस पर डिबिया रगड़ने लगा लेकिन वो किसी तरह जल कर नहीं देती थी। बेकार का संकोच था वरना चाहता तो अपने बल्डप्रेशर पर रगड़ कर आसानी से जला सकता था।

हमारी पैदाइश का सन् : उसने गलत तरफ से सिग्रेट सुलगाया, कॉर्क पर छुन से बुझ गया, उसने छंगुलिया के इशारे से एक कुर्सी पर बैठने के लिए कहा। हम आज्ञा पालन में बैठने ही वाले थे कि अचानक उसी कुर्सी की गहराइयों से एक कुत्ता उठ खड़ा हुआ और हमारे कंधों पर अपने दोनों पंजे रखकर हमारा धूल में अटा मुँह अपनी जबान से साफ किया। माई डॉग इज वेरी फ्रेंडली कुत्ते से परिचय कराने के बाद उसने एक ही साँस में सब कुछ पूछ लिया कैसे हो? कौन हो? क्या हो? और क्यों हो?

सिवाय आखिरी सवाल के हमने सारे सवालों के इत्मीनान और तसल्ली देने वाले जवाब दिए।

'तुम्हें मालूम होना चाहिए कि इस बैंक को मैं चला रहा हूँ', मिस्टर इस्फहानी नहीं, खैर तुमने इकॉनोमिक्स पढ़ी है? उसने कहा।

'नो सर।'

'गणित में बहुत अच्छे थे?'

'नो सर। गणित में हमेशा रियायती नंबरों से पास हुआ, हालाँकि इंटरमीडियेट से लेकर एम.ए. तक फर्स्ट डिवीजन आया।

गणित में फेल होने के अलावा तुम्हारे पास इस पेशे के लिए और क्या क्वालिफिकेशन है?'

'मैंने फिलॉसफी में एम.ए. किया है।'

'हा हा हा, तुम्हारा सोशल बैकग्राउंड क्या है? किस खानदान से तअल्लुक है।'

'मेरा अपने ही खानदान से तअल्लुक है।'

'सच बोलने का शुक्रिया।' जी तो बहुत चाहा लगे हाथों यह भी बात दें कि बुजुर्ग ऐश्वर्यवान न थे, केवल हमें निशानी छोड़ा।

उसके मुँह में से ऐसी लपट आ रही थी जो रुई के उस फाए से आती है जो इंजेक्शन से पहले सूई चुभोने की जगह पर रगड़ा जाता है।

पूछा 'तुम कब और कहाँ डिलीवर हुए थे? हा हा हा!' वो जोर से हँसना। हम जरा चकराए तो कहने लगा, अच्छा यह बताओ जिस सन् में तुम पैदा हुए, उस साल और कौन सी अंतर्राष्ट्रीय दुर्घटना हुई थी?

इंटरव्यू के सिलसिले में एक अरसा पहले हमने जनरल नॉलिज के नामाकूल से नामाकूल सवालों के जवाब रट लिए थे। उदाहरण के लिए क्रिकेट की गेंद का वज्न, मक्खी की टाँगों और बैल के दाँतों की तादाद, नेपोलियन का कद। अगर बैंक से सिर्फ 100 रुपए 7 प्रतिशत सूद पर लिए जाएँ तो वो किस तरह 250 साल में 22,11,02,400 हो जाएँगे? खालिस सोना कितने कैरेट का होता है? बिल्ली की आँतों की लंबाई? कुत्ता जबान बाहर क्यों निकाले रखता है? इंसान मुँह खोलने से क्यों डरता है? शायर अपने उपनाप पर डोई (चमचा) क्यों बनाते हैं? शेक्सपियर के हाँ शादी के कितने महीने बाद बच्चा पैदा हुआ? बाँस पोला क्यों होता है? वगैरा-वगैरा... लेकिन अपनी पैदाइश की अंतर्राष्ट्रीय दुर्घटना की तरफ हमारा ध्यान कभी नहीं गया था। हमारा आधा शरीर उसके मुकाबिल बिल्कुल ठंडा हो गया और हम इंतहाई बेबसी के आलम में झूरने (गर्दन डाल कर आधी बेहोशी के हालत में सोचना) लगे तो उसने हमारी दरख्वास्त में पैदाइश का सन् देख कर खौफनाक लहजे में कहा, 'बाई दि वे, जिस साल तुम पैदा हुए उसी साल मेरे बाप की मौत हुई। बड़ा मनहूस था वो साल।'

इक शहर था आलम में इंतख्वाब : 'रहने वाले कहाँ के हो?' एक बार तो जी में आई कि मीरे-बददिमाग की तरह कह दें।

क्या बूदो - बाद पूछो हो
योरूप के साकिनो

लेकिन यह लखनऊ का मुशायरा नहीं नौकरी का इंटरव्यू था।

'जयपुर... अजमेर के पास है' हमने संकोची ढंग से उस शहर का नाम लिया जो कभी आलम में इंतिखाब (संसार में चर्चित) था।

OH ! YES ! THE PINK CITY? क्या बात है। ब्रिटिश रेजीडेंट ने हाथियों की लड़ाई दिखाई थी। बर्मा में हम दोनों का एक साथ कोई मार्शल हुआ था। मैंने देखा है तुम्हारा जयपुर। सारे शहर में दोनों तरफ हर इमारत का एक सा केसरिया रंग। ऊँचे तुर्रे वाले राजपूती साफे और उनसे भी ऊँची मूँछें, हर दूसरे को सूंड से सलाम करते हुए हाथी।

आस्ट्रेलियाई घोड़ों पर पोलो। कचरे और गंदगी की गुड्सट्रेन जिसे लोकल भैंसे खींच रहे थे। ऐसी रेल मैंने अमृतसर में भी देखी थी जो एक मुहल्ले की गंदगी की दूसरी मुहल्ले में रनिंग नुमाइश करती फिरती थी। भरे बाजार में बिलखते बच्चों के मुँह में छाती देती औरतें। कई लाडले तो इतने बड़े थे कि खड़े-खड़े दूध की नहर निकाल रहे थे। दर्शनी झरोखों से आँख मारती नाचने वाली औरतें। इंद्रधनुषी रंग के अभ्रक से झमाझम करते लहरिए, कंधों से ढलकाए... एक-एक इंच जवानी राजस्थानी रूप, सिंगार और सिफलिस से भरपूर, सलूके में खस का सेंट, बालों में COOKING OIL (चौंक कर) औरत कभी मेरी कमजोरी नहीं रही और वो तो मैं भूल ही गया। जन्मजात पवित्र और उतने ही समय से पूरे नंगे फकीरों की कतार जिनके पैर वगैरा को धो, धो कर औरतें पीती हैं, क्या कहते हैं इनको?

'Fortes Bergrl' की लड़कियाँ और यह साधू कपड़ों की गिनती धर्म विरुद्ध चीजों में करते हैं। और हाँ! मुझे सब याद है। तुम्हारे होम टाउन में हर चौराहे पर पूर्वजों के नाम पर छोड़े हुए पवित्र साँड़ अपने नियत कार्यों को करते फिरते हैं। तुम्हारे सब बुजुर्ग जिंदा हैं या...? प्रेस्टली ने कहीं लिक्खा है कि जयपुर से ज्यादा साफ सड़कें मैंने दुनिया में कहीं नहीं देखीं। कारण यह कि गोबर और लीद जमीन पर गिरने से पहले ही अछूत औरतें कैच ले लेती हैं।

उसने केसरिया पालों की सारी हवा निकाल दी। वतन छोड़े हुए हम, सिर झुकाए, छोड़े हुए देश को परदेसी की आँखों से देखते रहे। 'जो शक्ल नजर आई तस्वीर नजर आई।'

'तुम राजपूत हो?'

'आधा। नाना थे। नौ मुस्लिम राठौर। तोते की चोंच जैसी नाक वाले राठौर?'

'बिल्कुल लाल, तीखी?'

'नहीं मुड़ी हुई।'

मर्दाना खेलों से हमारी दिलचस्पी : आखिर तुम यह पेशा क्यों चाहते हो? कोई उचित कारण? हम काफी नर्वस हो चुके थे। दो तीन बार जोर लगाने के बाद जो आवाज अचानक हमारे मुँह से निकली वो इससे पहले हमने कभी नहीं सुनी थी।

शायद उसे भी तरस आ गया। अबके आसान सवाल किया। 'जवानी, मेरा मतलब है पढ़ाई के जमाने में किन खेलों से दिलचस्पी रही?'

'कैरम और लूडो'

मेरा मतलब मर्दाना खेलों से था।

हमारा यह खाना बिल्कुल खाली था। पाँचवीं क्लास में अलबत्ता सालाना स्पोर्ट्स में हमारा इक्कीसवाँ नंबर आया था, दौड़ में इतने ही लड़कों ने भाग लिया था। कुछ दिन फुटबाल से भी सिर मारा। अंतिम क्षण तक यह फैसला नहीं कर पाते थे कि इस बार फुटबाल पर अपना दायाँ पाँव मारें या बायाँ उचित रहेगा। दूध के दाँत टूटने से पहले ही हम अच्छे भारी और मोटे शीशे का चश्मा लगाने लगे थे। (जो लोग देखने की क्षमता खो बैठे हैं उनकी सूचना के

लिए निवेदन है कि अब कभी हम चश्मा उतार कर शीशा देखते हैं तो खुदा की कसम अपने कान नजर नहीं आते) कई बार चश्मा तोड़ने के बाद अब हम उसे उतार कर निर्भय खेलने लगे थे। खेलते क्या थे, हम हर एक से मेढ़े की तरह टक्करें लेते फिरते थे। विरोधी टीम में हमेशा बड़े पॉपुलर थे। इसलिए कि हमेशा अपनी ही टीम से गेंद छीनते और उन्हीं को फाउल मारते थे। खेल की शुरुआत में टॉस किया जाता। जो कप्तान टॉस हार जाता वो हमें अपनी टीम में शामिल करने के लिए बाध्य होता था। जब तक विरोधी खिलाड़ी ताक कर हमारे पाँव पर जोर से फुटबाल न मारे, वो हमारे किक को तरसती रहती थी, चूँकि सिर हमारी अधखुली बल्कि अधमुंदी आँखों का निकटतम अवयव था, इसलिए हमने सिर से फुटबाल रोकने और गोल करने का अभ्यास और महारत पैदा की। एक दिन हमने तीन फिट उछल कर 'हैड किया' तो जिस गोल चीज से हमने आँख बंद करके अपनी पूरी ताकत से टक्कर ली वो दैत्याकार जसवंत सिंह चौहान का मुंडा हुआ सिर निकला। वो शाम को भांग की ठंडाई पी कर फुटबाल खेलता था। हमारी नाक का बांसा (हड्डी) और दिल हमेशा के लिए टूट गया। हमने चश्मा उतार कर मर्दाना खेल से अपने पुराने संबंधों का सुबूत एंडरसन को दिखाया। नाक को झुकी और टूटी देखकर बहुत हँसा। कहने लगा तुम्हारा एक कान भी टेढ़ा लगा हुआ है।

'और तुम Rimless Glasses क्यों लगाते हो? तुम्हारी सूरत सर स्टीफर्ड क्रिप्स से मिलती है।'

'जर्रानवाजी का शुक्रिया, हमने खुश होकर कहा।'

'मुझे उस बास्टर्ड की सूरत से नफरत है।'

तो फिर अब क्या जगह की कैद : हम अभी इस चोट को सहला भी न पाए थे कि सवाल पूछा 'कुंवारे हो?'

'नो सर'

'कितनी बीबियाँ हैं' उसने सवाल करके दोनों होंठ भींच लिए।

'एक'

'मुझे तो चार पर भी एतराज नहीं। लेकिन चार बीबियाँ में परेशानी यह है कि चार बार तलाक देनी पड़ती है।' भुलावा दे कर फिर वही सवाल दोहराया 'सिफारिश अपनी जगह, लेकिन बैंक में क्यों नौकरी करना चाहते हो? बैंकर के क्या कर्तव्य, जिम्मेदारियाँ होती हैं।'

यह सुनते ही हमारे हाथों से परंपरागत तोते दुबारा उड़ गए और ऐसे उड़े कि वापस नहीं लौटे। हम फिर झूरने लगे। उचित कारण के बजाए लतीफे याद आने लगे लेकिन ये मौका उसके दामन को दिल्लगी से खींचने का नहीं था। हमने तब तक किसी बैंक को अंदर से नहीं देखा था। अलबत्ता इतना मालूम था कि अगर कोई शख्स यह साबित कर दे कि उसके पास इतनी जायदाद और सम्पत्ति है कि कर्ज की बिल्कुल जुरूरत नहीं तो बैंक उसे कर्ज देने पर राजी हो जाता है।

मार्क ट्वेन का यह वाक्य कहीं पढ़ा था कि बैंकर अच्छे वक्तों का बेहतरीन साथी होता है। मौसम अच्छा हो तो जबरदस्ती अपनी छतरी हाथ में थमा देता है लेकिन जैसे ही छींटे पड़ने लगें तो कहता है लाओ मेरी छतरी, हमें तो

बस इतना बताया गया था कि बैंकर धड़ल्ले से ब्याज लेते हैं, ब्याज देते हैं, ब्याज का हिसाब रखते हैं और तीनों इस्लाम के हिसाब से हराम हैं।

रहा बिजनेसमैन से परिचय सो हमारा परिचय-क्षेत्र केवल एक काइयाँ मारवाड़ी सेठ पर निर्भर था जो रुपया अपनी तिजोरी में रखता था और ब्ल्यू फिल्में बैंक के लॉकर में। जहाँ तक बैंकिंग के बारे में पुस्तकीय ज्ञान की बात है वो इस जानकारी तक सीमित थीं कि T.S. Eliet ने जब Waste-land लिखी तो वो लाइड्स बैंक में क्लर्क था और इस पेशे से उसका पिंड छुड़ाने के लिए अजरा पाउंड ने चंदे का एक राष्ट्रीय अभियान चलाया था जिसमें केवल 30 पौंड जमा हुए।

इसी तरह प्रसिद्ध हास्य लेखक जारोस्लाव हसलक भी एक बैंक में नौकर हो गया था। वहाँ जो कुछ उसने देखा, उससे इतना असर लिया कि भरे-भतोले घर पर झाड़ू फेर कर हमेशा-हमेशा के लिए घुमंतू बन गया और अगर ओ. हैनरी बैंक में गबन न करता तो दुनिया एक महान कथा-लेखक से वंचित रह जाती। उसने बैंक के सूखे जोड़-घटा में कहानी का रंग भर दिया। चुनांचे बैंक दिवाले में चला गया और उसे घपले के इल्जाम में पाँच साल की सजा हुई।

जेल ही में उसे अपनी पहली कहानी लिखी और नाम बदल कर विलियम सिडनी पोर्टर से ओ. हैनरी बन गया। ओ. हैनरी दरअस्ल जेल के संतरी का नाम था। उस जमाने में हमें अपनी जनरल नॉलिज का बड़ा घमंड था लेकिन इस कुढब सवाल से ज्ञान का सारा नशा हिरन हो गया।

एक कम पाँच और एक ऊपर तीन का फर्क : बैंकरी के भेद और संकेत तो क्या, हमने तो जिंदगी में किसी मुसलमान बैंकर का नाम भी नहीं सुना था। भारत के बँटवारे से पहले इस देश में बड़े ही नहीं छोटे ओहदों पर भी अंग्रेज और हिंदू ही होते थे। अलबत्ता मुसलमानों पर अपनी जमा जत्था सेविंग बैंक एकाउंट में जमा कराने पर कोई पाबंदी नहीं थी।

और बेचारे मुसलमाँ को फकत वादा - ए - सूद : लेकिन हम धोके में आने वाले नहीं। बुजुर्गों ने सदियों पहले बचत को हिंदुओं की रीत समझकर त्याग दिया था। सौ पुश्त से जिन कबीलों का पेशा-ए-आबा सिपहगरी, (पूर्वजों का पेशा सिपाहीगिरी-गालिब की पंक्ति है) यानी पहले दुश्मन बनाना फिर उन्हें ढूँढ-ढूँढ कर मौत के घाट उतारना या वो इस पर राजी न हों तो खुद उतर जाना रहा हो वो व्यवसाय को पतली दाल खाने वाले बनियों का अधिकार समझ कर उससे घृणा करते तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

महाबली अकबर ने भी आखिरकार राजस्व का चार्ज राजा टोडरमल को दिया और फैजी को गीता और महाभारत के फारसी अनुवाद में जोत दिया। बीरबल को अलबत्ता इन पंक्तियों के रचयिता का काम सौंपा गया कि खबरदार मुँह से कोई गंभीर बात निकाली तो जबान गुद्दी से खींच ली जाएगी। एक रीत सी पड़ गई थी कि मुसलमान अमीरों और रईसों की आमदनी का हिसाब तो हिंदू मुनीम रखते थे और खर्च का हिसाब अदालत को खुद कुर्की के वक्त बनाना पड़ता था।

मुसलमान दो और दो को चार नहीं बल्कि एक कम पाँच कहता है जबकि हिंदू एक ऊपर तीन कहता है। राबर्ट क्लाइव का एक समकालीन कहता है कि रुपया बचा कर रखने के मुआमले में मुसलमान छलनी होता है और हिंदू स्पंज।

व्यापार को शान के खिलाफ समझने का एक नतीजा यह निकला कि जब तैमूर के खानदान पर परेशानी आई तो उसका आखिरी चिराग महाजन से कर्ज ले कर फौज की तनख्वाहें चुकाता था और अपनी गजलों का संशोधन करने वाले नज्मुदौला दबीरुल-मुल्क मिर्जा असदुल्लाह खाँ 'गालिब' को चाँदी के थाल में जरी के कपड़े से ढंका हुआ सेम के बीजों का तुहफा भेजता। विभाजन से पहले के तीन-चार सौ बरस में खास कर भारतीय उपमहाद्वीप के मुसलमानों ने व्यापार को अपनी शान के खिलाफ समझा। इसमें आशंका थी कि कहीं लापरवाही या भूल-चूक से लाभ न हो जाए। चमड़े और खालों से संबंधित सारा व्यापार अलबत्ता मुसलमानों के हाथ में था। इसके तीन कारण थे। पहला ये उन्हीं स्वर्गवासियों की निशानी थीं जिन्हें वो बड़े चाव से खा चुके थे। दूसरे हिंदू इस कारोबार को अपवित्र समझते थे। तीसरे सौभाग्य से इन व्यापारियों का संबंध चिन्यौट से था, जो दिल्ली दरबार से दूर था। उनकी सूझ-बूझ के सामने मारवाड़ी भी कान पकड़ते थे। मशहूर है कि चिन्यौट या मैमन पागल भी हो जाए तो दूसरों की पगड़ी उतार कर अपने ही घर में फेंकता है, 'पैदा कहाँ हैं ऐसे परागंदा तब्अ लोग।'

हिसाब - किताब का जंजाल : आश्चर्य की बात तो यह है कि उर्दू कथाओं में सौदागर का जिक्र अगर कहीं आता है तो केवल डाकुओं से लुटने के लिए और वो भी इस ढंग से कि पढ़ने वाले की हमदर्दी हमेशा लूटने वाले के साथ रहती है। उर्दू गजल में हमें याद नहीं कि किसी शायर ने सौदागर को सम्मान के साथ याद किया हो, हाँ एक नज्म 'मसनवी जहे-इश्क' में सौदागर घुस आया है वो भी केवल इसलिए कि उसकी एक बेटी थी जो नेक न निकली मगर जिससे आगे चल कर शायर को रदीफ-काफिए की चूल बिठाने के अलावा और भी बहुत से काम लेने थे, जिनमें एकांत की मुलाकातें, उनके अनिवार्य परिणाम के रूप में आत्महत्या और वर्णन के आखिरी हिस्से से पहले 'पान कल के लिए लगाए जाते हैं', का दायित्व शामिल था।

जिस मुहल्ले में था हमारा घर
वहीं रहता था एक सौदागर
एक दुख्तर थी उसकी माहे - जबीं
शादी उसकी हुई नहीं थी कहीं

आखिरी पंक्ति में खुशी की जो हिलोर है बस उसी ने पिछली तीन पंक्तियों में जान सी डाल दी है। बचपन की बात है शायद इसलिए अच्छी तरह याद है पूरे कस्बे चाकसू में तिजारत-विजारत तो बड़ी बात है किसी मुसलमान की पंसारी की दुकान तक न थी।

1933 में कुछ मुसलमानों ने चंदा जमा करके सामान इकट्ठा किया और सौलत यार खाँ रिटायर्ड सबइंस्पेक्टर पुलिस को मुसलमानों के मुहल्ले में परचून की दुकान खुलवा दी। उस जमाने में कौड़ियाँ भी चलती थीं। धेले का घी और छदाम के बैंगन खरीदते गरीबों को हमने भी देखा है, छोटे बैंगनों का झोंगा (रोकन) ऊपर से। सौलत यार खाँ को मुनाफे में तो दिलचस्पी थी लेकिन हिसाब किताब को घृणित समझते थे। दुकान में उनकी मसनद, तकिए, हुक्के और तराजू के सामने आटा, शकर, बेसन, नमक, मिर्च, दालें और मसाले उल्टी हुई आस्तीन की

तरह अधखुली बोरियों में भरे रहते थे। जो चीज जितनी बिकती उसकी कीमत उस बोरी या कनस्तर पर सारा दिन पड़ी रहती थी ताकि हिसाब में आसानी हो। शाम को हर चीज की बिक्री को अलग-अलग गिनते। रोकड़ का जोड़ नहीं बैठता था तो अपना दिल नहीं जलाते थे। वहीं खाते में एक नई मद 'भूल-चूक लेनी-देनी' खोल ली थी। रोजाना कैश में जो कमी होती वो उसी के मत्थे मारते। होते-होते इस मद में काफी रकम चढ़ गई जो लगभग पूंजी के बराबर थी। शबे-बरात की सुबह मिर्जा अब्दुल वदूद बेग जिनकी उम्र उस वक्त सात साल की की रही होगी, छह पैसे की केसर लेने गए। केसर की पुड़िया ले कर उन्होंने सौलत यार खाँ को एक कलदार रुपया थमाया। इत्तफाक से केसर की अभी बोहनी नहीं हुई थी और उसके डिब्बे पर कोई रोजगारी नहीं थी। 'गोविंदा बनिए की दुकान से खरीद ले' मिर्जा ने उँगली से रेजगारी की उन ढेरियों की तरफ इशारा किया जो हर बोरी और कनस्तरों पर पड़ी थीं। अरे साहब वो तो आपे से बाहर हो गए। धमकी भरे अंदाज में दो-सेरी (दो सेर से अधिक कुछ तोलना हो तो बाट ग्राहक को उठाने पड़ते थे) उठाते हुए बोले मुर्गी के! दूसरी ढेरी से रेजगारी निकाल कर दे दूँ तो हिसाब कौन करेगा। तेरा बाप?

हमारा चौथी दिशा जाना : बचपन में हम कभी कैरियर के बारे में संजीदगी से सोचते थे तो इंजन ड्राइवरी के सामने बादशाही भी तुच्छ मालूम देती थी। जरा सियाने हुए और दिल से जिन्न, भूत और बुजुर्गों का डर निकला और वो दिन आए 'जब साए धनी होते हैं जब धूप गुलाबी होती है' तो घने जंगलों में टार्जन की सी सादा जिंदगी गुजारने का फैसला किया। न इम्तिहान का खटका न रोज सुबह मुँह धोने का खटराग। प्रेमिका एक गज दूर खड़ी हो तो जवानी की जोश में इक्कीस गज की छलाँग लगाना फिर वापस बीस गज की छलाँग लगाकर पहलू में पहुँचना और चिंघाड़ना। जटाधारी बरगद की दाढ़ी या वो हाथ न लगे तो लंगूर की दुम पकड़ कर झूलते हुए जूँ... से एक पेड़ से दूसरे पेड़ और एक दुम से दूसरी दुम तक पहुँचना। 'वन में तिरे कूदा कोई यूँ धम से न होगा'। फिर अपने और बियाबान की परी के बीच कोई नदी, जालिम जमाने की तरह बाधक होती तो उसे उसके बाप या मगरमच्छ की पीठ पर बैठकर पार करते मगर होता यह था कि जो भी कहानी पढ़ते उसके हीरो का प्रिय काम बल्कि उसकी प्रेमिका तक को अपनाने का फैसला कर लेते। किसी के मुँह पर सेहरा लटका देखते तो तन-बदन में आग लग जाती, महसूस होता हक मारा जा रहा है।

हमने खुद को हर बहरूप, हर स्वांग में देखा था सिवाय बैंकर के, यह वो चौथी दिशा थी जिस तरफ जाने की कहानियों में सख्त मनाही है लेकिन जिधर जाने वाला जुरूर जाता है और पछताता है।

हलालो - हराम : 'पढ़ोगे-लिखोगे बनोगे नवाब, खेलोगे कूदोगे होगे खराब', बुजुर्गों की इस नसीहत और ज्योतिष से भरपूर इस भविष्यकथन पर सारा बचपन निछावर करवाने के बाद जब हमारी बारी आने लगी तो भाई लोगों ने रियासतें-रजवाड़े ही खत्म कर दिए; लेकिन बात दरअस्ल ये है कि आदमी जरा ओरिजनल हो तो खेले-कूदे बगैर भी खुद को खराब करने की कोई राह निकाल ही लेता है। तीसरी क्लास तक टोंक (राजस्थान) में खुद पर पढ़ाई के तजरुबे करवाए। वहाँ स्कूल में दोपहर की नमाज ग्रुप में होती थी। जिसे बिना हाथ-पाँव धोए पढ़ने पर उँगलियों के बीच में सरकंडे का कलम रख कर दबाया जाता था जो अक्सर उस सजा को बर्दाश्त न कर पाने के कारण टूट जाता था।

कत्ल की सजा मौत थी। जल्लाद जब ठर्रा पी कर गर्दन उड़ाता तो शहर का शहर देखने के लिए उमड़ पड़ता था, कमजोर दिल के लोग हरा चश्मा लगा कर जाते थे, जो उस जमाने में सिर्फ उस वक्त पहना जाता थी जब आँखें दुखने आ जाएँ। इससे खून बैंगनी और तलवार हरी नजर आती थी। टोंक में दीन (इस्लाम धर्म) तथा शायरी का बड़ा चर्चा था। जल्लाद और अमीरों तथा शरीफों को छोड़कर आम आदमी को शराब पीने की इजाजत नहीं थी। खुदा न सही मगर काजी का डर अभी दिलों से दूर नहीं हुआ था। इसलिए कोई काम शरअ (इस्लामी कानून) के खिलाफ करना हो तो मुसलमान अपनी टोपियाँ उतार कर जेब में रख लेते थे। टोंक के एक नवाबजादे घूमने के लिए मिश्र और तुर्की गए तो इस बात पर बहुत आश्चर्यचकित हुए कि वहाँ तो मुसलमान नमाज भी टोपी उतार कर पढ़ते हैं।

हम तो सोच भी नहीं सकते थे कि ब्याज जिसे हराम ठहराया गया है और जिसकी महानता में आज भी तिल बराबर शक नहीं, हमारा जीवन-यापन का साधन ही नहीं बल्कि हर एतबार से श्रेष्ठ और सर्वोच्च साबित होगा। स्वर्गवासी पिता पाकिस्तान आने लगे तो अपने पोस्ट ऑफिस के सेविंग बैंक एकाउंट में साढ़े चार हजार रुपए छोड़ गए थे जो उनके हिसाब से बीस सालों का ब्याज बनती थी। वो किसी ऐसे मुसलमान के यहाँ दावत खाना तो बड़ी बात है, पानी पीना भी हराम समझते थे, जिसके बारे में उन्हें पता हो कि वो अपने एकाउंट पर ब्याज लेता है। उन्होंने एक दिन इमाम अबू हनीफा का किस्सा सुनाया था कि एक शख्स को दफनाने के बाद लोग एक मकान की दीवार के साए में आए मगर वो धूप में खड़े रहे। किसी ने पूछा हजरत आप छाँव में क्यों नहीं आ जाते? आपने जवाब दिया उस मकान का मालिक मेरा कर्जदार है अगर मैं उसकी दीवार की छाँव से फायदा उठाऊँ तो डरता हूँ कि प्रलय के दिन इसकी गिनती ब्याज में न हो जाए।

विचार आया कि नौकरी मिल भी गई तो ऐसे बाप को कैसे बताएँगे कि मछंदर ने बहरहाल रोटी कमाने के लिए गंदा पेशा चुना है। वो रियासत टोंक में पोलिटिकल सेक्रेटरी रह चुके थे। रियासती परंपराओं से परे, इस्लाम के नियमों पर चलने वाले सादे मुसलमान लेकिन अज्ञानी नहीं थे। जयपुर के पहले स्थानीय मुसलमान थे जिसके 1914 में बी.ए. किया। अच्छी तरह याद है कि टोंक में बड़े कुँए के सामने हमारी सजी-धजी हवेली में हिज हाइनेस नवाब हाफिज सर इब्राहीम अली खाँ, रियासत के मालिक के दर्जनों फोटो हर उस जगह टंगे थे जहाँ कील बगैर इस आशंका के ठोकी जा सकती थी कि सारी दीवार न आ पड़े। उन्होंने हर एक की नाक चाकू से छील दी थी कि उनका यह विश्वास था कि तस्वीर पूरी हो तो उस घर में रहमत के फरिश्ते नहीं आते। साठ-सत्तर अमीरों, राजकुमारों और दरबारियों पर आधारित एक ग्रुप फोटो जिसमें वो खुद भी शामिल थे एक ताक में रखा हुआ था। उसकी भी वही हालत थी, नावक ने तेरे नाक न छोड़ी जमाने में।

नवाब साहब जो अस्सी के पेटे में होंगे, खुद कुरआन को कंठस्थ किए, इस्लामी नियमों के पाबंद, सादा और नेक मुसलमान थे। अपनी नाक आप छीलते थे।

फैजी से उन्होंने जो आदमकद पेंटिंग बहुत महंगी बनवाई थी उसकी नाक उन्होंने अपने पूर्वज अमीर खाँ लुटेरे की करौली से टोंक में खुद छीली थी, प्रजा को अपने इस फकीराना स्वभाव वाले बादशाह से बेपनाह आस्था और लगाव था। चुनांचे पहली मुहर्रम को पैदाइश के बाद हमें उस वक्त तक कोई कपड़ा नहीं पहनाया गया जब तक दस दिन बाद उस बुजुर्ग की उतरन के प्रसाद से हमारा पहला कुरता न सिल गया। खुदा ही जानता है इस आस्था और श्रद्धा में आवश्यकता और चापलूसी का कितना हाथ था। हमने अपने होश में पहली बार जयपुर का म्यूजियम

देखा तो बड़ा आश्चर्य हुआ कि सदियों पुरानी मूर्तियाँ अल्बर्ट हॉल के कॉरीडोर में पंक्तियों में सजी हुई हैं लेकिन नाक हर एक की टूटी हुई। जब जरा सूझबूझ पैदा हुई तो समझ में आया कि इस रंगशाला से हर दौर, हर सदी में कोई इब्राहीम अली खाँ मय अपने साथियों-मुसाहिबों के गुजरता रहा है।

हमारा ब्रह्मचारी आश्रम में छह हफ्ते का विस्तार : 'तुम इस पेशे में क्यों आना चाहते हो? कोई उचित कारण?' दिमाग पर बहुत जोर दिया अगर वो उचित की पख न लगाता तो हम एक हजार एक कारण गिनवा सकते थे और अगर उसने हमारी सच बोलने की आदत को इस गंभीरता से न सराहा होता तो हम यह झूठ बोल कर पीछा छुड़ा लेते कि हमें गणित से पैदाइशी लगाव है लेकिन यह अमर घटना है कि बुजुर्ग गणित के नंबर देखकर बेचैन तथा उतावले हो जाते थे। (स्वर्गवासी बुजुर्गों की गलतियाँ पकड़ना हमारा काम नहीं, फरिश्तों का फर्ज है लेकिन बुरी सुहबत के स्पष्टीकरण तथा रिकार्ड ठीक रखने के लिए ईश्वर को प्रत्यक्ष जानकर निवेदन करते हैं कि जितनी भी गालियाँ हमें याद हैं सब हमने अपने बुजुर्गों और मास्टरों से सीखी हैं) उन दिनों हमें इसका बड़ा अरमान था कि काश हमारे सिर पर सींग होते तो बुजुर्ग हमें कम से कम गधा तो न समझते। मिर्जा के बुजुर्ग तो उनकी पीठ पर बॉक्सिंग की प्रैक्टिस भी करते थे। सातवीं क्लास में जब हमें अंग्रेजी में 100 में से 91 और गणित में 16 नंबर मिले तो हमने गिरधारी लाल शर्मा से बात की जिसने बिल्कुल यही नंबर प्राप्त किए थे, विषयों का क्रम अलबत्ता उल्टा था। उसने हमें बताया कि हिंदुस्तान का प्रसिद्ध गणितज्ञ रामनुज रात को दिए की रौशनी में इस तरह पढ़ता था कि एक डोरी से चोटी छत के कड़े से बाँध लेता था। ताकि नींद का झोंका आए तो आँखों के आगे बिजली सी कौंध जाए, लेकिन हमने बताया कि हमारी छतों के कड़ों में तो पहले ही फर्शी पँखा (हाथ से खींचा जाने वाला और बिना बिजली का बड़ा पँखा) लटक रहा है जिसे सिर्फ बकरा ईद पर उतारते हैं ताकि कसाई उनमें बकरे उल्टे लटका कर खाल उतार सके। बगल तक हाथ और बंद मुट्ठी खाल में घुसा-घुसा कर। गिरधारी लाल शर्मा ने हाथ जोड़ कर हमें और विस्तार में जाने से रोका और अपना प्रपोजल फौरन वापस ले लिया।

कुछ देर बाद कहने लगा कि चिंता न करो विचार करके कल तक कुछ और उपाय निकालूँगा, दूसरे दिन उसने अपना वचन पूरा किया और गणित में 91 नंबर लाने के दो गुर बताए। पहला तो यह कि भोग-विलास से दूर रहो, आज ही प्रतिज्ञा कर लो कि परीक्षा तक ब्रह्मचर्य का पालन करोगे। हठीली कामनाएँ या चंचल विचार हल्ला बोल दें तो तीन बार 'ओम शांति! ओम शांति! ओम शांति! कहना। इससे व्याकुल सागर और भड़कता ज्वालामुखी भी शांत हो जाता है। ओम शांति! ओम शांति! ओम शांति!

हमने कहा ना बाबा! यह हमसे न होगा। बोला भाई जी तुम मुसल्ले होते हो बड़े कट्टे। हमने कहा यार! यह बात नहीं हमें इससे शांति खन्ना याद आने लगेगी। बोला ना! ना! फिर तो ऐसे समय पुराने पेड़े की लस्सी पी लेना, किसी को लू लग जाए तो पिलाते हैं और जैसे ही सुंदर सपना दिखाई देने लगे तो इंटरवैल में ही उठ खड़े होना और एक लाल मिर्च की धूनी ले लेना। एक पल एक क्षण के लिए भी स्त्री का ध्यान मन में नहीं लाना।

'कोयले से गर्म होने वाली का भी नहीं?' हमने स्पष्टीकरण चाहा 'पास होना है तो ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ेगा।'

खैर इस शर्त से तो हम अधिक परेशान नहीं हुए। इसलिए कि बारह बरस की उम्र में डेढ़-दो महीने और ब्रह्मचारी रहना कुछ ऐसा मुश्किल नहीं था। हमने प्राण-प्रण से कोशिश करने को वादा किया। दूसरा गुर यह बताया कि

चोटी का कष्ट नहीं उठा सकते हो तो सिर पर बारीक मशीन फिरवा लो और बीच में उस्तरे से मुँडवा कर एक पान बनवा लो और उसे सरौली आम की गुठली से रगड़वाओ। सारी भूसी झड़ जाए तो उस पर गाय के मक्खन की टिकिया रखकर खुले आकाश के नीचे सवाल निकाला करो। हाँ! तालू इसी कारण मुंडवाते हैं कि धर्मात्माओं के प्राण खोपड़ी के रास्ते ही निकलते हैं, फिर इसका चमत्कार देखना। मेरी चोटी टाइफाइड के बाद झड़ गई थी।

मैंने तो यही किया और यार मियाँ जी! साधारण जीवन जीना सीखो। गर्म चीजों से एक दम परहेज, गोश्त, गर्म मसाले, गुड़ की गजक और उर्दू गजल से चालीस दिन अलग रहना।

इसके बदले अंग्रेजी में 91 नंबर पाने का जो नुस्खा हमने रामनुज के लिए तय किया उसमें सिर्फ वो चीजें शामिल थीं जिनसे उसने हमें परहेज करने का निर्देश दिया था। बहरहाल हमने उसकी तरकीब पर बारह-तेरह रात अमल किया लेकिन होता यह था कि खुले आसमान के नीचे पान और उससे संबंधित इलाके को ठंडी-ठंडी हवा लगती तो आँखें आठ ही बजे आप ही आप बंद हो जातीं। बुरे-बुरे खयाल आने का इंतजार ही रहा, हमें तो नींद ही आई शबाब के बदले।

समंदरी मौत से हवाई मौत की श्रेष्ठता : मिस्टर एंडरसन ने आखिरी बार बड़े धीरज से सवाल किया 'तुम इसी पेशे में क्यों आना चाहते हो? मैं यह सवाल तुम्हें इंटरव्यू में फेल करने के लिए नहीं पूछ रहा हूँ। अगर यही मंशा होता तो मैं यह भी पूछ सकता था इस कुत्ते के बाप का क्या नाम है? हो! हो! मेरा एपॉइंटमेंट मिस्टर M.A.Asfahani ने ओरिएंट एयरवेज में किया था।'

'मैं सिविल सर्विस छोड़ कर हिंदुस्तान से कराची आया। यहाँ मालूम हुआ हाल ही में एक हवाई जहाज गिर गया है।'

'तुम पायलेट हो?'

'नहीं! एयरक्रैश में मरने के लिए आदमी का पायलेट होना जुरूरी नहीं।'

'You are telling me!'

'सर! मुझे यूँ भी हवाई जहाज से सख्त नफरत है।' हमने झूठ बोला जिसमें सच का हिस्सा सिर्फ इतना था कि मुनाबाव से खोखरा पार तक हिंदुस्तान व पाकिस्तान की सीमा का क्षेत्र हमने ऊँट के कूबड़ पर बैठ कर तय किया था। (ऊँट के बाकी हिस्सों पर दूसरों का सामान रक्खा था) इंटरव्यू के दिन तक हमारी टाँगों के बीच का फासला उसी कूबड़ के बराबर यानी एक गज था। जैसे किसी ने चिमटे को चीर कर सीधा कर दिया हो।

'हा! हा! हा! बुद्धिमान लोग एक ही तरह से सोचते हैं, मुझे भी इस शैतानी अविष्कार के सख्त चिढ़ है। समुद्री सफर से और बेहतर कोई सफर नहीं। शाही सवारी सिर्फ एक है, स्टीमर। सबसे बड़ी विशेषता यह कि चौबीस घंटे का सफर चौबीस दिन में तय होता है फिर ये कि फ्री ड्रिंक्स, मैं तो पिछले तीस साल से लंदन से हमेशा पानी के जहाज में आता हूँ।'

Afterall, a ship-cresh is much safer than an air crash! Don't you agree?

'मुझे यह जान कर बेइन्तिहा खुशी हई कि तुम भी हवाई जहाज से एलर्जिक हो। आज से तुम खुद को बैंक का Officer समझो।'

पसली फड़क उठी निगहे - इंतिखाब की : इस इंटरव्यू को तेईस साल हो गए। हमारा विचार क्या, पक्का विश्वास है कि उसने हमें बैंक में केवल इसलिए नौकरी दी कि हमें भी हवाई जहाज से नफरत थी। हवाई कंपनी और खुदा हमें माफ करे, हमें इस अविष्कार से अभी तक कोई नुकसान नहीं पहुँचा। लिखने के क्षण तक हम किसी हवाई दुर्घटना में मारे नहीं गए, जैसा कि बहुत से विद्वान पाठकों ने अंदाजा लगाया होगा, लेकिन कभी-कभी मूर्खतापूर्ण वाक्य से भी आदमी के दिन फिर जाते हैं, बशर्ते कि सुनने वाला भी बातचीत की इस शैली का गुण-ग्राहक हो।

एंडरसन न्यूनाधिक नौ साल पाकिस्तान में रहा, लेकिन लाहौर केवल इसलिए नहीं गया कि वहाँ पानी का जहाज नहीं जाता। लाहौर को 'कंट्री साइड' कहता था, हालाँकि उसके अपने पैतृक गाँव की आबादी 200 लोगों पर आधारित थी। आधी आबादी व्हिस्की बनाती और शेष आधी उसे पीती थी। खैर, हम टोकने वाले कौन? कुँए के मेंढक को तालाब के मेंढक का मजाक उड़ने का हक नहीं पहुँचता। हम खुद साँगानेरी-गेट जयपुर के रहने वाले थे और लंबे अरसे तक बाकी उपमहाद्वीप को Outside Sanganeri Gate समझते रहे।

हमारी सियाह - पोशी : उसने हमें एपाइंटमेंट पर बधाई दी, हमने भी जी खोल कर उसको गुणग्राहकता की दाद दी। अभी हमने अंग्रेजी का दूसरा जुमला अपने खराद पर चढ़ाया ही था कि उसने पूछा, 'स्कॉट-लैंड की किस चीज की सारी दुनिया में धूम है?'

'बैगपाइप-म्यूजिक, व्हिस्की और कंजूसी'

'और'

'कुत्ते, गॉल्फ क्लब, kilt और haggis (दिल, कलेजी और फेफड़े को आमाशय में बंद करके दम दे कर पकाते हैं) हमने सब कुछ उगल दिया।

वो अंगारा हो गया, 'मालूम होता है तुमने अपना सारा जनरल-नॉलेज उन गंदे चुटकलों से निचोड़ा है जो अंग्रेजों ने स्कॉटलैंड के बारे में गढ़ रखे हैं। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि स्कॉटलैंड की सबसे कीमती दौलत, सबसे मशहूर चीज तुम्हारे सामने बैठी है, यानी स्कॉटिश बैंकर। हमारा लोहा सारी दुनिया मानती है। हम जब कर्ज देते हैं तो उसमें से सारा ब्याज एडवांस में मुजरा करके धरवा लेते हैं।'

'हमारा ब्याज कभी नहीं डूबता, मूल रकम भले ही डूब जाए। संकोची और वहमी इतने कि जब तक पहली जनवरी के सूरज को अपनी आँख से न देख लें, स्कॉटलैंड का कोई आदमी दीवार पर नए साल का कलैंडर नहीं टाँगता। मुझे तो तुम्हारे सौभाग्य पर ईर्ष्या हो रही है कि तुम एक स्कॉट बैंकर से इस पेशे की बाराखड़ी सीखोगे।'

'पहली फुर्सत में लंदन से Rae Country Banker मँगवा कर रट लो। हमारे पेशे की बाइबिल है। इसके अलावा लॉर्ड चैस्टरफील्ड के पत्र पढ़ो। दो सौ साल से इनकी गिनती क्लासिक में होती है। सलाह-नसीहत और वर्डली विजडम

से भरपूर। शालीनता, मनोविज्ञान और समाज व्यवहार के बड़े बारीक नुक्ते मिलेंगे। खूने-जिगर से लिखी हुई ये किताब उन खतों का संग्रह है जो उसने तीस साल के अरसे में अपने Natural Son एदह को लिखे थे। जानते हो अंग्रेजी में हरामी को प्राकृतिक संतान कहते हैं। इस लिहाज से हम-तुम अप्राकृतिक संतान हुए। हा! हा! हा!'

उसका मूड बदल चुका था। हम चलने लगे तो उसके कुत्ते ने फिर उठ कर चूमा-चाटी की विदाई रस्में अदा कीं और दरवाजे तक दुम उठाए पहुँचाने आया। हम दरवाजा खोल कर निकलने ही वाले थे कि 'जस्ट ए मिनट' कह कर वापस बुलाया।

इज्जत बख्शने वाले खुदा! अब कौन सी कसर बाकी रह गई! अपमानों का ठीकरा जिसे पापी पेट कहते हैं, तो कभी का भर चुका। 'और अगर तुम थ्री पीस सूट पहन कर ही भरे दफ्तर में कराची-स्टीमबाथ लेने पर तुले हो जिसका कारण अंदर फटी कमीज भी हो सकता है, हा-हा-हा-हा। तुम्हारी खुशामद मेरा मकसद नहीं, लेकिन ईमान की बात है, इससे अधिक ैात्त् ीा् ेमीा मीदै (सुंदर कपड़े पहने काकभगोड़ा) मैंने अपनी जिंदगी में नहीं देखा। अगर कुछ पहनना ही है तो ये शतरंज की बिसात जैसा चारखाने वाला सूट और मेरे देश की टार्टन टाई पहन कर बैंक न आना। सारी दुनिया में बैंकरों और तवायफों का परंपरागत पहनावा काला लिबास है। काला सूट पहना करो। ट्रेड मार्क'

और इस प्रकार हमारे जीवन में एक नए अध्याय का आरंभ हुआ बल्कि प्रोफेसर अब्दुल कुद्दूस के कथनानुसार पन्ना पलटने की आवाज भी दूर-दूर तक सुनाई दी। अब हमने अपने बुद्धिमान दोस्त मियाँ शफी के मशवरे से काम लिया होता तो आज हम एक नाकाम से बैंकर की जगह टूटे बासमती चावल और किराने के नाकाम आढ़ती होते।

रोटी तो किसी तौर काम खाए मछंदरः हमारी हर तबाही और घर की बरबादी हमारे पूजनीय मिर्जा अब्दुल वदूद बेग की निगरानी में हुई है। हमने जाकर उन्हें खुशखबरी सुनाई कि हम बैंकिंग के पेशे में हादिसे के तौर पर दाखिल हो गए हैं।

बोले 'बैंक को चोट तो नहीं आई?'

बधाई देने के बजाय उन्होंने इसे सदी का सबसे भौंडा मजाक बताया। हमने कहा तुम्हें भरोसा नहीं होता, हम तो कल सुबह से बैंक जाना शुरू कर देंगे। बोले, 'जब तक कोई आदमी नशे में धुत्त न हो, तुम्हें बैंक में नौकर नहीं रख सकता।'

'जिस आदमी ने हमें नौकर रखा वो इसी हालत में था।'

'सच?'

'सच! खुदा खैर करे। हमने अंधेरे में छलाँग लगाई है।'

'छलाँग तो जुरूर लगाई है मगर कपास के ढेर में, बदन पर सरेश मल कर। ऐश करोगे दोस्त। आदमी अपनी गिरह से पैसा उधार दे और वो डूब जाए तो अहमक कहलाता है, वसूल हो जाए तो सूदखोर, लेकिन दूसरों का रुपया

ब्याज पर चलाए और मूछें दाढ़ी से बढ़ जाएँ यानी ब्याज मूल से जियादा हो जाए तो बैंक कहलाता है? ब्याज में बड़ी बरकत है। सूद और कैंसर को बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता।

'बकौल गालिब, पेशे में कोई ऐब नहीं।'

'हुजूर ने इस्लाम की नजर से ऐब को ही पेशा बना लिया। खैर बैंक के पास तो तुम्हें नौकरी पे रखने का एक बहुत उचित कारण है, वो ये कि उसका जनरल मैनेजर नशे में था लेकिन तुम्हारे पास क्या औचित्य है?'

'बैंक में वेतन 26 तारीख को ही मिल जाता है।'

'हमें इससे भी पहले मिल जाता है। 4 तारीख को!'

'सुनो! हमारे पास एक छोड़ तीन-तीन उचित कारण हैं।'

'पहला, इस पेशे में ईमानदारी, बुद्धिमानी और शराफत की बहुत कीमत है। दूसरे, पाकिस्तान बन रहा है। समाज को नए खून, त्याग और बलिदान की बहुत आवश्यकता है। तीसरे, हमें कोई और नौकरी नहीं मिली।'

'नौकरी! नौकरी! कभी तुमने यह भी सोचा कि आखिर आदमी के जीवन का उद्देश्य क्या है?'

'हमें तो धरती पर केवल इसलिए उतारा गया है कि आपको हमारे सुधार का अवसर मिले। नहीं तो आपका सारा जीवन व्यर्थ हो जाता।'

'फिर भी ये क्या सूझी? एक तो ऊँटनी थी ही दीवानी और ऊपर से घुँघरू और बाँध लिए।'

हमने बताया, 'पहले तो उसने हमें रुई की तरह धुनक कर रख दिया। फिर एकाएक इतने प्यार से ऑफर दी कि हाथ-पाँव फूल गए।'

मुझे डरती ने कर लिए कौलो - करार

वेतन तक पूछना भूल गए। वही हाल हुआ जो जेम्स ज्वायस की भोली और कमसिन हुआ।

He asked me with his eyes, yes, and with his hands, yes, and yes, I said, yes, I will yes.

और वो जो मर गया है सो है वो भी आदमीः इसे स्वीकारे 23 साल बीत गए और इन तेईस बरसों में दुनिया ने क्या कुछ नहीं दिया लेकिन अपना कर्ज जो अपने आप पर था, वो आज तक न उतर सका। हिसाब-किताब से दिली नफरत थी,

वही आखिर को ठहरा फन हमारा

इससे अधिक दुर्भाग्य क्या होगा कि आदमी एक गलत पेशा अपनाए और उसमें कामयाब होता चला जाए।

रुपए और संबंधित सारे कारोबार में कामयाबी की पहली शर्त ये है कि आदमी हर चीज से नाता तोड़ कर उसी का हो रहे। पैसा ही उसके लिए सब है। भरोसा रखने वाले उसी पर भरोसा रखते हैं। मरते समय भी वो 'पानी! पानी!' नहीं पुकारता, 'पैसा!! पैसा!!' पुकारता है। दौलत, सियासत, औरत और इबादत संपूर्ण-ध्यान और पूर्ण-आत्मसमर्पण चाहती हैं। जरा ध्यान भटका और मंजिल खोटी हुई। जब तक आदमी अपने दिल और दिमाग से हर इच्छा को विदा और हर आदर्श का तर्पण कर, स्वयं को उनसे मुक्त न कर ले, ये छलावे कहीं हाथ आते हैं। फिर जब यात्री अपने दल से बिछड़ कर उनकी खोज में बहुत दूर निकल जाता है और शाम का झुटपुटा-सा होने लगता है तो अचानक उसे अहसास होता है कि मंजिल तो वहीं थी, जहाँ से उसने यात्रा शुरू की थी। इतने में सूरज डूब जाता है।

औरंगजेब ने राजपूत सरदारों के एक लश्कर को एक दूर के मोर्चे पर भेजा था। जुग बीत गए, चाँदनी रातें आईं और अपनी चाँदनी लुटा कर चली गईं। कितने ही सवान आए और नैन-कटोरों को छलका कर चले गए, पर वो न लौटे।

न नींद नैना - न अंग चैना
न आप आवें - न भेजें पतियाँ

आखिर विरह की मारी ठकुरानियों ने बादशाह को विनती भेजी जो केवल एक दोहे पर आधारित थी।

सोना लावन पी गए , सूना कर गए देस
सोना मिला न पी मिले , रुइया हो गए केस

इसे चाहें तो मानव-आत्मा की कथा समझ लीजे।

गुड मार्निंग के जवाब में गुड आफ्टर नूनः पहले दिन ड्यूटी पर रिपोर्ट करने हम सवा नौ बजे मिस्टर एंडरसन की सेवा में पहुँचे, हमारी गुड मार्निंग के जवाब में फर्माया 'गुड आफ्टर नून! इस पेशे में वक्त की पाबंदी का नंबर ईमानदारी से भी पहले आता है। मेरी समझ में नहीं आता, यहाँ लोग दफ्तर इतने लेट क्यों आते हैं। मेरी और तुम्हारी पैदाइश में इतना लंबा गैप है कि इसमें एक पीढ़ी पैदा भी हुई, बदचलन भी हुई और झक मार कर सही रास्ते पर भी आ गई।'

'मुझे वो जमाना याद है, जब लंदन में कार को प्ीाते मीर्गी्री कहते थे। मैंने वो जमाना भी देखा है जब ट्राम को घोड़े खींचते थे। इसलिए उसकी स्पीड आज की ट्राम से कहीं अधिक होती थी। हाँ! तो मैं यह कह रहा था कि मेरी समझ में नहीं आता, यहाँ लोग आफिस इतनी लेट क्यों आते हैं? आज से पैंतालीस साल पहले जब मैंने एक छोटे से बैंक में नौकरी शुरू की तो सुबह बर्फ गिरती होती थी। सड़क पर घुटनों-घुटनों होती थी, लेकिन मैं जीरो से भी नीचे दस डिग्री टैम्परेचर में ठीक आठ बजे बैंक पहुँच जाता था। तुम लोग 13 डिग्री टैम्परेचर में भी टाइम पर नहीं आ सकते!'

स्टूल के अविष्कार का अस्ली उद्देश्य : इस लाभदायक सलाह के बाद उसने चपरासी को आदेश दिया कि इस 'क्विन्टिड आफिसर' (old fashioned) को उसके आफिस तक पहुँचा आओ।

चपरासी जिस जगह तक हमें ले गया वो जमीन से साढ़े चार फिट की ऊँचाई पर लकड़ी की एक समतल सत्ह थी। यह तख्ता जिसके भाग्य में हमारे पद की सूली होना लिखा था, 12 x 12 इंच से अधिक न होगा। बैंकों में ऐसे क्लर्क मौजूद थे जो बीस-बीस बरस से एक ही स्टूल पर बैठे टटपूंजियों को करोड़पति बनते देख चुके थे। इंग्लिश बैंकिंग की ये पुरानी परंपरा है कि क्लर्क जिस स्टूल पर पहले दिन आ कर बैठता है, उसी से रिटायर होकर उतरता है।

इस विचार से घबराहट होने लगी कि एक इंसान की पूरी जिंदगी, दीवार की तरफ मुँह करके एक वर्ग फिट के तख़्ते पर बीत सकती है। इस पर से कूदना, इस पर चढ़ने से अधिक मुश्किल था और गर्म थ्री-पीस सूट, बिना फ़्रेम के चश्मे और सुनहरी पॉकिट घड़ी के साथ ये करतब इंग्लिश बैंकिंग के बजाए किसी इंग्लिश कॉमेडी का हिस्सा मालूम होता था। स्टूल के बीच में गुर्दे की शक्ल का एक बहुद्देशीय छेद था। गद्दी का संकोच भी न था जिसके पीछे शायद ये सोच थी कि अस्ली बर्मा सागवान के रेशे और जौहर छुप जाएँगे। अपने 'ऑफिस' को देख कर हमारी नवजात आशाओं पर परंपरागत ओस की जगह ओले पड़ गए। हम पीछे मुड़ कर देखने लगे कि जिस बैंक में 'क्विन्टिड ऑफिसर' स्टूल पर कब्ज़ा जमा लें वहाँ गरीब क्लर्क क्या करते होंगे, लेकिन हमें कोई घड़ौंची नजर न आई। कुछ दिन बाद हमने जमादार अजमल खाँ को डांटा कि हमारा स्टूल धूल से अटा रहता है, हम उँगली से इस पर सौदे-सुलुफ का हिसाब कर लेते हैं। बोला 'बादशाहो! ऐस बैंक दे स्टूल नवीं अफसरां दे पैंदे नाल साफ कीतें जादें ने।' (बादशाहो! इस बैंक में स्टूल नए अफसरों के पेंदे से साफ किए जाते हैं) एक दिन हमने लेजर-कीपर शफी कुरैशी से कहा कि गुरुजी! ग्यारह घंटे रोज स्टूल पर बैठने के बाद आपके चेले के कूल्हे स्टूल की तरह सपाट और चौरस हो गए हैं, तो उसने सूचित किया कि स्टूल कोहनी टिकाने के लिए होता है। स्टूल के अविष्कार का अस्ल उद्देश्य तो यह था कि उसके उच्चारण और अक्षरों पर पंजाबी और गैर पंजाबी एक दूसरे पर हँस सकें।

अब और तब : उस जमाने में बैंकों में ये चमक-दमक नहीं थी जो आजकल देखने में आती है। कई बैंकों में तो वैसा ही फर्नीचर होता था जैसा छोटे रेलवे स्टेशनों और कस्बों के पोस्ट ऑफिसों में होता है। जहाँ कुर्सी की बेंत की बुनाई उधड़ने के बाद पढ़ाई समाप्त कर चुके बेटे की तख्ती जड़ दी जाती है और रिटायर होने से पहले हर बाबू चाकू से अपना नाम मेज पर खोद जाता है।

मेज, कुर्सियों की टाँगों को अभी पोलियो नहीं हुआ था और बैंकों में केकड़े जैसी टाँगों वाले मुड़े-तुड़े फर्नीचर ने 'पीरियड फर्नीचर' का रूप धार के प्रचलन नहीं पाया था। बाथरूम की दीवारों पर भी पेंसिल से जो graffitos (चित्रित पंक्तियाँ) बनाई जाती थीं, उनके बारे में हम इतना ही निवेदन कर सकते हैं कि नस्ल बढ़ाने में प्रयोग किए वाले घोड़े अपनी दिली इच्छाएँ लिखते तो यही कुछ चित्रित होता। मगर अब स्थिति बेहतर है। Bathrooms में अब अश्लील और अशिष्ट वाक्य बिल्कुल दिखाई नहीं देते। बाथरूम-टाइल्ज इतनी चिकतनी और ग्लेज्ड होती है कि उन पर पेंसिल से कुछ लिखा ही नहीं जा सकता।

और कॉमर्शियल बैंकों का क्या कहना। खुद स्टेट बैंक ऑफ पाकिस्तान का हैड ऑफिस, जिसमें बड़े अधिकारी बैठते थे, एक ऐसी बिल्डिंग में स्थित था, जिसने कभी अच्छे दिन देखे थे। मतलब ये कि यहाँ पहले एक संग्रहालय था। जिसमें हड़प्पा, मोहन-जोदड़ो और गांधार के गड़े हुए मुर्दे उखाड़ कर सजाए गए थे, जो किसी को दुख नहीं देते थे। इस इमारत में कबूतरों की इतनी बड़ी तादाद थी कि चपरासी गले में चपरास की जगह गुलैल डाले फिरते थे। चारों तरफ गुटर गूं और बिस्मिल्लाह, अल्लाहो-अकबर का गुल-गपाड़ा। सादगी का ये आलम कि बैंक ऑफ

पाकिस्तान के खजानों पर कुंडली मार कर बैठने वाले एक उच्चाधिकारी 25 इंच चौड़े पाँचये की पैंट पहन कर (जिसका एक पाँयचा ही उनकी और हमारी जुरूरत के लिए काफी था) साइकिल पर स्टेट बैंक आते थे और हम उन्हें ईर्ष्या की दृष्टि से देखते थे कि हमारे पास तो वो भी न थी।

वो साइकिल को ताला लगा कर नजरों के सामने अपने कमरे ही में पार्क करते थे। ताले का तकल्लुफ इसलिए कि साइकिल अरबी घोड़े की तरह वफादार तो होती नहीं कि अपने सवार के अलावा किसी को पुट्ठे पर हाथ ही न रखने दे और घायल मालिक को मुँह में दाबे युद्ध के मैदान से बगटुट जर्राह के पास ले जाए और तलवार तथा अपने ही दाँतों के लगे हुए घावों पर मोमिया रखवाए। चपरासी का बयान था कि हजरत हर मुलाकाती के जाने के बाद दो उँगलियाँ रख कर टायरों की नब्ज देख लेते हैं।

फिर देखते ही देखते नक्शा बदल गया और दम-भर में ये हालत हो गई कि इमारतों का जंगल का जंगल खड़ा हो गया। पीले पड़े मुरमुरे पत्थर की जगह सीमेंट ने ले ली। खुले फ्रंट और नंग-धड़ंग दीवारें कम नजर आने लगीं कि बैंक जरा सियाने हुए तो इज्जत ढँकने के लिए संगेमरमर प्रयोग करने लगे।

ये बात ध्यान देने की है कि मुगलों ने ठंडे संगेमरमर का इस्तेमाल यथासंभव मकबरों के लिए सीमित रखा। इच्छा की बात थी वर्ना किसी चीज की कमी थी? वो चाहते तो तालाब के किनारे, दुश्मनों पर फेंकने के पत्थर और तोप के गोले तक संगेमरमर के बनवा सकते थे। किले की दीवारें भी, जिन पर से दंडित को जिंदा नीचे फिंकवाया जाता था।

चूँकि स्टेट बैंक को दूसरों के मकबरे बनवाने की कानूनी इजाजत नहीं है इसलिए उसे अपनी आरामगाह की दीवारें बल्कि फर्श भी रंगीन संगेमरमर का बनवा डाला जो इतना चिकना और फिसलन भरा था कि पहले ही हफ्ते में पंद्रह आदमियों की सोलह टाँगें टूट गईं। इसलिए एहतियात को दृष्टिगत करते हुए ये आदेश पारित हुआ कि चपरासी चमड़े के जूते न पहनें, क्रेप सोल पहन कर आएँ ताकि हड्डी-पसली तुड़वा कर अपाहिज न हो जाएँ। अफसरों को निर्देश था कि सिर्फ चमड़े के जूते पहनें।

उस जमाने में खुशमिजाजी का ये हाल था कि किराएदार मकान मालिक को गाली दिए बिना पाँच-पाँच मंजिला जीना चढ़ जाते थे। फिर वो समय भी आया कि स्टेट बैंक ने केवल पहली मंजिल तक जाने के लिए escalator का चोंचला किया तो डेढ़-दो महीने तक कोई दिन ऐसा नहीं बीता जब उसकी अंतिम सीढ़ी में फँस कर डेढ़-दो सौ लावारिस जूते जमा न हो गए हों। इन जूतों का भूतपूर्व संबंध उन औरतों से था जो पतियों की आज्ञा के बिना चोरी-छुपे 'एस्केलेटर' देखने आईं और किसी तरह पैर सलामत लेकर लौटीं। सुबह की भूली अगर शाम तक नंगे पैर भी घर लौट आए तो उसे भूली नहीं कहना चाहिए। इन जूतों में कभी कोई मर्दाना जूता नहीं पाया गया, जिसके दो कारण थे। पहला ये कि मर्द जूते छोड़ कर भागना कायरता समझते हैं, दूसरे वो अपने जूतों के फीते कस कर बाँधते हैं।

राजधानी इस्लामाबाद अभी पाकिस्तान के नक्शे पर नहीं उभरी थी और कराची ही मार-काटधानी थी। कराची का नक्शा ही नहीं, उच्चारण और अक्षर तक गंवारू से थे। जुकाम न हो, तब भी लोग कराची को किरांची ही कहते थे। चीफ कोर्ट के सामने गांधी जी की एक निहायत भौंडी मूर्ति लगी थी, जिसकी कोई चीज, लंगोटी की सिलवटों के सिवाय, गांधी जी से नहीं मिलती थी। ग्वानीज जोड़े विक्टोरिया गाड़ी में बंदर-रोड पर हवा खाने के लिए निकलते

थे। एल्फ़िस्टन स्ट्रीट पर कराची वालों को अभी प्यार नहीं आया था और वो एल्फी नहीं कहलाती थी। सारे शहर में एक भी नियोन साइन नहीं था। उस समय रद्दी माल बेचने के लिए इतने विज्ञापन की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। नेपियर रोड पर तवायफों के कोठे, डान अखबार का दफ्तर और ऊँटगाड़ियों का अड्डा था। यहाँ दिन में ऊँटगाड़ियों का उल्लेखित पहला भाग कुलेलें करता था और शाम को तमाशबीन। गुणी लोग उस समय में भी परेशान हाल फिरते थे। (कुछ हमारी तरह थे जो केवल परेशान हाल थे) शरीफ घरानों में दहेज में सिंगर-मशीन, टीन का ट्रंक और बहिश्ती जेवर दिया जाता था। उर्दू गजल से माशूक को शेर-निकाला नहीं दिया गया था और गीतों और कजरियों में वही नदिया, निंदिया, ननदिया का रोना था। सेठानियों और ऊँचे घराने की बेगमों ने अभी साड़ी खरीदने और हिंदुस्तानी फिल्में देखने के लिए बंबई जाना नहीं छोड़ा था। ढाका और चटगाँव के बड़े व्यापारी वीक-एंड पर अपनी आरमेनियन रखैलों की खैरियत लेने और अपनी तबियत और सम्पन्नता का बोझ हल्का करने के लिए कलकत्ता का हवाई चक्कर लगाते थे। क्या जमाना था, कलकत्ता जाने के लिए पासपोर्ट ही नहीं, बहाने की जुरूरत भी नहीं पड़ती थी। आम, केला और शायर हिंदुस्तान से और लट्ठा जापान से आता था। बैंकों में अभी एयर कंडीशनर, मेज पर फाइनेंशियल टाइम्स, ईरानी कालीन, काली मर्सिडीज, कलम बंद-हड़ताल, रिश्वत, ऑस्टिन-रीड के सूट, मगरमच्छ की खाल के ब्रीफकेस और इतनी ही मोटी पसर्नल खाल रखने का चलन शुरू नहीं हुआ था। फकीर अभी हाथ फैला-फैला कर एक पैसा माँगते और मिल जाए तो उदार-दाता को बहुसंतान होने की बद्दुआ देते। फकीर अपनी औकात नहीं भूला था। उपलों की आँच पर चिकनी हाँडी में चमचे से छुटी हुई उड़द की बिना धुली दाल चटखारे लेकर खाता और ईश्वर के गुण गाता।

हम उल्टे , बात उल्टी , यार उल्टा : जिन साहब के जिम्मे हमें बैंकिंग के भेदों से परिचय कराना था, उनकी कंजूसी की अजीब स्थिति थी। बुद्धि के प्रयोग में भी कंजूसी से काम लेते। दिन-भर आई हुई डाक के लिफाफों को जमा करते रहते और उन्हें उलट कर 'रफ पैड' के तौर पर प्रयोग करते। अपनी परदेसी बेगम को भी इसी कागज पर अपनी खैरियत की खबर देते। उनके एक प्रेम-पत्र का वाक्य आज तक दिल पर लिखा हुआ है। 'बेगम! इस दुनिया में सिर्फ तुम्हीं मेरी दोस्त और हमदर्द हो'। पेंसिल जब घिसते-घिसते इतनी सी रह जाती कि बगैर चिमटी के पकड़ में न आ सके तो वो टोंटे पर इसी कागज की नलकी चढ़ा कर इतना लंबा कर लेते थे कि लिखते में दूसरा सिरा उनके चश्मे के शीशे पर 'वाइपर' की तरह पुचारा फेरता रहता था। उस नलकी में एक दाँत-कुरेदनी और पाँच-छह लौंग डाल लेते। दर्द बहुत सताता तो एक लौंग निकाल कर दाढ़ के नीचे दबा लेते, इस बीच स्टाफ गालियों के आनंद से वंचित रहता। एक दिन हम पर कृपा की तो हमें भी नलकी बनानी सिखाई और विस्तार से समझाया कि बाथरूम जाएँ तो पँखे का स्विच ऑफ करके जाया करें, और खुदा के लिए अपने गुस्से और मसाने को कंट्रोल करना सीखें। टिक-मार्क लगाना भी उसी दिन सिखाया। कहने लगे बैंक में टिक-मार्क इस तरह (प्र) नहीं बल्कि इस तरह (द्य) लगाते हैं। हम इस गलती से इतने शर्मिंदा और आशंकित हुए कि अपनी हर बात को उल्टी और गलत समझने लगे। तीन-चार दिन बाद हमारा चालान हुआ। कहने लगे, 'मैं तो तंग आ गया, आपकी हर बात उल्टी है। भाग का निशान इस तरह बना हुआ तो मैंने, खुदा की कसम, अपने पूरे कैरियर में नहीं देखा।' हमने मजबूरी निवेदन की कि हमने एहतियात और डर से इसे खड़ा कर दिया है। वो तो भली रही कि उन्होंने गुणा के निशान में कोई परिवर्तन नोटिस न किया, वरना हमने तो अपनी तरफ से दाँएँ डंडे को बाईं तरफ और बाएँ डंडे की दाईं तरफ कर दिया था। यासूबुल हसन गौरी, कि उनका यही नाम था, किसी क्लर्क से नाराज होते तो अंग्रेजी में उसका सम्मान वर्द्धन करते। इससे चैन न मिलता तो अंत में अस्ली देसी गाली का कड़कड़ता छौंक लगाते।

मुँहजोर अधीनस्थों को उन चपरासियों और क्लर्कों की लिस्ट दिखाते जो बीते तीस साल में उनकी छंगुलिया इशारे से बर्खास्त हुए थे। बाबर ने भी दो-तीन बार अपने दुश्मनों के कटे हुए सिरों के मीनार बनवाए थे ताकि पराजित लोग आतंकित हों। हाँ! कभी हमें उन्नति की ओर उकसाना होता तो दराज से एक ग्राफ निकाल कर दिखाते। इसमें लकीरों से ये दिखाया गया था कि उन्होंने पिछले तीस सालों में बरस-दर-बरस कितनी उन्नति की है। हमने देखा कि 27 साल तक, यानी पाकिस्तान बनने से पहले, उनके कैरियर के ग्राफ की जो लकीरें, धरती पर लोट लगा रही थीं, वो 1947 में कपड़े झाड़ कर एक दम खड़ी हो गई और अब उनकी दिशा आसमान की तरफ थी। उनके उत्थान की उछाल की तर्ज पर हमने भी अपने कैरियर का चार-साला ग्राफ बनाया। अगर उसे उल्टा करके देखा जाता तो हमने भी बड़ी तेजी से उन्नति की थी।

कुछ तो स्वभाव से वहमी थे और कुछ शक तथा शुब्हे को उन्होंने पेशेवर डिसिप्लिन के तौर पर अपना लिया था। अवसर-अनवसर यही उपदेश देते कि हर चीज को शक की नजर से देखना सीखो। चौकस बैंकर नोट खड़कने की आवाज से भी चौंक पड़ता है। आठ करोड़ की आबादी में कुछ नहीं तो सोलह करोड़ ताले जुरूर होंगे। इसी से अनुमान लगा लो हम लोग एक-दूसरे पर कितने प्रतिशत भरोसा करते हैं। जब हर हस्ताक्षर और चेहरा जाली और हर आंकड़े में हथकड़ी दिखाई पड़ने लगे तो समझ लो कि तुम एकाउंटेंट बनने के लायक हो गए हो। रजिस्टरों की एंट्रियों का मैग्नीफाइंग ग्लास से बार-बार मुआयना करते कि किसी ने रबर से मिटा कर कुछ और तो नहीं लिख दिया। किसी के कब्जे से चरस या बगैर लाइसेंस की बंदूक या दूसरे की बीबी बरामद हो जाती तो शायद इतना हंगामा नहीं होता जितना हमारी दराज से रबर बरामद होने पर। हम तो हम थे, उन्हें अपनी किस्मत की रेखाएँ भी तकदीर लिखने वाले जालसाजी नजर आती थी।

नियम-कानून के मानने वाले थे। बाथरूम में सड़क के बाईं तरफ चलते थे। उनके दुश्मनों का कहना था कि कभी ट्रेन से लाहौर जाना हो तो अपनी बर्थ पर रात भर उकड़ूँ बैठे स्टेशनों के टाइम-टेबल से और हर आए-गए से अपनी घड़ी को मिलाते रहते हैं। इस डर से आँख नहीं झपकाते कि सोते समय कहीं उनका डिब्बा न कट जाए और इंजन उन्हें जंगल-बियाबान में छोड़ कर खाली हाथ पिस्टन हिलाता हुआ लाहौर पहुँच जाए। एक दिन हमारे सामने जमादार अजमल खाँ को अपनी बेगम के नाम चिट्ठी दी कि अंदर की जेब में रख के ले जाओ और जनरल पोस्ट ऑफिस के लैटर बॉक्स में डाल आओ। वो पोस्ट कर के आया तो ये जिरह हुई।

'चिट्ठी डाल आए?'

'जी हाँ! डाल आया।'

'लैटर-बॉक्स के ताले को जोर से खींच कर देख लिया था कि ठीक से बंद है या नहीं?'

'मैं जोर-जोर से खींच रहा था कि एक डाकिए ने पकड़ लिया।'

'अबे! फॉरेन-मेल के डिब्बे में तो नहीं डाल आया? लैटर-बक्स के अंदर चारों उँगलियाँ डाल कर पोस्ट किया था?'

'यस सर! मैंने तो अँगूठा भी डाल दिया था।'

'लैटर-बक्स से कान लगा के लिफाफा गिरने की आवाज सुनी थी? या इस बार भी दूर से ही मस्ती करके आ गया?'

वो एक छोटे से बरसाती गाँव में पले-बड़े थे, जहाँ कदम-कदम पर साँप, बिच्छू और साझे बुजुर्ग काटने को दौड़ते थे। चुनाँचे अब भी ये हाल था कि सुबह जूते में इस डर से पाँव नहीं डालते थे कि साँप दुबका न बैठा हो और पैर डालते ही डस ले। इसलिए पहले हाथ डाल कर तसल्ली कर लेते थे। दफ्तर में बनी हुई चाय नहीं पीते थे कि कहीं कोई कुछ मिला न दे। मलबारी होटल से एक आने की कड़क सुलेमानी चाय मंगा कर दिन में तीन-चार बार तलब मिटा लेते थे। उसे चाय कहने में विनम्रता के अतिरिक्त देखने और सूँघने की इंद्रियों की दुर्बलता चाहिए थी। इसमें पोदीना, बड़ी इलायची, अजवायन, सफेद जीरा, लाहौरी नमक, केसर, तंबाकू के पत्ते पर पली हुई मक्खियों का शहद, नींबू, दार-चीनी, और केवड़ा तो हम भी पहचान लेते थे। सुनने में आया था कि अब्दुल्ला मलबारी इसमें दूध के बजाय पहलन (पंजाबी में पहली बार ब्याई हुई गाय या भैंस को कहते हैं) का खीस डाल कर अफीम या शिलाजीत की सलाई फेर देता है। जिसने एक बार उसके हाथ की चाय पी ली, हमेशा के लिए उसी का हो रहता है। यासूब साहब तो चाय को केतली से हल्क में उंडेल लेते थे। किसी हकीम को भनक नहीं पड़ी वरना इस नुस्खे से तो यूनानी बीमारियों का इलाज किया जा सकता था। बहुत-सी रूठी हुई, अटवाटी, खटवाटी लिए पड़ी हुई जवानियों को मनाया जा सकता था।

हमने शिकायत की कि हमें एक ही सूली पर लटके हुए चार महीने हो गए, दूसरे डिपार्टमेंट का जायका चखने की भी इजाजत मिलनी चाहिए। दूसरे दिन उन्होंने हमें रांगीवाड़ा में शेख शम्सुद्दीन एंड संस के चमड़े के गोदामों और कच्ची खालें कमाने के हौजों का मुआयना करने भेज दिया। हमें मालूम नहीं कि जहन्नुम में दूसरी यातनाओं के साथ बदबू की व्यवस्था भी होगी या नहीं लेकिन अगर हुई तो देख लीजिएगा कि यही होगी। तीन दिन तक हर चीज से वही सड़ांध आती रही। दिमाग में बस के रह गई। थोड़ी बहुत उस समय निकली जब हम मिर्चों के गोदाम का मुआयना करके दो दिन तक छींकते फिरे। ये बदबू, बकौल शायर, मिलने की हसरत की तरह निकलने को तो निकली, मगर जैसी निकलनी चाहिए थी, वैसी नहीं निकली।

पुराने विचारों की हयादार बीबियाँ हर मर्द का नाम ले सकती हैं, सिवाय अपने मियाँ के। अपने मर्द का नाम लेना बेहयाई में गिना जाता है। यासूबुल हसन गौरी भी किसी 'उन' अंग्रेज का नाम नहीं लेते थे। उनका जिक्र आते ही 'बड़ा साहब', 'बॉस' और 'चीफ' का घूँघट निकाल लेते थे। एंडरसन के कमरे से उल्टे पैरों निकलते। कभी पीठ नहीं करते थे, इसलिए आखिरी कदम तक मुँह-दर-मुँह डाँट खाते जाते। एंडरसन कभी अचानक आ निकले तो जलते हुए सिग्रेट का मुट्ठी में दम घोंट देते। नाक और मुट्ठी से देर तक धुँआ लीक होता रहता। वो गाली भी देता तो बिल्कुल इस तरह सुनते जैसे हिज मास्टर्स वाइस के रिकार्ड में दिखाया जाता है। कड़कड़ाते जाड़े में उसकी बात का जवाब केवल गर्दन के इशारे से देते थे। अंग्रेज के सामने मुँह से भाप निकलने का गुस्ताखी मानते थे। गरज ये कि अंग्रेजों का सम्मान करने में हद से गुजर जाते और उन्हें प्राकृतिक आवश्यकताओं से ऊपर समझते थे। ब्रिटेन की महारानी के बच्चा हो गया तो हफ़्तों शरमाए-शरमाए फिरे।

दुबारा ये घटना न दुहराई जाए : अगर किसी से गलती हो जाए और लंदन केबिल भेजने में एक डेढ़ घंटे की देरी के कारण बैंक पर एक दिन का ब्याज चढ़ जाए तो गलती करने वाले को वो राशि अपनी जेब से भरनी पड़ती थी। ब्रिटिश बैंकों में ये जुर्माना आम था। छुट्टी का नाम लेते ही -

भवें तनती हैं , खंजर हाथ में है , तन के बैठे हैं

वाली हालत हो जाती। हमें याद है जून का महीना, फ्री-इम्पोर्ट का जमाना था। काम अत्यधिक, आदमी कम। हम चार आदमियों के बराबर काम और आठ आदमियों के बराबर गलतियाँ बड़ी तेजी से कर रहे थे। एक मनहूस सुबह खबर आई कि टंडो-आदम में अखबार पढ़ते-पढ़ते अब्बा-जान को दिल का दौरा पड़ा और धरती ने अपनी अमानत वापस ले ली। हैदराबाद में उनके अंतिम संस्कार के लिए तीन दिन का आकस्मिक अवकाश लेने पर यासूबुल-हसन गौरी ने हमारा वेतन काट लिया, जो कुछ समय बाद एंडरसन ने इस वार्निंग के साथ वापस किया कि दुबारा ये घटना न दुहराई जाए। सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी भी ऐसा ही करता था। अगर कोई सवार लड़ाई के समय अनुपस्थित हो जाए तो सुल्तान उससे बीते तीन साल का वेतन धरवा लेता था। अहमद शाह दुर्रानी ने तो छोटे-से आदेश का उल्लंघन करने पर दो सौ सिपाहियों की मुश्कें बँधवा दीं। नाक में तीरों से छेद करके नकेलें डालीं और ऊँटों की तरह हाँक कर शुजाउद्दौला के पास भेज दिया कि चाहे मार डालो या सजा के तौर पर, माफ करके, इसी तरह दुश्मन से लड़ाओ।

हाथ की लकीरें बोलती हैं : हम रेवड़ में नए-नए आए थे। हर एक सींग मारता था -

की जिससे बात उसने हिदायत जुरूर की

यूँ तो सारे स्टाफ की खिड़कियाँ हमारे ही आँगन में खुलती थीं, लेकिन यासूबुल हसन गौरी का अँगूठा हमारे टेंटुवे पर ही रहता था। रोज-रोज के तानों, कोसनों से हमारा कलेजा छलनी हो गया था बल्कि छलनी में छेद भी हो गए थे। कुल सामूहिक आरोपों के अलावा हम पर एक आरोप ये भी था कि हमारे हस्ताक्षर उद्दंडता की हद तक लंबे हैं। इतनी छोटी तनख्वाह इतने बड़े हस्ताक्षरों की फिजूलखर्ची एफोर्ड नहीं कर सकती। यासूबुल हसन गौरी को एंडरसन दिन में कई बार तलब करता। कभी कुछ पूछता, कभी कुछ। अंदर जाने से पहले वो अपनी हथेली पर 'कॉपिंग' पेंसिल से तमाम संबंधित और असंबंधित आंकड़े नोट कर लेते, जिनके बारे में एंडरसन सवाल कर सकता था। जैसे ही वो सवाल करता यासूबुल हसन गौरी मुँह फेर कर अपनी हथेली के संबंधित हिस्से को जीभ से चाट कर अक्षरों को स्पष्ट करते और फटाक से सही गणना आने-पाई समेत बता देते। एक दिन हमने निवेदन किया, 'आप कागज पर लिख कर क्यों नहीं ले जाते?' बोले, 'आपको बैंक में आए जुमा-जुमा आठ दिन हुए हैं। आप अंग्रेजों के स्वभाव से परिचित नहीं। कागज पर रिपोर्ट करके ले जाऊँ तो वो ये समझेगा कि मेरी याददाश्त चली गई है। मैं बूढ़ा हो गया हूँ। अभी तक तो वो विलायती उल्लू समझता है कि मुझे सारे आंकड़े मुँह-जबानी याद हैं।'

इसके कुछ दिन बाद एंडरसन ने हमें बुलवाया और पूछा, 'नारायणगंज ब्रांच के बट्टेखाते-कर्जों की इकट्ठी रकम और गिनती क्या बनती है? सही-सही बताओ।

सही-सही तो एक तरफ, हम तो गलत जवाब देने की हालत में भी नहीं थे। हमें स्तंभित देखा तो कहने लगा, 'हरी आप! जल्दी से हथेली चाट कर बताओ।' उस दिन हमने देखा कि एंडरसन की मेज पर पीतल के भारी कामदार पेपरवेट की जगह प्लास्टिक के छह घटिया पेपरवेट रखे हैं। हमने जमादार अजमल खाँ से कहा कि पीतल के पेपरवेट अच्छे लगते थे, क्यों बदल दिए? कहने लगा, 'गौरी साहब बोलते हैं कि प्लास्टिक की चोट से सैप्टिक नहीं होती।'

क्या बियर हराम है : एक दिन जुमे की अजान के समय हमें बैंक में गप-शप करते देखा तो इशारे से एकांत में

यानी बाथरूम के दरवाजे तक ले गए और उपदेश दिया कि नमाज पढ़ा करो। इससे ध्यान गबन की तरफ नहीं जाता, बशर्ते पाँचों-समय पढ़ी जाए।

इतवार की सुबह को हजरत गुलाम अहमद का प्रवचन सुनने जाते। दो-तीन बार हमें भी ले गए। पर तबीयत इधर नहीं आई। फिलासफी और शेरों की मारों से भरे प्रवचन पर हमें अपने गद्य का संदेह होने लगा। ये तो ऐसा ही था कि कोई रूलर स्केट पहन कर सिजदा करने की कोशिश करे। रहे अबुल कलाम आजाद, सो वो अपने अहंकार के डँसे हुए थे। इस्लाम में अगर सिजदा करने की अनुमति होती तो वो अपने-आप को सिजदा करते। यासूबुल हसन गौरी कहते थे कि धर्मात्मा लोगों के संग-साथ से रूह का सारा जंग उतर जाता है; अलबत्ता दिल पर जो फफूंदी लग गई थी, उसे इतवार के तीसरे पहर बियर से रगड़-रगड़ कर धोते थे। एक डॉक्टर ने कहा था कि तुम्हारे गुर्दे में जो पथरियाँ हैं, वो इस साप्ताहिक कृत्य से फ्लश हो जाएँगी। अक्सर कहते कि यूँ भी बियर को कठमुल्लों ने ख्वामख्वाह हराम कर रखा है। ईरान में तो इसे जौ का पानी कहते हैं।

खुदा जाने कहाँ तक सही है, दुश्मनों ने उड़ाई थी कि मार्शल अय्यूब खाँ के पतझड़-काल में सरकारी मुफ्ती-ए-आजम डॉक्टर फजलुर्रहमान ने, जो हीगल यूनिवर्सिटी से धर्मज्ञान की डिग्री लाए थे, यह फतवा दे दिया कि बियर में केवल 5 प्रतिशत अल्कोहल और 95 प्रतिशत पानी होता है। इसका पीना हलाल है। इसी किस्म के दो-तीन फितूर-भरे फतवों के बदले में उन्हें देश-निकाला दे कर दस गुने वेतन पर अमरीका भेज दिया गया। अगर डॉक्टर साहब जरा-सी समझ और साइंस से काम लेते तो फत्वे में समझदारों को इतना-सा इशारा कर देते कि बियर 95 प्रतिशत हलाल है।

न करे है न डरे है : गबन, अमानत में खयानत और जाली नोट और हस्ताक्षर करने के जितने भारी सश्रम और अश्रम दंड थे, उनसे संबंधित सारे नियम-विधान हमें सामने बिठा कर कंठस्थ करा दिए। चार-पाँच पाठों के बाद हम इतने कुशाग्र हो गए कि अपना हर काम किसी-न-किसी धारा के अंतर्गत दिखाई देने लगा। हर क्षण कानून के लंबे हाथ का बोझ अपने कंधे पर महसूस करते-करते हमारी चाल में अंतर आ गया। फिर एक दिन ध्यान आया कि हमारे और गबन के बीच में तो कई मजबूत तिजोरियाँ और हमसे भी अधिक बदनीयत अफसर खड़े हैं, तो फिर डर काहे का। मुगल-साम्राज्य के शुरूआती काल के शायर नूरी ने भी इसी प्रकार की निर्भयता प्रकट की है, हालाँकि उसने तो खुद को ईमानदार साबित करने के लिए किसी बैंक में नौकरी भी नहीं की।

बीमारी इस इलाज से बेहतर है : अक्सर कहते कि चिंतन से मेरे गुर्दे में पथरियाँ हो गई हैं। खान सैफुल मलूक खान की सोच थी कि पथरियों की तादाद उनके दिए हुए बट्टे-खाते, कर्जों के बराबर है। उन्हें निकालने के लिए हर पंद्रह मिनट बाद एक गिलास पानी पीते और उसकी एक लकीर अपने सिग्रेट के पैकेट पर खींच देते। शाम को खाली पैकिट जमा करते और उन पर लगाए हुए निशानों को जोड़ कर यह देखते कि आज कितने गिलास पानी पिया है। फिर facit मशीन पर गिलासों के गैलन और गैलन के पैकेट बना कर देखते कि बाकी पथरियों को निकालने के लिए कितने पैकेट और फूँकने पड़ेंगे।

बला के वहमी थे। मिजाज पूछो तो जवाब नहीं देते थे, कराहने लगते थे। इस क्रिया से निवृत्त होते तो 'अलहम्दुल्लिाह या खुदा का शुक्र है-इस तरह से कहते मानो अपनी आस्था सुदृढ़ करने का ढिंढोरा उद्देश्य है, चैन

कहाँ है। चालीस साल से अपने जीवन से मायूस थे। एंडरसन के जोर देने पर एक बार डॉक्टर सिमकॉक्स से भी संपर्क किया था। उन्हीं का बयान है कि मेरा हाल देख कर डॉक्टर सिमकॉक्स की नब्जें छूट गईं। अपने पलंग की पांयती एक आदम कद Anotomy Chart खड़ा कर रखा था। दिन में शरीर के किसी न किसी हिस्से में दर्द जुरूर होता, कहीं-न-कहीं टीस जुरूर उठती। शाम को शीशे के सामने खड़े हो कर मुँह से मुँह, हड्डी से हड्डी, गुर्दे से गुर्दा और रग से रग मिला कर तसल्ली करते आज कौन से अंग पर फालिज गिरा। फिर उसका इलाज कश्मीर होटल के भुने गोश्त और बिरयानी से करते थे, जिसमें बराबर के बादाम पड़े होते थे।

हमने तो उन्हें अपनी तनख्वाह और तंदुरुस्ती की तरफ से हमेशा चिंतित ही देखा। एक साल पहले उनके चचाजान सो कर उठे तो पता लगा कि लकवा मार गया है। ऊपर का होंठ टेढ़ा हो गया। चचाजान पर इन हमलों से उनकी अपनी तबियत पर ऐसा लकवा पड़ा कि सुबह आँख खुलते ही आइने में अपना ऊपर का होंठ ऊपर जुरूर कर लेते थे और नलके के नीचे नहाने से पहले घुटने पर डॉक्टर की तरह छोटी-सी हथौड़ी मार Relflexes देख लेते थे कि रात लकवा पड़ा कि नहीं। बाथरूम की अंदर की चटखनी भी नहीं लगाते थे कि लाश निकालने में आसानी रहे। ये थे हमारे पहले शिक्षक।

डीसूजा की कैंची : उस जमाने में न कोई ट्रेनिंग होती थी, न लेक्चरों का बखेड़ा। नया आया व्यक्ति घुस-पैठ कर खुद कुछ सीख ले तो सीख ले, वरना कोई कुछ बात कर नहीं देता था। केवल ये हिदायत थी कि हर बात 'आब्जर्व' करते रहो। बस देखते चले जाओ। नए रंगरूट पर पुरानों को छोड़ दिया जाता था। जैसे एक जमाने में रोम में सच और झूठ का फैसला भूखे शेर किया करते थे, जिन्हें ईसाइयों पर छोड़ दिया जाता था। शेर वैजिटेरियन न थे। जनता तालियाँ बजा-बजा कर सच यानी शेर की जीत पर प्रसन्नता प्रकट करती थी।

बैंक अपने तार और केबिल गुप्त 'कोड' में भेजते हैं। इसका लाभ ये है कि जिनको बैंक के साथ फ्राड करना हो उन्हें पहले उसका कोड चुराना पड़े। यह कोड इतनी भारी-भरकम होती है जितनी आम डिक्शनरी। डीसूजा पच्चीस साल से सादा अंग्रेजी को पैटरसन कोड में बदलने और उस आमलेट से दोबारा अंडा बनाने पर तैनात था। सारी कोड रट गई थी और बिना देखे अनुवाद कर लेता था। अकेला पाँच आदमियों के बराबर काम करता था। उसके जिम्मे हमें इस पिशाच भाषा में तार बनाना सिखाना था। झक्की था। सुनने में आया था कि पंद्रह साल पहले उसे एक ग्वानीज टाइपिस्ट से इश्क हो गया था, लेकिन वो एक हिंदू व्यापारी से शादी करके हाँगकांग चली गई। उस दिन से उसका यही हाल था। अवकाश के समय अपनी महबूबा के नाम 'पैटरसन कोड' में एक्सप्रेस तार ड्राफ्ट करता और फाड़ता रहता। कोई पास जाता तो तार को हाथ से ढांक कर कहता, क्या तुम्हारी माँ बहनें नहीं।

बड़ी-बड़ी आँखों में, जो उबली पड़ी थीं, जागते रहने के कारण लाल डोरे। सिर आगे से गोल-पीछे से चपटा, गेहुँआ रंग, चेहरे पे स्थाई पागलपन। रात को दो घंटे से अधिक नहीं सोता था। दफ्तर आते ही अपना काला कोट, जिसका कॉलर रोज प्रेस करने से चमकने लगा था, कुर्सी पर टाँग देता। नजर इतनी कमजोर कि जब तक हमारा चेहरा उसकी आँख के ढेले से तीन इंच के फासले पे न हों हमें नहीं पहचान पाता था। इतनी दूरी से हमारे सिर में पड़े हुए गार्डीनिया तेल की खुशबू से हमें फौन पहचान लेता था। चश्मे की कसम थी। सुबह 8.30 बजे रजिस्टर पर सिर टिकाता तो छह बजे उठाता था। कभी कोई झूठों भी छेड़ देता तो दफ्तर में भूचाल आ जाता। मार-पिटाई के बाद वो बाएँ हाथ पर कोट डाल कर चीफ एकाउन्टेंट के सामने जा खड़ा होता। दाएँ हाथ से अपने सोला हैट को छूता। दोहरा हो कर Bow करता और बिना कुछ कहे-सुने दरवाजे से गोली की तरह निकल जाता। इसका मतलब यह

होता कि उसने वहीं और उसी समय त्यागपत्र दे दिया है, कल से बैंक नहीं आएगा। शाम को दो-तीन वाचाल अफसर उसे मनाने घर जाते और मिन्नतें करके दूसरे दिन आने के लिए तैय्यार करते। जून-जुलाई में भी कंबल ओढ़ कर सोता। कहता था, कंबल न ओढूँ तो डरावने सपने दिखाई देते हैं। दफ्तर में जहाँ बैठता वहाँ पँखा नहीं चलने देता था। कहता था पँखा चलने से मुझे खूनी बवासीर हो जाती है। उससे बैंकिंग के राज जानना ऐसा ही था जैसे किसी खूंखार कुत्ते के जबड़े में दबी हुई नली से गूदा निकालना।

डीसूजा की सेहत ईष्या करने की सीमा तक अच्छी थी। किसी ने उससे पूछा कि तुम्हारे स्वास्थ्य का क्या रहस्य है तो उसने जवाब दिया मैं कभी चित्त नहीं सोता, पच्चीस साल से कोई छुट्टी नहीं ली। एक दिन वो अचानक गैरहाजिर हो गया। दूसरे दिन उसके घर एक अफसर भेजा तो वो खबर लाया कि डीसूजा पुलिस थाना परेडी स्ट्रीट की हवालात में बंद, जहाजी साइज की गालियाँ बक रहा है। उसके बाप की समरस्ट स्ट्रीट में टेलरिंग की बड़ी पुरानी दुकान थी। किसी बात पर बाप से झगड़ा हो गया और उसने जहाजी साइज की कैंची उसके कूल्हे में घोंप दी। नौ टाँकें आए।

इस घटना से बैंक में घबराहट फैल गई। लोग उसके दाएँ बाएँ दो-दो कुर्सियाँ छोड़ कर बैठने लगे। डिस्पैच डिपार्टमेंट ने अपनी कैंची कैश-बॉक्स में ताला लगा कर रख दी। दूसरी तरह की कैचियाँ भी तालू से लग गईं। बड़े-बड़े अफसर कमर पर पीछे हाथ बाँध कर चलने लगे। डीसूजा को पेंसिल की नोक भी तेज करते देखते तो काँप उठते। एक दिन चार-पाँच क्लर्क हमारे नेतृत्व में चीफ एकांउटेंट के सामने परिवेदन की सूरत में प्रस्तुत हुए और आर्तनाद किया कि दो-तीन दिन से डीसूजा के सामने एक सात इंच गहरा घुसने वाला पेपर नाइफ पड़ा है, जिससे वो खेलता रहता है। हमें टाँके लगवाने से डर लगता है। चीफ एकाउंटेंट ने डीसूजा को बुलवा कर नर्मी से समझाया कि तुम चाकू वापस कर दो। इन बिचारों को डर लगता है।

कहने लगा, 'यह साला लोग काए को बूम मारता है, बेफुजूल डरता पड़ा है। ये मेरा फादर थोड़ा ही है।'

इबादुर्रहमान कालिब : पाकिस्तान माइग्रेट करने से पहले न जाने क्यों ये सोच थी कि Promoissed land में हर शख्स कबाब-परांठा खाता होगा। दालें और सब्जियाँ केवल हिंदुस्तान को याद करने के लिए उगाई जाती होंगी। नाई, सारंगिए और फ्रीस्टाइल कुश्ती लड़ने वाले भी दाढ़ी रखते होंगे। बाजारों में हर कदम पर हमारे संयम की परीक्षा लेने के लिए इतने सारे हसीन न छोड़ रखे होंगे। हर शख्स ईंट का जवाब शेर से देता होगा। ईश्वर की कृपा से ये आशंकाएँ गलत साबित हुईं। अलबत्ता ये देख कर कुछ मायूसी हुई कि बैंक में सब सूट या कमीज पतलून पहनते हैं, सिवाय इबादुर्रहमान कालिब के, जो हमेशा टसर की शेरवानी पहनते और उसकी ऊपर की जेब में फाउंटेन पैन की तरह दातौन लगाते, जिसका सक्रिय सिरा बाहर निकला रहता था। निचली जेब में शायरी की डायरी और पान की डिबिया, डिबिया में पानों के ऊपर चमेली के तीन फूल। उन्होंने हमें करोड़पतियों के करेंट एकाउंट की झलकियाँ दिखाईं। हम देख कर दंग रह गए कि कव्वे की तरह काला 'क्रेडिट बैलेंस' किस तरह धीरे-धीरे सुरमई होता है और फिर लाल चहचहा हो जाता है। मुन्ने-मुन्ने सेविंग डिपाजिट से बड़े-बड़े ओवर ड्राफ्ट बनते हैं और उनसे बड़े-बड़े कारखाने, जो उन्हीं ओवर ड्राफ्ट देने वालों को नौकर रख लेते हैं। इबादुर्रहमान कालिब अखबार बड़े ध्यान से पढ़ते थे। जहाँ कहीं बुरी खबर नजर आ जाए, टाँक लेते थे। अक्सर कहते देखा मेरी आशंका ठीक साबित हुई। दिन भर अखबार की जुएँ बीनते रहते। शाम तक, कभी किसी अच्छी खबर पर नजर पड़ जाए तो दूसरे दिन तक कुढ़े रहते। एक दिन बहुत ही खतरनाक सूरत बनाए बैठे थे, पूछा क्या बात है? ठंडी आह के बाद

बोले 'मेरे रिटायरमैंट में कुल बाईस साल बचे हैं, कच्चा साथ है।' उस जमाने में बैंक का अधिकतर स्टाफ गुजराती बोलता था। मुख्य पदों पर गुजराती बोलने वाले नियुक्त थे जिसका उर्दू बोलने वालों के बारे में विचार था कि इन्होंने शेरो-शायरी के लिए बिल्कुल सही तबियत पाई है, लेकिन कैश और इनके काव्योन्मुख मस्तिष्क के बीच एक सावधानी का गैप जुरूरी है। इबादुर्रहमान कालिब इस पर बहुत कुढ़ते थे। शेरो-शायरी पर तानेबाजी के विरोध में वो एक विस्तृत महाकाव्य लिख रहे थे, जिसका केंद्रीय विचार दांते के नर्क से और केंद्रीय चरित्र बैंक से लिए गए थे। इस महाकाव्य में फरिश्ते फारसी में, आदम उर्दू में, हव्वा रेख्ती (शायरी की स्त्रैण शैली) में बात करते थे।

सुनने में आया था कि कालिब साहब के स्वर्गीय पिता भी शायर थे और अपने सामने किसी को कुछ नहीं समझते थे। चुनांचे मरते वक्त भी अपना ही एक मक्ता जबान पर जारी था। कालिब उपनाम रखने के पीछे नजरों से छुपा हुआ तो यही कारण मालूम होता है कि गालिब के मक्तों में बगैर रंदा मारे या पच्चर ठोके फिट हो जाता है। बैंकों में शेर और साहित्य का स्तर तो आप जानते ही हैं, गालिब के शेर अपने बता कर असाहित्यिक लोगों से दाद लेते रहे। मुजीब साहब भी अक्सर यही करते थे। एक दिन कालिब साहब ने अपना एक शेर सुनाया जो एक हफ्ते पहले मुजीब साहब और एक सदी पहले गालिब अपना कह कर सुना चुके थे। हमने अकेले में ध्यान दिलाया तो बिना भौं सिकोड़े, शर्मिंदा हुए स्वीकार कर लिया कि चोरी करने में खयाल टकरा गया है।

वो नीम कहाँ से लाएँ : इबादुर्रहमान कालिब बुलंदशहरी सुम टोंकी, टोंक की म्यूनिस्पिल कमेटी में क्लर्क थे। वेतन 30 रुपए चिनोर शाही के जिसके बीस रुपए कलदार बनते हैं मगर ये नशा क्या कम था कि उनकी मर्जी के बिना कोई कुत्ता टोंक में भौंक नहीं सकता था, न कोई परनाला उनकी मंशा के बगैर गलत जगह गिर सकता था। अपनी त्यागी हुई हवेली से अधिक उस नीम को याद करते थे जिसे आँगन में सिर झुकाए अकेला छोड़ आए थे। कहते थे, मकान के बदले मुझे मकान एलाट हो गया लेकिन सरकार वो नीम कहाँ से लाएगी जिसकी छाँव में नींद की परियाँ झूला झुलाती थीं, जिसके नीचे एक बच्चे ने निंबोलियों की दुकान लगाई थी। जहाँ बहनें गुड्डे-गुड़िया खेलीं, शादी की शहनाई बजी, बाप का जनाजा रखा गया फिर उसी बूढ़े नीम की सींक उदास माँ ने कानों में पहन ली। कहा जाता है, औरंगजेब को जब यह सूचना दी गई कि कश्मीर की ऐतिहासिक मस्जिद में आग लग गई है तो उसने कहा मस्जिद तो दुबारा बन जाएगी लेकिन मस्जिद के आँगन में लगे चिनार जल गए तो एक हजार औरंगजेब मिल कर भी एक बूढ़ा चिनार पैदा नहीं कर सकते।

अब उन्हें कौन बताता कि यादों के ऐसे बूढ़े नीम तो हर गाँव, हर दिल के आँगन में छाँव देते हैं। हाँ जब दिल की आशा बुझ जाए तो उनकी जड़ें नसों-नाड़ियों की जगह ले लेती हैं।

क्या वो भी बुलनशय का है : जब तक टोंक में रहे बुलनशै (बुलंदशहर का वो इसी तरह उच्चारण करते थे) के गुण गाते रहे। कराची को अपने आराम की नगरी बनाने के बाद भी उस गलियों से नहीं निकले जहाँ जवानी खोई थी। कहीं किसी भले आदमी की तारीफ हो रही हो तो फौरन पूछते थे। क्या वो भी बुलनशै का है?

कभी कोई लाहौर के मोतिया, चिनाब रूप या कराची की सुहानी-सलोनी शाम की तारीफ कर दे तो मुकाबले पर फौरन बनारस की सुबह, बदायूँ के पेड़े, टोंक के खरबूजे और वहीं की बुरका पहने पठानियों को खड़ा कर देते। बनास नदी के किनारे गलोंद घाट के उन फालेजों (तरबूज-ककड़ी के खेत) को याद करते, जहाँ चाँदनी रातों में

लोंग के लश्कारे से लहू में शरारे नाचने लगते थे। छोलदारियों के सामने दफ और दायरे पर उन्माद भरे 'चार बैत' गाते-गाते जरा सी बात पर पिंडारी खानजादों और कायमखानी पठानों के सान चढ़े खंजर और जड़ाऊ पेशकब्ज लहराने लगते। अरमान भरे सीने उनकी मियान बन जाते और खून में नहाए हुए बदन उसी रेत पर तड़प-तड़प कर ठंडे होते जहाँ केवड़े में बसी हुई लाल साफी से ढकी हई, पानी की आदमकद गोल ठंडी होने के लिए नदी की रेत में गले-गले तक गड़ी होती थी। बनास की लहरें रोज यही दृश्य देखती थीं। पिछले पहर तक जवासे की बाड़, बेला के गजरे, ताजा खून, लू में पके हुए खरबूजे, खस की पँखियाँ, मेंहदी रचे हाथों की नमी, सोंधे छिड़काव, कोरी ठिलिया और कोरे बदन की महकार से हवाएँ दीवानी हो जातीं और रात चाँद का झूमर उतार देती।

हर शाख पे पंछी बैठा है : बनास नदी बहती रहती और वो लहरों-लहरों बुलन शै पहुँच जाते। कहाँ बुलन शै कहाँ कराची, बुलन शै की क्या बात है। 'इक तीर तूने मारा जिगर में कि हाय-हाय'। ऊपर कोट पे बरसात की बहारें, क्या कहने! रिम झिम रिम झिम मेंह बरस रिया है। नद्दी, नाले और पाँयचे चढ़े हुए हैं। नंगी खुली हालियत में कोई याँ पे रपट रई है, कोई वाँ रपट रई है। कच्ची-कच्ची अंबिया पे रुम-झुम पानी बरस रिया है कोयल कूक रई है, दिल में हूक-सी उठ रई है। अंबुवा की डाली पे झूला पड़ा हुआ है। बहू-बेटियाँ कमर लचका-लचका के गा रई हैं। 'छा रही काली घटा जियरा मोरा लहराए है' सहेलियाँ झोंटे दे रही हैं। कासनी रूपट्टे उड़ते जा रिए हैं, हराम के जने लम्डे विन को हरियान कर रिए हैं। बुलबुलें चहचहा रई हैं, मेनाएँ चहक रई हैं। दूसरी डाल पे मोर बोल रिया है। विस की जुरवा अलग एक टहने पे मस्ता रई है, तीसरी डाल पे शामा ऐसा जी तोड़ के गा रई है मानो जी-जान से गुजर जाएगी, चौथी पे क्या नाम विसका, पापी पपय्या पी ऊ! पी ऊ! कर रिया है।'

पी ऊ! पी ऊ! पर खान सैफुल मलूक खान के सब्र का पैमाना एक दिन भर गया। वही स्टाइल बना कर बोले, 'अमां बस करो, साला आम का पेड़ न हुआ, शहर किरांची हो गिया कि दुनिया जहान का जिनावर अपनी-अपनी बोली बोले चला जा रिया है और खुदा की कसम उड़ने का नाम नई ले रिया।'

फुटकर आदमी : हर बैंक का अपना एक खोजबीन डिपार्टमेंट होता है जिसका काम कमोबेश वही होता है जो पुराने समय में शादी-ब्याह के मौके पर नायनों और मुगलानियों का होता था यानी चाल-चलन वगैरा की पूरी छानबीन करके गलत फैसला करना...! संबंधित पक्ष की कौन सी पीढ़ी में गड़बड़ है? दूल्हा की बाईं आँख दबी हुई है, इसका कारण मामूली लकवा है या चाल-चलन की स्थाई खराबी? दुल्हन की ननिहाल बुरके से कब बाहर निकली? नई कोठी की नींव में सीमेंट, सरिए, बजरी और ब्लैक का अनुपात चलन के मुताबिक है या घट-बढ़ की है? अगर कर्जदार नहीं है तो कारण बताओ? क्या लोग भरोसा नहीं करते? खानदान खालिस है या परदादा पानदान उठाते थे। आदमी ईमानदार, शरीफ और सौ परसेंट भरोसे के लायक है या नहीं? मतलब ये कि इन्कमटैक्स के अलावा किसी और को तो धोखा नहीं देता? अचानक रुई की कीमत गिरने से उसकी रुई तो आग नहीं पकड़ती? हार्टअटैक न होने का कारण कहीं ये तो नहीं कि घाटे-फायदे का हिसाब ही नहीं करता? आफिस से सीधा जिमखाना जाता है या घर घुसता है? कौन से दिवाले के बाद नाम से पहले हाजी लिखना शुरू किया? ये सारा विभाग हसन अहमद फारूकी के अकेले व्यक्तित्व पर आधारित था जो स्वयं अपने बॉस थे और अपने ही मातहत।

हमने उनकी शागिर्दी पकड़ी तो कहने लगे बर्खुरदार तुम जिस तेजी और अनमनेपन से काम कर रहे हो, उस पर तो आत्महत्या की असफल कोशिश का सा भ्रम होता है। आत्महत्या की और भी तरकीबें हैं जिनमें इतनी मेहनत

नहीं पड़ती। हमें वो बातूनी, निश्चिंत, आसानी से घुल-मिल जाने वाले फुटकर आदमी लगे। शनीचर को तीसरे पहर शतरंज खेलने बैठते तो इतवार की रात को दो बजे उठते। पान की लत ऐसी कि रात को भी कल्ले में दबा के सोते। दिल्ली के रोड़े थे। उन्हें हमारे दिमाग से अधिक जबान की फिक्र खाए जाती थी। हर एक के स्टाइल, चाल और Mannerism की बड़ी अच्छी नकल उतारते थे। कोई लखनऊ जाता तो उससे असगर अली मुहम्मद अली के इत्र शमामातुलंबर की फर्माइश जुरूर करते, बेगम को बहुत पसंद था।

बाँस बुद्धि : हमारे सामने की बात है, एक आमतौर पर होने वाली घटना.... मौत... ने फारूकी साहब की सारी जिंदगी एक झटके में खत्म कर दी। उनके एक साथी और हमउम्र को उनके साथ शतरंज खेलते हुए अचानक सीने में दर्द महसूस हुआ और देखते-देखते उनके हाथों में दम तोड़ दिया। उसे दफ्ना कर लौटे तो शतरंज का दूसरा खिलाड़ी भी मर चुका था। फिराक गोरखपुरी कहते हैं कि बुद्धि के तीन प्रकार होते हैं : घड़ा बुद्धि, नमदा बुद्धि, बाँस बुद्धि! घड़ा बुद्धि वो कि चिकने घड़े पर कितना ही पानी डालो-वही सूखे का सूखा, नमदा बुद्धि-नमदे के समान, जब तक सूई नमदे के अंदर है, छेद बना हुआ है। सूई निकली और जैसे कुछ था ही नहीं और सबसे उत्तम बुद्धि, बाँस-बुद्धि कि ऊपर एक जरा चोट पड़ी और बाँस नीचे तक चिरता चला गया, सो उनकी छाती फट चुकी थी।

अय्याशी से तौबा : कई दिन गुम-सुम रहे, फिर एक दिन सुना कि सहवन-शरीफ के एक बुजुर्ग से दीक्षा ले ली है। उसके बाद ब्लेड को गाल से न लगने दिया। बड़ी भरवाँ दाढ़ी निकली, ऐसी ही दाढ़ी को देख कर डॉक्टर सलीमुज्ज माँ सिद्दीकी ने कहा था कि साहब! आप तो कयामत के दिन भीड़-भड़क्के में अपनी दाढ़ी के छप्पर तले छुप जाएँगे, मैं खुदा को अपना नंगा मुँह कैसे दिखाऊँगा। पीर साहब कभी-कभी कराची आते तो शुक्रवार और इतवार को शाम के वक्त मंघू-पीर की तरफ सफेद घोड़ी पर सैर को निकलते। ये रकाब थामे साथ-साथ चलते। उन्हीं का बयान है कि हजरत जितनी देर घोड़ी पर सवार रहते हैं, लीद में से शमामातुलअंबर (इत्र) की खुशबू आती है। कुटिया में तहज्जुद (आधी रात की नमाज जो सामान्य पाँच वक्त की नमाज के अतिरिक्त है) से पहले बबर शेर अपनी दुम से झाड़ू देता है। हमने टोका, 'बबर शेर तो अफ्रीका के जंगलों में होता है।' बोले, 'यह मैंने कब कहा कि मंघूपीर की पहाड़ियों से आता है? अपनी तरफ से आप बात खूब जोड़ते हैं।' हमें भी नेक रहने और सुधर जाने का उपदेश करते रहते थे। हमें इसका बड़ा मलाल था कि खुदा ने हमें बुराई की क्षमता दी होती तो आज हम भी उससे तौबा करके पुण्य लूटते। अभी तक याद है, जाड़ों के दिन थे। रात के बारह बजा चाहते थे। हम मय अपने चार बच्चों और बीबी के पीर इलाही बख्श कॉलोनी के क्वार्टर के छोटे से कमरे में फर्श पर दियासलाइयों की तरह एक तरफ सिर किए पड़े थे कि किसी ने घर के सामने हैदराबादी अंदाज से ताली बजाई। आँख मलते हुए बाहर निकले तो देखा कि फारूकी साहब सिर पर रुई का टोपा पहने, हाथ में लालटेन लिए खड़े हैं। उनके दाँत और घुटने बज रहे थे। घबराहट में हम भी मलमल का फटा कुर्ता पहने, नंगे पैर बिस्तर से निकल आए थे। बहुतेरा हाथ से जबड़े को थामा लेकिन दाँत थे कि उस उपकरण की तरह, कट-कट, कट-कट 'मार्स कोड' में बजे चले जा रहे थे, जो टेलीग्राफ आफिस में तार देने के लिए प्रयोग होता है। सादा जबान में सलाम और कलाम का सवाल ही पैदा नहीं होता था। देर तक दोनों सामने खड़े मुहब्बत में दाँत किटकिटाते रहे। हमारे अधिकार में एक ही कमरा था। इसलिए हम उन्हें अंदर आने को भी नहीं कह सकते थे, लेकिन वो भी जल्दी में थे। उन्होंने हमें बहुत अपनेपन से दाढ़ी से लगाया, दोनों बड़ी देर तक एक-दूसरे से चिपटे रहे। इसका मुहब्बत से अधिक ठंड कारण थी। वो अपनी शलवार और हम अपने पाजामे में थर-थर काँप रहे थे। बार-बार हाथ मिलाने और गले लगाने के बाद शब्द पिघले तो उन्होंने छूटते

ही हमें शराब और व्यभिचार से दूर रहने का उपदेश दिया। हमने नंगे पैर, फटे कुर्ते के नीचे धड़कते दिल पर ठिठुरा हुआ हाथ रखकर रईसाना जीवन और अय्याशी से परहेज और परहेजी जीवन बिताने का वायदा किया और निवेदन किया कि हजरत! आपने रात गए बड़ी तकलीफ उठाई। जवाब में उन्होंने अपने ठंडे बर्फ हाथ को, दोनों तरफ से, हमारी गुद्दी पर इस तरह गर्म करते हुए जिस तरह नाई उस्तरे को चिमोटे पर चलाता है, कहा कि उन्होंने अपने पीर साहब के सामने कुरआन का अनुवाद उठा कर कसम ली है कि रोजाना कम से कम सात आदमियों को शराब और व्यभिचार से दूर रहने का उपदेश करेंगे। इंशा की नमाज के बाद अपने 'राउंड' पर निकले हुए थे। आज की रात हम चौथे आदमी थे मगर उनकी लालटेन में अभी काफी तेल बाकी था और बत्ती खासी लंबी थी। विदा के समय कुछ देर मौन रहे, फिर बोले कि हमारे शेख का कहना है कि जाड़े और बुढ़ापे को जितना अधिक महसूस करो उतना ही लगता चला जाता है। पीर साहब 104 साल के थे। 40 हज कर आए थे। बाल काले होते जा रहे थे।

वो पौ फटी वो किरन से किरन में आग लगी : सीधे स्वभाव, अधिक संतान वाले आदमी थे। इस मोड़ पे ये तय करना मुश्किल था कि उनके यहाँ हाथ की तंगी पहले आई या औलाद। हर दूसरे-तीसरे महीने हमें अपने घर ले जाते जो बरनस रोड पर गुंजान इलाके में अदीब सहारनपुरी के फ्लैट के पास था। रास्ते में अदीब को साथ ले लेते। चाय, शायरी और स्कैंडल का दौर चलता। इसके बाद तीनों कबाब खाने निकल पड़ते। अदीब की उम्र उस समय चालीस के लगभग होगी। अपने बड़े भाई के साथ रहते थे और भाभी से इस कदर डरते थे कि कभी अपने फ्लैट में गंदे लतीफे और अपने शेर नहीं सुनाते थे। और न वहाँ बेगम... के किस्से सुनाते थे। वो उनकी शायरी उन्हीं के तरन्नुम में इस तरह पढ़तीं कि जब खुद अदीब यही गजल पढ़ते तो अस्ल नक्ल मालूम पड़ती। आँखें बंद करके लहक कर पढ़ते थे। कई हसीनों के बाल घुँघराले होते हैं, उनकी आवाज घुँघराली थी। रसीली और उम्मीद भरी तान में न जाने दर्द की गूँज कहाँ से आती थी जैसे हँसते-हँसते आँखों में आँसू डबडबा आएँ और चेहरा हँसता रह जाए। ये मुस्कुराहट -

वो पौ फटी , वो किरन से किरन में आग लगी

के लहरे के साथ उभरती और 'ऐ मेरी उम्रे-रवां! जरा आहिस्ता' और जरा आहिस्ता! और जरा आहिस्ता' में खो जाती।

अदीब बड़े मीठे और मुलायम लहजे में बात करते थे। निजी महफिलों में देखा कि चुटकुले के पहले ही वाक्य पे अपनी जगह छोड़ कर चुटकुला सुनाने वाले के हाथ पे हाथ मार के, दाद इस तरह दे के आते जैसे रेस में पिस्तौल चलने से पहले ही कई बेसब्रे दौड़ पड़ते हैं और वापस बुलाए जाते हैं। फिर सबके साथ उसी जोश में दौड़ते हैं। एक बार एक प्रशंसक ने आस्था के आवेश में एक दूसरे शायर की उसी जमीन में कही हुई गजल को बेहतर बताया। उस शायर का अदीब बहुत सम्मान करते थे। कहने लगे ये सब उन्हीं की कृपा है। फिर उन्होंने जिगर मुरादाबादी का किस्सा सुनाया कि उन्होंने अपने भतीजे को गोद ले लिया था। एक दिन वो उनके कंधे पर बैठ कर कहने लगा कि अब्बा! मैं आपसे बड़ा हूँ। जिगर साहब ने कहा बेटा! तुम ठीक कहते हो तुम्हारी इस बड़ाई में मेरे जिस्म की लंबाई भी शामिल है।

टाट का एक थैला जिसमें शायरी की डायरी, चश्मा, तीन-चार किताबें, मैगजीन, पैन, डायरी और छोटा सा कटोरदान हमेशा हाथ में रहता। गले मिलने से पहले उसे अपनी और दूसरे शख्स की टाँगों के बीच में रख देते।

एक लाइब्रेरी में नौकर थे। तन्ख्वाह छोटी। छोटे-छोटे बच्चों का साथ जिनके ये बाप भी थे और माँ भी। बीबी की मौत को कई साल बीत चुके थे। कभी कोई दूसरी शादी का मशवरा देता तो कहते बिजली एक ही जगह दोबारा नहीं गिरा करती। कभी उन्हें उदास नहीं पाया। शाम को किसी न किसी के साथ Snakes and Ladders खेलते और अपनी हार पे कहकहे लगाते ही देखा। टोकते ही हमारे साथ हो लेते, साथी साँप पीटता ही रह जाता।

तेजी कैसे मारी जाती है : गर्म चाय, ताजा गजल और तेज चूने के पान से स्वागत करने के बाद फारूकी साहब दिल्ली के कबाबिये की दुकान पर ले जाते और गोले के कबाब खिलाते। पेट भरने से पहले आँखें भर आती थीं। पहली बार दुकान पर ले गए, तो दिल्ली की कल्चर और कीमे की बारीकियों पर रोशनी डालते हुए कबाब खाने की तहजीब इतनी विस्तार से समझाई कि हम जैसे मारवाड़ी रांगड़ की समझ में भी आ गया कि सल्तनत हाथ से कैसे निकली। दिल्ली के कबाबियों का क्या कहना। बिल्कुल वही तेजाबी मसाले जो बहादुर शाह जफर के जमाने में थे, वही शाही बावर्चियों की तरकीबें सीना-ब-सीना चली आती हैं और वही बीमारियाँ पेट-ब-पेट। हालाँकि अब न वो तगड़े गोश्त हैं न वो कद्रदान। कचरी और पपीते की ऐसी गलावट लगाते हैं कि मोटे से मोटा गोश्त पल भर में सुरमा हो जाए। यूँ तो दुनिया में पीठ पीछे की बुराई से अधिक जल्दी हज्म हो जाने वाली कोई चीज नहीं, लेकिन ये कबाब भी हल्क से उतरते ही बदन का हिस्सा हो जाते हैं। इन्हीं से मालूम हुआ कि गोले के कबाब में एक हिस्सा कीमा, एक हिस्सा मिर्चें और एक हिस्सा धागे (कबाब पे कस के लपेटे जाते हैं) पड़ते हैं। सीख से उतार के कड़कड़ाते घी का बघार देते हैं।

'सीख कबाब में बघार? ये किस खुशी में?' हमने पूछा।

'इससे मिर्चों की तेजी मर जाती है। साथ में भरत की छोटी सी कटोरी में मसाला रख देते हैं। फिर कबाब में बकरी का भेजा और उसकी नलियों का गूदा अलग से डालते हैं।

'ये क्यों?'

'गर्म मसाले और जायफल, जावित्री की तेजी मर जाती है। फिर बड़ी प्याज के लच्छे और अदरक की हवाइयाँ और उन पर हरी मिर्चें कतर के डालते हैं। ये उपलब्ध न हों तो केवल सी-सी करने से भी लज्जत बढ़ती है। खमीरी नान के साथ खाते समय बर्फ का पानी खूब पीना चाहिए।'

'क्यों?'

'बर्फ से खमीरी रोटी और हरी मिर्चों की तेजी मरती है। कई नफासत पसंद कबाबों पर ततैय्या मिर्च की चटनी छिड़क कर खाते हैं। फिर दही-बड़े या कुल्फी फालूदे की डाट लगाते हैं।'

'क्यों?'

'इससे चटनी की तेजी मरती है।'

'अगर ये सारे चोंचले केवल किसी न किसी की तेजी मारने के लिए है तो चटोरों के समझ में इतनी सी बात क्यों नहीं आती कि एक के बाद एक तेजी मारने की जगह शुरू में ही कम मिर्चें डालें या फिर जबान पे रबर का दस्ताना

चढ़ा के खाएँ।'

अदीब सहारनपुरी ने इस मौके पे शेर की सफेद पताका लहरा के युद्ध बंद कराया। हमारा हाथ अपने हाथ में ले के बोले हजरत! दुनिया में हर बात अगर नियम कानून के मुताबिक होने लगे तो खुदा की कसम जिंदगी अजीरन हो जाए। इसी बात पर एक जालिम का शेर सुनिए -

सुपुर्दे - खाक की करना था मुझको
तो फिर काहे को नहलाया गया हूँ

अजान के बाद इसी रहस्य को प्रोफेसर काजी अब्दुल कुद्दूस M.A ने अपने बुकराती ढंग से यूँ कंठस्थ कराया कि जवानी दीवानी की तेजी बीबी से मारी जाती है। बीबी की तेजी औलाद से मारते हैं औलाद की तेजी साइंस से और साइंस की तेजी मजहबी शिक्षा से। अरे साहब तेजी का मरना खेल नहीं है, मरते-मरते मरती है।

फारूकी साहब उन लोगों में से नहीं थे जो दस्तरख्वान पर बिठाने की जगह सिर-आँखों पर बिठाते हैं। उन्हें खाने से अधिक खिलाने में मजा आता था। हर निवाले के साथ देहलवी दस्तरख्वान की नजाकतें भी कंठस्थ कराते जाते। एक दिन कहने लगे कि दिल्ली में तो जो शख्स शीरमाल और ताफतान में फर्क न कर सके उसे कल्चर्ड नहीं समझते।

'ये कौन सी मुश्किल बात है।' हमने कहा।'

'बताइए, क्या फर्क होता है?'

'एक जियादा बुरा होता है।'

अजरक : दीक्षा लेने के बाद फारूकी साहब ने अपने शेख (गुरु) के इशारे पर हजरत शाह अब्दुल लतीफ भट्टाई की सूफियाना शायरी को समझने के लिए सिंधी सीखना शुरु की। दिल पिघल चुका था। वैसे भी सुल्ह कुल आदमी थे। सिंधी की पहली किताब जगह-बेजगह पढ़ कर बोले कि साहिबो! मुझे तो उर्दू और सिंधी में कोई अंतर नहीं दिखाई पड़ा। सिंधी के नुक्तों को उल्टा लगा दिया जाए तो उर्दू बन जाती है। घर पर काला कुर्ता और टखने से ऊँची शलवार पहने लगे थे। कंधे पर शेख की दी हुई एक छोटी सी सिंधी अजरक जिसे लंबा रूमाल या अँगोछा भी कह सकते हैं। इससे अधिक बहुउद्देशीय चीज हमने नहीं देखी। हाइड्रोजन बम और चाँद तक जाने वाले रॉकेट बनाने वाले ऐसी किसी वस्तु का आविष्कार करके दिखाएँ तो हम जानें। फारूकी साहब उससे मुँह पोंछते। दस्तरख्वान का काम लेते। कहीं पैदल मंजिल मारते तो उसी से सफर की धूल झाड़ते। लू चलने लगे तो उसे पानी में तर करके अरबों के गुतरा-ब-उकाल की तरह सिर पे डाल लेते। दोस्तों की महफिल में अगर रेशम की तरह नर्म हों और किसी अनुपस्थिति दोस्त की बुराई करते समय नमाज का समय आ जाए तो उसी को जमीन पे बिछा कर सिजदा करते और रब का शुक्र अदा करते जिसने इंसान को बोलने की ताकत दी। दिन में बच्चे और रात को मच्छर सताते तो उसे मुँह पर तान कर सो जाते। जाड़े और जुकाम में यह मफलर का काम देती और रात को हलवाई की दुकान से बीमार बच्चे के लिए औटता हुआ दूध लाते तो उसका ऐंडुआ बनाकर हथेली पर रख लेते। बीबी को अचानक नंगे सिर दरवाजा खोलने जाना पड़े तो उसकी बुक्कल मार के ओढ़नी बना लेतीं। खुद नर्वस या खिसियाने होते तो

कोने को बल पे बल देते या यूँ ही चश्मे का शीशा साफ करने लगते। सौदा-सुल्फ लेने बाजार जाएँ तो याद रखने के लिए बीबी उसमें गाँठें लगा देती थीं मगर ये भूल जाते कि कौन सी गाँठ कौन सी इच्छित वस्तु का सिंबल है। पहली तारीख को महीने का सौदा लेने निकलते तो ये देहातन की चुटिया की तरह गूंधी हुई होती। रात को बच्चे उसका कोड़ा बना कर अगले-पिछले हिसाब चुकाते। जल्दी में हों या किसी खास अभियान पर जा रहे हों तो कंधे से उतार कर हाथ में ले कर चलते। कोई घर मिलने आए तो बैठाने से पहले उसी से मूढ़े को साफ करते। खानकाह में एक दिन नमाज के लिए हाथ-पाँव धोते हुए मस्जिद के हौज में गिर पड़े और कोहनी चोटिल हो गई तो अगले दिन उसी के 'सिलिंग' में हाथ को 7 के अंक की तरह रखकर बैंक आए। कोई भरी महफिल में अशोभनीय बात या मजाक कर बैठे तो उसे अपने मुँह में ठूंस कर खुस-खुस हँसी को छानते रहते। कहते थे कि एक बार रात को खानकाह से एक जलाली वजीफा (तेजस्वी प्रार्थना) पढ़ कर लौट रहे थे कि रास्ते में चार गुंडों ने घेर लिया। अब क्या था। उन्होंने इमाम जामिन (अनंत) का कलदार रुपया अजरक के कोने में बाँध कर बिन्नौट के ऐसे हाथ दिखाए कि एक गुंडे की कनपटी में भंबा खुल गया। वहीं खेत रहा। पिटे हुए गुंडे रपट लिखवाने भागे। हमारी मुस्कुराहट में उन्हें खिल्ली की झलक नजर आई तो तैश में आ कर बोले, 'आप जैसों को तो चवन्नी में ढेर कर सकता हूँ।'

दोपहर को फर्श पर खाना खाने बैठते तो बीबी उसी अजरक की चनौरी बना कर मक्खियाँ झलती रहतीं। रोज सुबह उसे धोकर शाम के इस्तेमाल के लिए तैयार कर देतीं। बड़ी बेटी की शादी तय हुई तो बैंक से पाँच सौ रुपए कर्ज लिए और एक दिन शाम को खुश-खुश अपनी बिटिया के दहेज के सारे कपड़े उसमें बाँध कर दिखाने लाए। फिर वो घड़ी भी आई जब सखी-सहेलियों ने ऐसी रुँधी हुई आवाज में 'लिखी बाबुल मोरे! काहे को ब्याही बिदेस रे, लिखी बाबुल मोरे' गाया कि दूल्हा वालों की आँखें भी नम हो गईं। जिस बाप ने दहेज में चाँदी का जेवर, मलमल के दुपट्टे और एल्यूमीनियम के बर्तन दिए, उसके सीने से लग के बेटी जिस तरह फूट के रोयी है, हमने किसी अमीर की बेटी को इस तरह तड़प के रोते नहीं देखा। शादी शांति से निबट गई तो मियाँ बीबी को चैन पड़ा कि बोझ हल्का हुआ।

लेकिन विधाता को कुछ और मंजूर था। तीन महीने भी नहीं बीते होंगे कि बीबी को टायफायड हुआ। पाँच-छह दिन तक तेज बुखार में खाना पकातीं, झाड़ू देतीं और बच्चों को नहला-धुला कर स्कूल भेजती रहीं। कर्ज में बाल-बाल बँधा हुआ था। शाम को घर जाते तो पाकिस्तान चौक से एक होम्योपैथ डॉक्टर से चार आने की पुड़िया लेते जाते। किसी से जिक्र तक न किया। रात की जगार से सूजी-सूजी आँखों को हथेलियों से मल-मल कर दिन भर काम करते रहते। दस दिन बीमार रह कर वो नेक बीबी अपने रब से जा मिलीं। दिल पर क्या कुछ न बीती होगी लेकिन क्या मजाल कि शिकायत का एक हर्फ भी जबान पर आए। यही शेख की हिदायत थी। जनाजे में मुहल्ले के सभी लोग सम्मिलित थे। बेटा जो मुश्किल से नौ साल का होगा, इस अजरक में फूलों की चादर, अगरबत्ती, गुलाब जल और शमामातुल-अंबर (इत्र) बाँधे बेखबर पीछे चल रहा था। उसमें अभी तक कुछ याद दिलाने के लिए एक नन्हीं सी गाँठ स्वर्गीया के हाथ की लगी हुई थी, जिसे उन्होंने तीन दिन से नहीं खोला था। डोला कब्र के बगल में उतारा गया और सिरहाने से काबे के गिलाफ का परचा हटा दिया गया। मय्यत कब्र में उतारने लगे तो अपने हाथों से अजरक कमर में डाल कर दुख-दर्द के साथी को मिट्टी में सुला दिया। उसी से आँखों के किनारों को पोंछा, धीरे से गाँठ खोली और फिर अपने शेख के इस प्रसाद को कफन पर डाल दिया।

क्या कोई वहशी और आ पहुँचा
या कोई कैदी छूट गया

सदा सुहागिन रागिनी : रात के दस बजा चाहते थे। बैंक में दस-बारह जागने वाले रह गए होंगे। बसें चलनी बंद हो गई थीं और अंदर बाहर सन्नाटा था। भूख भी थोड़ी देर ऐड़ियाँ रगड़-रगड़ कर मरी नहीं तो ऐसी गहरी नींद जुरूर सो गई थी जो सिसकियाँ ले ले के रोने के बाद बच्चों को आ जाती है। अचानक अजीबो-गरीब आवाजें आने लगीं जैसे चील, मेंढक और बूढ़ी मेम मिल कर कव्वाली गा रहे हों। हमने हॉल में आ कर देखा तो मालूम हुआ ये तमाम आवाजें एक नए भर्ती हुए, रिटायर्ड सेकिंड लेफ्टिनेंट यन.यम.यू.यम.यन.पी. कुंजू के गले से रिड़क रही हैं। उन्हें बैंक में अवतरित हुए कुल एक महीना हुआ होगा और इस समय वो मलयालम भाषा का एक रोमांटिक लोकगीत गा रहे थे। जिसके बारे में उनका दावा था कि कावेरी नदी के दूसरे किनारे पर खड़े होकर एक द्राविड़ी कुंवारी ने उन्हें सिखाया था। ये दावा ठीक ही होगा, इसलिए कि अगर वो वाकई कावेरी नदी के उस पार खड़ी थी तो उसके कुंवारेपन में शक नहीं किया जा सकता। उन्हीं की जबानी उनका नमकीन खंडित अनुवाद सुनकर हमारे तो पसीने छूटने लगे। उसके श्रृंगार रस के सामने उर्दू की सारी इश्किया शायरी बिल्कुल नर्सरी राइम और गुड्डे-गुड़िया का खेल मालूम होने लगी। हक नवाज चमिया-एकाउन्टेंट स्ट्रांग रूम की बालिश्त भर लंबी चाबियाँ छलका कर संगत कर रहे थे। हर मलयालम बोल के बाद यन.यम.यू.यम.यन.पी. कुंजू कुछ देर मुँह से मृदंग बजाते और जब वो गाना रद्द करके और ठाठ बदलकर मुँह से तबले की सी आवाजें निकालने लगते तो चाचा फजलदीन चौकीदार आटा गूँथने के तसले पर थाप लगा के जंग का ऐलान करता और पंजाबी टप्पे का टुकड़ा -

बारी बरसी खटन गया सी

खट के लेआंदा झांवा

(तू बारह बरस कमाने गया और कमाके लाया झांवा) लगा के अहले-दर्द को लूट लेता।

पाकिस्तान ताजा-ताजा नक्शे पर उभरा था और विभाजन की रौशनाई अभी अच्छी तरह सूखी नहीं थी। बैंक में लिखते सब अंग्रेजी में थे। बातचीत उर्दू में, लेकिन हर आदमी गाली अपनी मातृभाषा में देता था।

जबाने - गैर से क्या शरहे - आरजू करते

(दूसरे की भाषा में क्या इच्छा व्यक्त करते)

अंग्रेजी की गाली बिल्कुल फीकी, बेबास, और खुट्टल होती है। ये गाली आदमी अपने आप को भी दे सकता है। उर्दू की एक प्रचलित और प्रतिष्ठित गाली, जिसकी तरफ गालिब ने अपने एक खत में इशारा किया है, बूढ़े आदमी को नहीं दी जा सकती। काट और बेहूदगी की तीव्रता के लिहाज से अलबत्ता मारवाड़ी गाली का जवाब नहीं लेकिन ये इतनी गंदी और पेचीदा होती है कि इसके सही संबोधित केवल मारवाड़ी ही हो सकते हैं, जिनकी तादाद लेखक को मिला कर पाकिस्तान में इतनी कम है कि जी की भड़ास नहीं निकल सकती। इसी तरह उस जमाने में बेसुरा गाना भी हर आदमी अपनी ही भाषा में गाता था और किसी को उससे ये शिकायत नहीं होती थी कि हमारी मातृभाषा में लोगों को यातना क्यों देता है। एक रात वाहिद बख्श खोसो ने शाह अब्दुल लतीफ भट्टाई का दैवीय कलाम भैरवी

में सुना कर दिलों को ऐसा गरमाया कि उसी वक्त ये तय हुआ कि बोल किसी भी भाषा के हों, संगीत के सभी उपकरण (जिनकी तरफ पहले इशारा हो चुका है) सदैव भैरवी ही बजाया करेंगे। यूँ भी भैरवी और खुशामद सदा सुहागिन रागिनियाँ हैं। हर समय, हर मौसम में मजा देती हैं। सुनने वाले का जी नहीं भरता। पक्के राग और रागिनियों में हमें भी भैरवी पसंद है, इसलिए कि संगीत सभा के नियमानुसार इसके बाद कोई और राग नहीं गाया जा सकता, इसलिए मारे-बाँधे हमें किसी सभा में जाना पड़े तो छूटते ही इसकी फरमाइश कर देते हैं।

वाहिद बख्श खोसो हर बोल के बाद केवल 'अला' से कमाऊ पूत की मुश्कें कस के वादी ले में आते। मिली-जुली कव्वाली के तेवर कुछ ऐसे होते थे।

नसीर अहमद खाँ :

गुनाह का अपने मोतरिफ हूँ

ये इल्तजा है कि पाकबाजो

करो मुझे संगसार लेकिन

गुनाह की दास्तां तो सुन लो

चाचा फजल दीं :

बारी - बरसी खटन गया सी

खट के लेआंदा झावां

हकनवाज चमया :

मूसा से जुरूर आज कोई बात हुई है
जाने में कदम और थे आने में कदम और

कोरस :

बारी - बरसी खटन गया सी
खट के लेआंदा गंठिया अला *!*

इबादुर्रहमान कालिब :

ये दाग - दाग उजाला ये शब गजीदा सहर
वो इंतजार था जिसका ये वो सहर तो नहीं

कोरस :

बारी - बरसी खटन गया सी
खट के लेआंदा बटेरा अला !

श्रोताओं में से अगर मेज, कुर्सियों को निकाल दिया जाए तो जानदारों में ले दे के केवल हमीं थे जो उस गूँगे घेरे में आ सकते थे। सभी उपस्थितगण आर्केस्ट्रा के सक्रिय सदस्य थे कि इसी में चैन था। दूसरों की आवाज की यातना से बचने के लिए हर व्यक्ति अपना निजी शेर सुनता और कानों में उँगलियाँ दे के गाता था। कुछ दिन हमारी उपस्थिति बोझ हुई! मुँह से तो किसी ने कुछ न कहा, लेकिन बेजार निगाहें पुकारती रहीं।

चले भी जाओ कि गुलशन का कारोबार चले

एक दिन दबे शब्दों में शिकायत भी की कि इस तरह काम करने से हमारे शोर-शराबे में विघ्न पड़ता है। हम कटे-कटे से रहने लगे तो बोले, आप क्यों दिल छोटा करते हैं? और उन्होंने हमें मुँह से सीटी बजाने और उस पर मीरा बाई के दोहे पेश करने का निमंत्रण दिया बशर्ते कि वो पंजाबी टप्पे की धुन में हो ताकि तसले वाले भाई को तकलीफ न हो और वो सदा की तरह अपने झाँवे से दिलों का मैल दूर करता रहे। चाचा फजलदीन जब कभी खुद ही बेसुरा हो जाता तो तसला फेंक कर कहता कि टप्पे का समाँ तो उस समय बँधता है जब दूर से हर बोल के साथ डाचियों और गाय, बकरियों के गले में पड़ी हुई हमेलों की, घंटियों की आवाज आती रहे।

फजलदीन चाचा को वो लोग भी चाचा कहते थे जो खुद ताया कहलाने के लायक थे। हमें याद है कि पहली मुलाकात हुई और हमने नाम पूछा तो उसने सारा उद्धरण सुना दिया 'गाँव थूइयाँ, दरबार बाबा हजरत शाह कली, इलाका थाना अलीपुर चठ, जिला गुजरानवाला, निज्द लाहौर, मार्फत अल्ला दित्ता साइकिल पंक्चर मिस्त्री पहुँच कर चौधरी फजलदीन पेंशन याफ्ता लांसनायक को मिले।

मजदूरी का समय : बैंकों में उन दिनों सुबह साढ़े आठ बजे से रात के दस-ग्यारह बजे तक लगातार काम होता था। जबकि सरकारी दफ्तरों में बेकार रहने का समय नौ से साढ़े चार तक था। पहले तो रात गए तक काम करने की कोई शिकायत नहीं करता था और अगर कोई सिरफिरा आवाज उठाता तो उसका तबादला बारिश में चटगाँव, गर्मी में सक्खर और सर्दी हो तो कोयटा कर दिया जाता था, जो उस समय उद्दंड बैंकरों के लिए काले पानी की हैसियत रखते थे, लेकिन जो गर्दन मार देने के लायक होते उनको लाइन हाजिर कर दिया जाता था। यहाँ उनकी तुर्रा लगी पेचदार पगड़ी के सारे पेच एक-एक करके निकाले जाते। हमें याद नहीं कि दो-ढाई साल तक हमने और हमारे साथियों ने कभी चौदह घंटे से कम काम किया हो। दिन और रात का अंतर मिट चुका था और अगर था तो हजरत अमीर मीनाई के शब्दों में स्त्रीलिंग और पुल्लिंग की उलट फेर तक -

दिन मिरा रोता है तेरी रात को
रात रोती है मिरी दिन के लिए

दोपहर को कम ही लोग खाना खाते थे। घर-घर से साइकिल पर खाने के डिब्बे बटोर कर लाने वालों ने अपनी सर्विस और बारी-बारी से हर एक डिब्बे से बोटियाँ गायब करने का धन्धा शुरू नहीं किया था। स्टाफ के अधिकतर लोग लेखक सहित, ईरानी होटलों की तरफ चहलकदमी करके बेखाए-पिये वापस आ जाते। जहाँ तक हमारी याददाश्त का संबंध है, हवाखोरी का ये सिलसिला 1954 तक जारी रहा। कोई किसी से नहीं पूछता था कि आज भी तुमने खाना खाया कि नहीं। आठ-नौ बजे तक पेट का अलाव भड़क उठता। उसी को दबाने, बहलाने के लिए

दरअस्ल ये कव्वाली होती थी। सभी भूख को निकोटीन या पान से बहलाते रहते थे। अलबत्ता चाचा फजलदीन चौकीदार वुड स्ट्रीट के फुटपाथ पर दो ईंटें रख कर आठ बजे मक्का की एक रोटी डाल लेता था, लेकिन जब तक दफ्तर में एक आदमी भी खाली पेट बैठा काम कर रहा होता, चाचा फजलदीन लुकमा तोड़ना पाप समझता था। ग्यारह बजे से पहले उसे शायद ही रोटी नसीब होती थी। कभी-कभी वो सबको अपने हाथ से मलीर के भुट्टे भून कर खिलाता और अपने गाँव के भुट्टों को याद कर के रुआँसा हो जाता।

कुछ दिन बाद ऐसा बिजोग पड़ा कि सिगरेट पीने की क्षमता भी न रही। क्षमता से हमारा अभिप्राय साठ-सत्तर है कि यही हमारा औसत था। बुरी बात और बुरी आदत का सही लुत्फ और लज्जत दरअस्ल अधिकता में ही आता है। साहिबो! कमी पर इतना ही जोर है तो नेकी में करो कौन रोकता है? कमी को तबियत ने कभी न माना। हमने सिग्रेट कम करने के बजाए बिल्कुल छोड़ दी और जुशांदे से काढ़ी हुई मलाबारी चाय के पियाले के पियाले चढ़ा कर भूख और नींद को भगाते रहे। चाय दरअस्ल इसी नेक काम के लिए बनी थी। कहते हैं कि छठी शताब्दी में एक तपस्वी बोधिधर्म धर्म प्रचार के लिए चीन गया और वहाँ एक दीवार पर निगाह जमा कर ध्यान करने लगा। एक दिन ध्यान के समय आँखें आप ही आप नींद से मुँद गईं और सारी तपस्या खंडित हो गई। क्रोध में आ कर उस ध्यानी ने वहीं अपने पपोटे काट कर फेंक दिए ताकि आँखें कभी बंद ही न हो सकें। धरती पर जिस जगह वो पपोटे और खून की बूँदें गिरीं, वहाँ नई कोपलें फूट निकलीं जिन्हें उससे पहले किसी ने नहीं देखा था। उनका नाम चाय पड़ा। उसी की याद में जेन मत वाले आज भी ध्यान और उपासना से पहले चाय का घूँट जुरूर लेते हैं। सो हम भी इस घड़ी इस अमृत के घूँट ले ले कर उस रात की बातें सुना रहे हैं।

हमने अहले - जबां (परिष्कृत भाषा बोलने वाली) से शादी क्यों की : सभा के अध्यक्ष का पूरा नाम (भूतपूर्व) सेकिंड लेफ्टिनेंट नवाब मुहम्मद उमर मुजाहिद नहास पाशा कुंजू था। बैंक में ताजा अवतरित हुए थे। स्वयं को कर्नाटक का नवाब बताते थे। तेवर और तनतने से नवाब ही लगते थे मगर ऐसा मालूम होता था कि अपने नवाबी इलाके के नाम से पहले उन्होंने 'कर' की बढ़ोत्तरी कर ली है, हैदराबादी उर्दू भी मद्रासी ढंग से बड़े फर्राटे से बोलते थे। क का उच्चारण ख करते थे। कमसिन हसीना को कुमरी और कुमरी को खुमरी कहते थे। अक्सर खान सैफुल मलूक खान का मजाक उड़ाते कि वो खुबानी को खुरबानी कहता है और हक नवाज चमया कुरबानी को कुरबानी। खुद कुरबानी को खुरबानी कहते थे। अपने नाम का उच्चारण यन.यम.यू.यम.यन.पी. कुंजू फरमाते थे। एक दिन हमने छेड़ा, सरकार ने सारा कर्नाटक छोड़ कर यू.पी. की औरत से क्यों शादी रचाई?

'खट्टा सालन, इमली चावल, और बघारे बैंगन खाते-खाते दाँत अमल गए थे, इत्तफाख से मुलाखात हो गई। सलीखामंद खानदानी खुमरी, लखनवी खलिया-खोरमा पकाने में ताख, खुबूल सूरत, घर चलाने के खायदे और खानून से वाखिफ और क्या चाहिए? वो खोंखियाए।'

'तो गोया ये आपके पंच खखार हुए' हमने कहा

'मगर आप भी तो मारवाड़ी रांगड़ हैं। आपने क्यों अहले-जबां से शादी की?'

'हमने तो यह गुस्ताखी केवल उर्दू जबान से अपनी झिझक निकालने के लिए की थी।'

'इही गल हुई जवानां वाली' चाचा फजलदीन ने हमारी बीबी से संबंधित मन्सूबा बनाने की दाद दी।

(कर) नाटक का नवाब : बैंक में कुंजू शहजादा गुलफाम कहलाते थे। इकहरा बदन, चंदनी रंगत और बातों में उसी की सुगंध, तीखे नैन-नक्श, ततैये जैसी कमर, नाक इतनी लंबी और नुकीली कि उसमें मँगनी की अँगूठी पहनाई जा सकती थी। कान पर मन्नत की बाली का रुंझा हुआ छेद, अच्छे लिबास के शौकीन थे। प्रसिद्ध था कि सोते में भी करवट लेने से पहले अपनी माँग और पाजामे की क्रीज ठीक कर लेते थे। उनके सुंदर कपड़े पहनने, सजने, सँवरने और बरबादी में औरतों की तरफ उनके रुझान का बड़ा हाथ था। मई-जून में भी 'पोलका' बुंदकियों का स्कार्फ बाँधते थे। एक बार हमने टोका कि आपका 1/3 वेतन बजाज और 2/3 दर्जी की नजर हो जाता है। पिछले महीने आपने अपने घर के बजट के दूसरे पलड़े में हमारे वेतन का पासंग डाला, तब कहीं डंडी बराबर हुई। बोले 'मैले, पुराने-धुराने कपड़े पहनने का अधिकार तो सिर्फ करोड़पति सेठों को है। नौकरी पेशा आदमी के तो अल्लाह ने चाहा तो यही अलल्ले-तलल्ले रहेंगे। मद्रासी भाषा में कहावत है हीजड़े ने सारी कमाई-मूँछ मुँडवाई में गँवाई। हमारे कबीले की यह आस्था है जो रुपया छोड़ के मरे, वो अस्ल बाप का नहीं। मेरे बाप ने न जाने कैसे आठ हजार रुपए जमा कर लिए थे, जिनसे एक कॉपरेटिव बैंक में एकाउंट खुलवाया। वो तो उनके मरने से एक महीना पहले बैंक फेल हो गया वरना सारी वंशावली मिट्टी में मिल जाती। मौला ने बड़ा करम किया।

हर आदमी की अपनी निश्चित चाल और आवाज होती है। ये प्रकृति का चमत्कार ही है कि ऐन वैसी चाल और आवाज दुनिया में न किसी की हुई, न होगी लेकिन जैसी अजीबो-गरीब चाल इन हजरत की थी, हमने इससे मिलती जुलती भी नहीं देखी। लगभग घुटनों पर हाथ रखे चलते थे। हाथों की पोजीशन ऐसी होती थी जैसे आंधी में साइकिल का हैंडिल मजबूती से पकड़े चढ़ाई चढ़ रहे हों। बहुत दिन बाद मालूम हुआ कि हारमोनियम के रसिया हैं और हर समय उसे गोद में उठाए-उठाए फिरने से उसी पोज में अकड़ कर रह गए हैं। हारमोनियम उठाए हुए न हों तो बैलेंस बनाए रखना मुश्किल हो जाता। कदम-कदम पर डगमगाते, लड़खड़ाते, कभी उलार हो जाते। अक्सर फरमाते कि पूरे मद्रास प्रांत और कर्नाटक में मुझसे अधिक तेज कोई टाइप नहीं कर सकता। हारमोनियम इतनी विद्युतगति से बजाते कि उँगलियाँ नजर नहीं आतीं। धुन भी कहीं नजर नहीं आती थी। प्रति मिनट डेढ़ सौ अक्षरों की हत्या कर लेते थे।

कर्ज लेने में उन्होंने कभी कंजूसी से काम नहीं लिया। कहते थे उधार से भाईचारा और समानता बढ़ती है। उस जमाने में सबका हाल पतला था।

कौन है जो नहीं है हाजतमंद : जिसको देखो, पाँव चादर से घुटनों तक बाहर निकले हुए हैं। ऐसों से कर्ज लेना, ले कर न देना, फिर लेना उन्हीं का जिगरा था। किसी का हाथ तंग होता तो यार लोग उल्टा उसी से कर्ज माँगने लगते-इस डर से कहीं पहले वो न माँग बैठे और कोई वाकई कर्ज माँगता तो लोग अपनी मुश्किलों का जिक्र इस तरह करते कि माँगने वाला भी रोने लगता। हमदर्दी और दिल पिघलाने का इससे अधिक प्रभावकारी ढंग अभी तक नहीं खोजा गया। उपमहाद्वीप के कई दूर-दराज के पिछड़े इलाकों में अब भी ये रिवाज चला आता है कि बिरादरी की बड़ी-बूढ़ियाँ किसी की गमी में शरीक होती हैं तो लंबा सा घूँघट काढ़ के बैठ जाती हैं और अपने-अपने प्यारे का नाम ले के बैन करती, दहाड़ती हैं। सब अपने-अपने मर्दों की खूबियाँ बयान करके सूखे आँसुओं से रोती हैं। अगर कोई अपरिचित पहुँच जाए तो वो एक घंटे बैन सुन कर भी ये तय नहीं कर सकता कि रोने-पीटने की इस सभा में आज का विशिष्ट मृतक कौन है? उन दिनों बैंक में भी यही मेल-जोल की रीत थी। अपने-अपने सम्मुख से

मिल कर हाय-हत्या करने के बाद सब अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं को सामूहिक कब्रिस्तान में दफ्ना देते मगर इस तरह कि दूसरे दिन छँगुलिया से खोद कर निकाली जा सकें।

कुंजू कर्ज माँगने से पहले अपनी त्यागी हुई जमीनों का जिक्र जुरूर करते और रकबे दोहराते, तिहराते और चौहराते रहते। हर बार, पंद्रह-बीस हजार एकड़ की बढ़ोत्तरी ही नहीं, बल्कि पैदावार बढ़ाने वाले बयान से जमीन की प्रति एकड़ पैदावार को भी दुगना-तिगुना कर देते। कर्नाटक के पथरीले इलाकों में घास का तिनका भी नजर नहीं आता, वहाँ न सिर्फ गन्ने के जंगल के जंगल खड़े कर देते, बल्कि उनमें जंगली हाथियों और खुमरियों के रेवड़ के रेवड़ घुसा देते। जिस दिन हमारा सारा वेतन बारह घंटे के लिए कर्ज लिया उस दिन उनकी जमीनों का रकबा फैल कर इतना हो गया था कि समूचा सिंध उसमें समा जाए और फिर भी इतनी गुंजाइश रह जाए कि पंजाब के पाँच-छह जिले अपने सरकारी अमले और बदजबान पटवारियों समेत, उसमें खप जाएँ। अगले इतवार को पाक बोहेमियन काफी हाउस में मिर्जा ने पूछा, 'आपने कर्नाटक की जायदाद का क्लेम क्यों नहीं दाखिल किया?' झुंझला कर बोले, 'मुझे क्या बावले चूहे (हैदराबाद में कभी प्लेग फैल गया था, मुहल्ले के मुहल्ले साफ हो गए तभी से मुहावरे में कुत्ते की जगह चूहा घुस आया) ने काटा है? मैं क्लेम में किले के बदले क्वार्टर नहीं लेना चाहता। रियासतें भी कहीं राशन कार्ड पर एलाट हुई हैं। अफसोस आपका कभी रईसों से वास्ता नहीं रहा। पोतड़ों के रईसों की खू-बू सौ साल तक नहीं जाती' अगर लफ्ज खू (आदत) निकाल दें तो मुझे आपका दावा शब्द-शब्द स्वीकार है। मिर्जा ने हुज्जत की।

इंडियन आर्मी से डिस्चार्ज हुए सात-आठ साल होने को आए थे लेकिन बलिदान देने और लेने की आग अपने 36 इंच के सीने में दबी रखते थे। एक दिन कहने लगे जब मैं केनरा बैंक में चीफ कैशियर था तो तीन डाके पड़े।

'डाके'? हमने किस से पूछा' जी हाँ! बैंक में डाके नहीं पड़ते तो क्या ओले पड़ते? अपनी हाजिरजवाबी से हमारा खुला मुँह बंद करके उन्होंने बड़े विस्तार से पहले डाके में अपनी तेज दिमाग़ी का किस्सा सुनाया जिसका खुलासा ये था कि जैसे ही डाकू ने 38 बोर का पिस्तौल निकाला, उन्होंने बड़ी दिलेरी से एक-एक हजार रुपए के नोटों की गड्डी उसकी कनपटी पे रख कर पिस्तौल लूट लिया।

इंद्र का अखाड़ा : 1940 ईसवी में सेना में भर्ती होने से पहले कोचीन हो आए थे कि जिंदगी का भरोसा नहीं। मरने के बाद तो गुनाह का मौका स्वर्ग में भी नहीं मिलने का। बैंक में रोज शाम को इंद्र सभा सजाते और एनार्कुलम की नारियों की छब दिखलाते। शोख बच्चे की गेंद की तरह टप्पा खाती हुई द्राविड़ी काठी, कॉफी जैसी महकती-दहकती रंगत, उभरे-उभरे जामुनी होठ। खाल जैसे कुंवारी थाप तले कसी हुई ढोलक, काले ग्रेनाइट की चट्टानें आदमी के रूप में। कहते थे वहाँ कोई गृहस्थिन, शरीफ औरत अपने सीने और पेट नहीं ढांकती। अंधेरे उजाले कोई औरत चोली पहने हुए नजर आए तो इसका मतलब है कि बिकाऊ माल है और साथ रात बिताने की दावत दे रही है। भले घरानों में वो अंग जो रूप की राजधानी हैं, कपड़ों के अलंकार के मुहताज नहीं होते। हरचंद कि वो कोचीन में तीन रात से अधिक नहीं ठहरे लेकिन उसमें ही जो उनकी इच्छा भरी आँख ने देखा वो हमारे होठों पे नहीं आ सकता। रोज एक रंग के विषय को सौ ढंग से बताते। हर शाम एक नई खुमरी का नखशिख वर्णन करते और हमारी विषयाग्नि को पेट्रोल से बुझाने की कोशिश करते।

मद्रास छोड़े मुद्दत हो चुकी थी लेकिन उसकी बुराई किसी तरह बर्दाश्त न थी। एक दिन मद्रासी कॉफी, लुंगी, पापड़, सर राधा कृष्णन और अचार की तारीफ करते-करते मुँह से निकल गया कि बंबई वाले गंवारों की तरह चीख-चीख कर बोलते हैं और बंबई के अलावा हर शहर को.... लंदन, न्यूयार्क और पेरिस को भी .... बाहरगाँव कहते हैं। इसका उत्तर बंबई के प्रतिनिधि, कराची के वर्तमान निवासी, अब्दुल रहमान हाजी सुतली वाले ने ये दिया कि मद्रास में यूनिवर्सिटी का वाइस चांसलर भी तहमद बाँधे सड़क पर नंगे पैर घूमता है और औरतें साड़ी के नीचे पेटीकोट नहीं पहनतीं। इस पर दोनों में खूब धर-पटक हुई। एक दूसरे को इस बेदर्दी से उठा-उठा कर फेंकने लगे जैसे कुली मालगाड़ी में से वो पेटियाँ उठा कर फेंकते हैं जिन पर fragile लिखा होता है। जब दोनों में फेंकने और फिंकवाने की क्षमता न रही तो एक दूसरे से गुत्थम-गुत्था होकर फर्श पर पड़ रहे। दोनों प्रांत किसी तरह अलग होने का नाम नहीं लेते थे। अंत में हमने ये कह कर बीच बचाव कराया कि साहिबो! हमें देखो, हमारे छोड़े और छूटे हुए वतन राजस्थान में ये सब जब्त की जाने वाली वस्तुएँ पाई जाती हैं मगर हमने तो किसी बाहरगाँव वाले का सिर नहीं फोड़ा। हरी मिर्च के अचार और कच्ची राजस्थानी चुनरी से गाल लाल गुलाल, गले से एक बालिश्त नीची चोली जिसकी धाई में फिसलने के लिए निगाह भर का रास्ता, सिंघाड़ा से टखने से एक हाथ ऊँचा लंहगा और फिर -

रात जले कुछ जगमग - जगमग होवत है
कोई ओढ़े चुनरिया सोवत है

हमने तो इन चीजों पर कभी हाथापाई नहीं की। बोले अस्ल लड़ाई तो हाथ-पैर की होती है। ये कमीनों की तरह जबान चलाता है।

प्रदर्शित आवारगी और हा हू के बावजूद अपनी तंदुरुस्ती का बहुत ध्यान रखते। उल्टी-सीधी योग की कसरतें करते, सूरज निकलने से पहले पद्मासन में दम साधे, अपनी नाक पर निगाह जमाए संसार पर चिंतन करते। अक्सर उपदेश देते कि अनावश्यक साँस न लो। साँस बचाओ। कल काम आएगी। जितनी साँस कम लोगे, उतनी ही संख्या में साँसों में उम्र बढ़ जाएगी। उनके इस कार्य से दफ्तर में आक्सीजन की काफी बचत हो जाती। निहार मुँह दो गिलास नमक का पानी पी कर उल्टी करते फिर नथुने में सूत की डोरी का फतीला चढ़ाते, यहाँ तक कि उसका दूसरा सिरा हल्क से निकल आता। फिर उसे हौले-हौले खींच कर निकाल लेते। इस क्रिया को दोहरा कर दोनों नालें साफ करते। ये उन्हीं से मालूम हुआ कि इससे दिमाग रौशन और आत्मा विकसित, ऊर्जादीप्त होती है वर्ना हम तो अब तक इसी भ्रम में थे कि नाक साफ करने से नाक ही साफ होती है। अक्सर उपदेश देते कि सफलता के लिए स्वास्थ्य, परिश्रम, उदारता और बुद्धिमत्ता अत्यंत आवश्यक है और इसके सुबूत में अपने आपको पेश करते।

उनसे छोटे-बड़े जितने भी सकेंडल जुड़े हुए थे उनके आविष्कारक, निर्माता, व्यवस्थापक और प्रचारक वो स्वयं ही बताए जाते थे। अपने बारे में किए गए आधारहीन अनुमानों की वो हमेशा पुष्टि कर देते थे। अपनी शान में तमाम गुस्ताखियों और शरारतों के सूत्रधार दरअस्ल वो स्वयं थे। एक उम्र ऐसी भी आती है कि आदमी को तुहमत से खुशी मिलती है कि चलो इस लायक तो समझा। अनगिनत तुहमतें अपने ऊपर लगा ली थी जिनकी गिनती जोश साहब की आत्मकथा के 18 इश्कों से कहीं अधिक होगी।

प्रसिद्ध था कि हिरनियों का पीछा करने में खुतन (चीन का एक नगर जहाँ की कस्तूरी प्रसिद्ध है) से भी आगे जा चुके हैं। 'पे डे' पर red light area में दिल में उजाला कर लेते हैं। हालाँकि कराची के बाजारे-हुस्न में जितनी

बदसूरती फी-इंच कूट-कूट कर भरी है उसकी मिसाल दुनिया में शायद ही मिले सिवाय कराची टी.वी. के। मगर कुंजू इस मामले में रंग, नस्ल, मजहब, जबान, कद की भिन्नता से भी ऊपर थे।

तेग तो तेग है हम तोप से लड़ जाते थे

बल्कि इस मैदान में अधेड़ उम्र के चचा इब्तिसाम बेग की प्रांतवादिता की खुल्लम खुल्ला खिल्ली उड़ाते कि 'बुढ़ढा हो गया मगर ठिरक नहीं निकली, चलो माफ किया मगर शराब शौक फरमाने की गरिमा से भी परिचित नहीं। इस कूचे में सारे विरोध मिट जाते हैं। आवारगी में भी प्रांतीय पक्षपात करता है। अपने प्रांत की तवायफ के सिवाय किसी की इज्जत नहीं लेता हालाँकि वो अब बिल्कुल खंडहर हो चुकी है जिसमें अब सिर्फ चमगादड़ें उल्टे पैर करके लटक सकती हैं। एक दिन मैंने बहुतेरा ललचाया कि हीरा मंडी में कुछ अधकचरा-अधकतरा माल आया है। अपन के साथ जापानी रोड चलो, पर बेग चचा नहीं माना। कहने लगा नहीं मैं तो उसी के पास जाऊँगा। उसने मेरे अच्छे दिन देखे हैं...

निकाह का छुहारा : सुना है औरत जीवन में केवल एक बार मुहब्बत करती है। इसका मतलब शायद यह है कि औरत एक ही मर्द से जीवन में एक बार से अधिक मुहब्बत नहीं करती। इसे हमारी गलत सोच ही समझिये, वरना हम तो मर्दों के बारे में भी कोई बात भरोसे से नहीं कह सकते इसलिए कि जो दिन दिल के बेलगाम, बेमुहार छोड़ने के थे, उस जमाने में करीब और दूर के बुजुर्गों ने दुआओं और उपदेशों से हमारी शारीरिक नाकाबंदी कर रखी थी। फिर भी हमारा विचार है कि मर्द भी इश्क-आशिकी सिर्फ एक ही बार ही करता है दूसरी मर्तबा अय्याशी और उसके बाद निरी बदमाशी। बकौल प्रोफेसर काजी अब्दुल कुद्दूस, एम.ए. आदमी खताओं और बुराइयों का पुतला है लेकिन नहास पाशा कुंजू के हर इश्क में उन्माद और ऊलजलूलपन का यह आलम कि जैसे ये दिल की पहली और आखिरी वारदात है, इसके बाद खुदकुशी कर लेंगे और अगर इसमें कामयाब न हो पाए तो निकाह कर लेंगे। चुनांचे सारी उम्र खुदकुशी और निकाह की सरहद पर अंधा भैंसा खेलते रहे। एक दिन डींग मारने लगे कि यह मेरा तीसरा निकाह है। निवेदन किया कि हमें तो एक बीबी भी आवश्यकता से अधिक मालूम होती है, लेकिन शरअ में चूँकि एक से कम, यानी बट्टा या टोटे की अनुमति नहीं इसलिए इस ईश्वरी कृपा के शुक्रान और भुगतान के सिवा चारा नहीं।

कहकहे के बाद बोले, देहात में ऊँट को कोई भी मरज हो - दस्त, कब्ज, बुखार, गठिया, अफारा, रतौंदी हर मरज की दवा एक ही है, लोहे की दहकती सलाख से दाग दिया जाता है। जाड़े में मस्त हो जाए तो दाग देते हैं। मस्त न हो तब भी दाग देते हैं कि सुस्त क्यों है। इसी तरह अपने हाँ हर मरज का इलाज, हर चिंता का निकास निकाह है। एक से पूरा न पड़े, चैन न आए तो दोबारा, तिबारा दागते हैं।

न मिरा इश्क फरिश्तों जैसा : कुछ दिनों से सुनने में आ रहा था तबियत फिर बहार पर है। एक ब्याही-त्याही पड़ोसन के गुलों में रंग भर रहे हैं। दिन भर लोहार की धोंकनी की तरह आहें भरते और डूब कर इश्किया शेर पढ़ते। स्त्री वशीकरण के लिए एक संन्यासी बाबा का दिया हुआ काजल लगाने लगे थे, एक दिन हमने टोका कि आपकी इच्छिता तो शादी-शुदा है। बोले जभी तो काजल लगाना पड़ रहा है वरना सुरमा ही काफी था।

उनके मियादी इश्क का काल एक घंटे से एक साल तक हो सकता था। लेकिन उस एक घंटे में जिससे 3600 लजीज सेकिंड होते हैं, वो भूत-प्रेत की तरह चिपट जाते थे। बताते थे कि नीलगिरि पर्वत की तलहटी में एक पहाड़ी

'खुमरी' ने उनसे बेवफाई की तो उन्होंने वहीं कुल्हाड़ी से नाक काट ली। इस पर चाचा फजलदीन चौकीदार ने टोका कि भला कुल्हाड़ी से नाक कैसे काटी जा सकती है। टाँग अलबत्ता काट सकते हैं। बोले तो फिर टाँग ही काटी होगी, कुछ काटा जुरूर था।

हसीनों की संख्या अधिक हो और कुंजू सिर्फ एक की अल्पसंख्या में हों तो हिम्मत नहीं हारते थे। कसाई कहीं भेड़ों की अधिकता से घबराता है, या प्रोफेसर काजी अब्दुल कुद्दूस के कथनानुसार, हाथी के सामने जितनी बार केला फेंको सूंड से उचक लेता है। उन दिनों कराची में पावंदे आए हुए थे। उनके घर से दो फर्लांग दूर उन्होंने अपनी पैवंद लगी छोलदारियाँ गाड़ रखीं थी। एक पावंदे की बीबी पर जान-माल से फिदा हो गए। कहते थे जब वो चटकीली धूप में एल्यूमीनियम की उल्टी पतीली सिर पे ओढ़ के पानी भरने निकलती है तो बिल्कुल मलिका मालूम देती है। पशमीने के खेमे में रहती है। एक दिन बैठे-बैठे कुछ ध्यान आया तो अपनी कुर्सी से गद्दी निकाल कर हमारी तरफ फेंक दी कि जब वो प्याल के बिछौने पर सोती है तो मैं इस गद्दी पर किस तरह बैठ सकता हूँ। वो मुँह अंधेरे फ्रेंच जाली का गट्ठर सिर पर रख कर अकेली बेचने निकल जाती। शौहर दिन भर रायफल गले में लटकाए बकरी और मुर्गियों की रखवाली करता। सुर्ख पिशवाज में खंजर उड़से रखती थी। तीसरे चौथे नहास पाशा कुंजू उससे एक आध गज कपड़ा खरीद लेते, जिसका लंगोट भी नहीं बन सकता था। इसलिए कि जहाँ तक हमारी अक्ल काम करती है, जाली का लंगोट सिर्फ मच्छरों से कुश्ती लड़ने के लिए कसा जा सकता है। दिन भर जाली पर हाथ फेरते और सूँघते रहते।

शहजादा गुलफाम और लंदन : विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद न जाने किस खाते में दो महीने लंदन गुजार आए थे। दस पौंड का एक चैक भुनाने के उत्सव में वैस्ट मिनिस्टर बैंक का पाँच मिनट तक गौर से मुआयना किया। इन अनुभवों से दो घंटे तक हमें लाभांवित करते रहे। हर शनीचर की शाम को एक नाइट क्लब के डांस की ऐसी तस्वीर खींचते कि क्या कहिए बल्कि कुछ न कहिए। एक बार नाच के दौरान हमें मुस्कुराते देख कर बोले आप क्या जानें? एक ही जलवे में आप जैसों की तो नकसीर फूट जाए। चश्मे के शीशे तड़ख जाएँ। स्ट्रिप टीज डांसर को इस तरह नचवाते कि वो बेपर्दा उनकी आँखों के सामने हुस्न की किताब के पन्ने पलटती चली जाती, यहाँ तक कि उनका पारा बिखर जाता।

कुंजू स्पेनिश और फ्रेंच भाषा पर फिदा थे। इसलिए कि वापसी में मैड्रिड और पेरिस में ठेकी ली थी। ऐफिल टावर की आखिरी मंजिल पर उन्होंने हसीनाओं की उपस्थिति में कानों में उँगलियाँ देकर अजान दी थी जिसे चर्चा के दूसरे पक्ष ने कानों में उँगलियाँ दे कर सुना था। क्लिक, क्लिक, क्लिक फोटो पे फोटो खींचे गए। कहते थे, 'स्पेनिश बहुत आसान भाषा है, मेड्रिड में मैंने तीन साल के बच्चों तक को स्पेनिश बोलते देखा' हमारी सांत्वना के लिए उन्होंने स्पेनिश बोल कर दिखाई, लगता था सचमुच तीन बरस का बच्चा बोल रहा है।

पहला ऐशियाई : अगर शेखी बघारना और झूठ बोलना पुलिस के हस्तक्षेप के लायक जुर्म होते तो उनके हाथों में स्थाई रूप से हथकड़ी पड़ी रहती और हम मुजरिम की नकल करने के जुर्म में सारी जिंदगी जंगले के पीछे मुँह पर रूमाल डाले गुजारते। तीसरे चौथे महफिल जमती। वही हंगामे वही हाओ-हू। एक दिन तरंग आई तो कहने लगे कि मैं पहला एशियाई था जिसने 1944 में इंग्लिश चैनल क्रॉस करने की हिम्मत की, वरना उस जमाने में तो कालों को स्विमिंग पूल में भी पैर भिगोने की अनुमति नहीं थी। जिस वक्त उन्होंने कसरती बदन पर ग्रीस लगा के इंग्लिश चैनल में छलाँग लगाई तो सैकड़ों गोरी 'खुमरियाँ' उन्हें पानी के हवाले करने आई थीं। एक लहर के

बिल्लौर में लालची बगुला मछली की दुम चोंच में दबाए साफ नजर आ रहा था। जैसे ही उन्होंने या अली! कह के छलाँग लगाई, बर्फ की चादर में उनकी पूरी आउट लाइन तरश गई। जिसमें उनके डौले और रानों की मछलियों के उभार साफ नजर आते थे। 'खुमरियाँ' भौंचक्की हो कर देख रही थीं। इसलिए कि मैं पहला एशियाई था...

वो फूलदार लंगोट बाँधे प्रदर्शन करने में व्यस्त थे कि हमारी हँसी निकल गई। उन्होंने खुद को संभाला, आखिर को घाघ थे। कहने लगे बात खत्म होने से पहले ही ही ही ही! ठीठी करने का क्या मतलब? मैं कह ये रहा था कि मैं पहला एशियाई था जो इंग्लिश चैनल में छलाँग लगाते ही बेहोश हो गया था।

दूसरे विश्वयुद्ध के हीरो : महीने में एक दो बार ऐसा भी होता कि रात के ग्यारह बज जाते और एकाउंट किसी तरह बैलेंस होने का नाम न लेता। हिसाब को हर ब्रांड के सिग्रेट की धूनी और चाय के तरेड़े दिए जाते, लेकिन दो और दो किसी तरह चार न हो पाते। फर्क कभी एक लाख का निकलता और कभी सिकुड़ कर तीन पाई का रह जाता जो इस पेशे में एक लाख से जियादा जानलेवा और जोखिम का होता है। यह फर्क बारिश में भीगी हुई चारपाई की कान की तरह होता है। एक पाए पर बैठो तो दूसरा उठ खड़ा होता है। सारे मुहल्ले के लौंडों, लाडियों को कुदवाना पड़ता है। एक रात नहास पाशा कुंजू ने तरस खाके चुपके से अपनी जेब से एक पैसा डाल कर हिसाब बैलेंस कर दिया। उस रात तो सब खुश-खुश घर चले गए लेकिन दूसरे दिन अस्ली गलती मिल गई। तीन हफ्ते तक उस पैसे के कारण एकाउंट बैलेंस न हो सका। ये पैसा फूली हुई लाश की तरह हिसाब की सत्ह पर तैरता रहा और हमारी रातें काली होती रहीं। जब ऐसी काली रात आती तो एक-डेढ़ बजे पटाखे चलने की आवाजें आतीं। होता यह था कि नहास पाशा कुंजू जब तंग आ जाते तो हजार-हजार पेज के लैजर इतने जोर से बंद करते और पटखते कि पटाखे छूटने लगते। ये घोषणा होती इस बात की कि हिसाब किताब जाए भाड़ में। अब द्वितीय विश्वयुद्ध से संबंधित आपबीती का ट्रेलर दिखाया जाएगा। सब अपने-अपने बिलों से निकल कर उनके आस-पास इकट्ठे हो जाते और वो अपने शाहनामे के अलग-अलग हिस्से सुनाते जिनसे साबित होता था कि जर्मनी की पराजय में उनकी केंद्रीय भूमिका थी। सिद्दी रजीग में एक कुँए की मुंडेर की ओट लेकर उन्होंने थ्री नाट थ्री रायफल से एक ही गोली ऐसी मारी कि लुफ्ट वाफे जहाज के दोनों पर झड़ गए और वो फड़फड़ाता हुआ पेट के बल कुँए में आन गिरा। तबरक में जनरल रोमेल ने उनसे टक्कर ली। सच और झूठ का संग्राम था। बुरी शक्तियाँ एक तरफ, खुदाई फौजें दूसरी तरफ। उन्होंने युद्ध के मैदान में खुदा के पक्ष में एक जोशीला भाषण दिया जिसके बाद बड़ा खून-खराबा हुआ। 'घमासान का युद्ध हुआ। ऐसा कंफ्यूजन था कि पता नहीं चलता था कि गोली खुद को लगी है कि साथी को। जिधर नजराँ उठा के देखो बंदूखाँ, तोपाँ ठाँय-ठाँय चल रही हैं। मौतां हो रही हैं। जिंदगी का पहला मौखा था कि एक घंटे तक औरताँ का खयाल नहीं आया। मौत का फरिश्ता सिर पे चक्कराँ पे चक्कराँ लगा रहा है। घोड़ाँ और टैंकाँ एक दूसरे पर टक्कराँ पे टक्कराँ मार रहे हैं....।'

'घोड़े'? हमने आश्चर्य से पूछा

'और क्या हाथी टक्कराँ मारते? हाथियाँ का इस्तेमाल तो पोरस की मौत के बाद ही बंद कर दिया गया था। हाँ तो मैं ये कह रहा था कि चारों तरफ तोपाँ गोलाबारी कर रही थीं, तीन गोले तो मेरे डेंटर पर लगे।'

उन्होंने बाईं आस्तीन उलट कर तीन बहुत स्पष्ट निशान दर्शकों को दिखाए। ऐसी तीन बहुत स्पष्ट निशान हमारी बाईं बाँह पर भी है, आपकी बाँह पर भी होंगे। हमने पूछा 'तीनों गोले एक साथ लगे'? तिलमिला उठे, कहने लगे 'जी नहीं खिबला! क्यू बना कर बारी-बारी पधारे थे।' सबने हमारे मूर्खतापूर्ण सवाल पर जोरदार अट्टहास किया।

हमारी और उनकी पेशी : टेलीफोन से दस मिनट का बिछोह भी सह्य न था। कितने भी व्यस्त हों... हमारा अभिप्राय है गप्प मारने में व्यस्त हों... फोन जुरूर कर लेते थे। चाहें 197 (पूछताछ) से यही पूछना हो कि यह टेलीफोन डैड तो नहीं है। डायल घुमाते-घुमाते उनकी फोन की उँगली में ठेक पड़ गई थी। कहीं भी छेद दिखाई पड़े तो उसे घुमाने की कोशिश जुरूर करते थे। दिन भर ग्राहकों से या आपस में गप्प लड़ाते रहते। शाम को छह-सात बजे कमीज के कफ पर स्कॉचटेप से ब्लाटिंग पेपर चिपका कर बैठ जाते। बाउचर्स और लैजर पर तेजी से हस्ताक्षर करते जाते और कफ से रौशनाई सुखाते जाते। कुछ दिन बाद किसी मुँहजले ने जड़ दी कि बिना चैक किए अंधाधुँध हस्ताक्षर कर देते हैं। सबूत में रजिस्टर और लेजर पेश किए जिनकी एंट्रियों पर चेकिंग के टिक मार्क नहीं थे। मिस्टर एंडरसन के सामने उनकी पेशी हुई। खूब लताड़े गए लेकिन बाहर आकर कहने लगे कि मैंने जनरल मैनेजर का दरवाजा ठोकर मारकर खोला (सुबूत में अपना जूता दिखाया जिसकी नोक से पालिश ही नहीं, कुछ चमड़ा भी दो महीने से उतरा हुआ था। एंडी बड़े प्यार से मिला। देर तक वर्ड-वार की बातें होती रहीं।

दूसरे दिन उन्होंने अपने विशेषाधिकार चाचा फजलदीन को शिफ्ट कर दिए। चौकीदारी के अलावा अब उसकी यह भी ड्यूटी हो गई कि बंदूक को लालची बच्चे की तरह छाती से लगाए शाम को उकड़ूँ बैठा झूम-झूम कर एंट्री के सामने चैकिंग के टिक मार्क लगाता जाए। जब वो काम करता तो ऐसा लगता कि लेजर पर आटा गूँध रहा हो। बेचारा अनपढ़ था। इसीलिए एक घंटे में पाँच सौ निशान लगा देता था। स्वयं उनकी हिम्मत साढ़े तीन सौ से अधिक नहीं पड़ती थी। जिम्मेदारी का अहसास बुरी बला है।

अभी इस पेशी के चर्चे बंद नहीं हुए थे कि उनका फिर चालान हो गया। चपरासी ने सावधान किया 'बड़ा साहब आज शार्ट सर्किट की तरियों चड़-चड़ चिंगारियाँ छोड़ रिया है।' जुर्म का कारण ये कि इंस्टिट्यूट ऑफ बैंकर्स के तत्वावधान में 'राष्ट्रीय बचत और उसके प्रभावी उपाय' पर निबंध लेखन की प्रतियोगिता हुई थी। उसमें नहाश पाशा कुंजू ने एक चार लाइन का जब्त किए जाने लायक लेख लिखा था जिसमें हमारी भी आत्मिक भागीदारी थी। चुनांचे हम भी सुलतानी गवाह के तौर पर पेश हुए। लिखा ये गया था कि शासन अगर नोटों पर प्राकृतिक दृश्यों, टेढ़े-मेढ़े पेड़ों और मरम्मत न किए जा सकने वाले ऐतिहासिक खंडहरों (जिन पर सैंट्रल बैंक के गवर्नरों के हस्ताक्षर इस तरह होते हैं कि जैसे इस बुरी हालत के बनाने और बिगाड़ने के वही जिम्मेदार हैं) के बजाए NUDES (नंगी तस्वीरें) छापनी शुरू कर दे तो आजकल के नौजवान उन्हें स्वयं से अलग करके खर्च करने के बजाय अपनी जेब में सीने से लगाए रखने पर मजबूर होंगे। इस जमाने में नई नस्ल को फिजूलखर्ची से दूर रखने की यही एक उपाय है।

तांत्रिक साधना और लाल तोते : दो तीन महीने से कुंजू को हस्तलिपि समझने की झक लगी हुई थी। शाम को अलग-अलग हैंडराइटिंग और हस्ताक्षरों के नमूने सामने रख कर अपनी समझ-बूझ के आधार पर लेखन करने वाले के चरित्र के ढंके-छुपे कोनों पर रौशनी डालते। कहते थे कि मैं I पर नुक्ता लगाने और T काटने के ढंग से बता सकता हूँ कि लिखने वाले के जूते की ऐड़ी किस तरफ से घिसी हुई है। इतवार को किस समय सो कर उठता है। मोजे कितने दिन बाद धोता है। गंजा है या खपरैला। कई बार तो सारा चाल-चाल एक डैश, एक कौमे में निचुड़ कर आ जाता है। यही नहीं, यहाँ तक दावा करते थे कि मैं नमूने की चार लाइनें लिख दूँ और आदमी बिल्कुल उसी स्टाइल में नकल करता रहे तो सारा चाल-चलन खुद बदल जाएगा। हमने बड़ी बेसब्री से पूछा, क्या बाल भी उग आएँगे? बोले जब कश्ती साबितो-सालिम थी, जब सिर पर पूरे बाल थे तो आपको कभी उनसे कोई फायदा पहुँचा।

फिर एक दौर ऐसा आया कि वो चिंतित रहने लगे। कोचीन की अलिफ-लैला खत्म, मलयालम गीत रद, एक चुप सी लग गई। रात को चार बजे तक बैंक में न जाने किस उधेड़बुन में लगे रहते और दिन भर जम्हाइयाँ लेते रहते। इस अचानक बदलाव का कारण पूछा तो कहने लगे मेरे अब्बा का इंतकाल हो गया है। दूसरे एक जिन्नी मुझ पर आशिक हो गई है, जिसके कारण मेरे सीने के तीन बाल सफेद हो गए हैं। (रेशमी स्कार्फ हटाकर दर्शकों को चर्चित तीन अदद इश्क में डूबे बाल दिखाए।) जिन्नी के बेटे को अरबी का बगदादी कायदा पढ़ा रहे थे। एक दिन फरमाया कि तीन माह पहले का जिक्र है। मैंने टाट का कुर्ता पहना। मलेर के बाग में चालीस रात शेर की खाल पर बैठ के जलाली वजीफा पढ़ा (तंत्र साधना की।) मलयालम गाली, प्याज और लहसुन बिल्कुल छोड़ दिया। जिन्नी को बदबू आती थी। खजूर और ऊँटनी के दूध पर गुजारा था। ऊँटनी के दूध में बबूल के कांटों और आक का रस होता है। गंदे खून और खयालात की सफाई करता है। परिंदों की बोली समझने लग गया था। मुँह से तबला बजाता तो सारंगी और पायल की आवाज निकलती। जरा आँख बंद करता तो बिल्कुल सामने आ खड़ी होती।

'कौन' हमने बेचैन होकर पूछा?

'मौत! और कौन'

झुंझलाहट के बाद कुछ देर मौन रहे, फिर बिजली गिराने के सिलसिले को जारी रखते हुए बोले 'उंतालीसवीं रात को आधे चाँद की रात थी। एक बजे के आसपास खजूर खा कर गुठली थूकी तो वहीं पीपल का पेड़ उग आया। अब जो हौज में चलते हुए फव्वारे के ऊपर खड़े हो कर नहाने लगा तो देखता क्या हूँ कि हर बूंद का एक लाल तोता बन गया है और पीपल के एक-एक पत्ते पर बैठकर अल्लाहू-अल्लाहू कर रहा है।

'लाल तोता?' हमसे न रहा गया। खान सैफुल मलूक खाँ ने हमें टहूका दिया। कहने लगे 'चुपकर बदबख्ता! यहाँ और कौन-सी बात साइंस के हिसाब से हो रही है जो तुझे तोते के रंग पर अचम्भा है।'

अपनी बात आगे बढ़ाते हुए बोले 'अजानों के समय 101 तावीज पतंग के कागज पर केसर से लिखकर, सुहागन के हाथ के पिसे हुए आटे की गोलियों में लपेटता और सेठ गफ्फार भाई ने जो फैंसी मछलियाँ हौज में पाल रखीं थीं उन्हें खिला देता। जर्मनी से टैक्सटाइल मिल मशीनरी के साथ एक फानूस और मछलियाँ, Accessories दिखाकर इम्पोर्ट की थीं। सब मुझे पहचानने लगी थीं। देखते ही दुम हिलाती आती थीं।'

'चालीस दिन बाद कुछ चमत्कार हुआ।'

'हुआ। सब मछलियाँ मगर गईं। मालियों ने मुझे धर लिया। ढाई सौ रुपए देने पड़े। इसे रिश्वत कह लो चाहे हरजाना। अब दूसरा मंत्र पढ़ रहा हूँ। सुबह भुने कपूरे खाता हूँ। बैंक से सुबह चार बजे सीधा क्लिफटन जाता हूँ और सूरज निकलने से पहले कमर-कमर पानी में खड़े होकर अमल पढ़ता हूँ। सौ के नोट को दस का तो इसी वक्त बना सकता हूँ, है किसी के पास? पूरनमासी की रात को श्मशान घाट जाता हूँ और राख आँखों से मलता हूँ। चैक पर किए हुए दस्तखत को निगाह भरके देख लूँ तो सारी रौशनाई उड़ जाए।'

चाचा फजलदीन : उस जमाने में टाइम भी बताते तो इस अंदाज से जैसे दैवीय अनुभूति हुई है। कलाई पर बंधी हुई घड़ी से इस सूचना का कोई संबंध नहीं। चचा फजलदीन बड़ी श्रद्धा से उनकी बात सुनता। एक साल पहले उसने अपने गाँव जाकर इस बुढ़ापे में तीसरी शादी की थी। निःसंतान था। दो बीबियाँ मर चुकी थीं, मगर वो अपनी नस्ल

चलाने के लिए लड़का छोड़ना जुरूरी समझता था। दुल्हन के मेंहदी लगे हाथों से बालों में मेंहदी का खिजाब (मूँछों पर हमेशा काला खिजाब लगाता था, कहता था मेंहदी लगी मूँछ को मुटियार और डाकू कुछ नहीं समझते) लगवाकर अजीब-सा हुलिया बनाए लौटा। एक दिन कहने लगा कि बुढ़ापे की शादी और बैंक की चौकीदारी में जरा फर्क नहीं। सोते में भी एक आँख खुली रखनी पड़ती है और चुटिया पे हाथ रख के सोना पड़ता है। हमने गुजराती की कहावत सुनाई कि जवानी की बीमारी, बुढ़ापे की गरीबी, जाड़े की चाँदनी और बुढ़ापे की शादी पे हुक्के का पानी (यानी लानत)। हमने कहा चाचा! तुमने तीन शादियाँ कीं और कोई सबक हासिल न किया। बोला क्यों न किया। आइंदा किसी की बीबी या पक्की उम्र की औरत से शादी नहीं करूँगा। मेरी तौबा है।

चंद दिन पहले गाँव से पोस्टकार्ड आया था कि आपकी सब गाएँ, ढोर-डंगर खैरियत से हैं। पंच कल्याण भैंस के दो थन मारे गए। अल्ला दत्ता मिस्त्री की बाईं आँख फ्यूज हो गई और ये कि आपके बाल-बच्चे के यहाँ बाल-बच्चा हुआ है। बहुत होनहार और काला है। चचा फजलदीन ने चैक की सियाही उड़ाने वाली करामात बड़ी श्रद्धा और ध्यान से सुनी। उसकी इच्छा थी कि कुंजू नवजात के चेहरे की सारी सियाही चूस लें। वापसी डाक से उसका फोटो मँगवाने को तैयार था।

अब कुंजू बताते कि मेरे दादा जान आजादी की लड़ाई के योद्धा थे। उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ जंग की, जिसमें उनका सिर शहीद हुआ। हजरत अपना कटा सिर बाईं हथेली पर रखे और दाएँ हाथ से तलवार चलाते, खूनम-खून काले रंग के घोड़े पर सवार श्रीरंगापट्टम से बंगलौर आए। तेरहवें मील पर पहुँच के वो और मुश्की घोड़ा शहीद हुए। अपनी जनाजे की नमाज खुद पढ़ायी और सलाम फेर के गायब हो गए। पीर घोड़ा शाह का मजार आज भी वहाँ है।

इस सिलसिले में खान सैफुल मलूक खान ने ये रिसर्च की थी कि इसका दादा एक अरबी घोड़े की चोरी के इल्जाम में पकड़ा गया। कोतवाल ने मुँह काला किया और काले गधे पर उल्टा बिठाके शहर से निकाला। कालिख की वज्ह से पता नहीं लगता था कि दादा कहाँ खत्म होता है और गधा कहाँ से शुरू होता है। चर्चित गधे की टाँगों में जब तक जान रही चलता रहा। अंत में तेरहवें मील पर पहुँचकर ऐसा बैठा कि फिर न उठा। यहीं उसकी कब्र बनी। दादा भी यहीं टिक गया। कुछ अर्से बात जब उसकी मौत हुई तो यहीं दफनाया गया। बंगलौर वालों की बेध्यानी से कब्रें गडमड हो गईं। बड़े बूढ़ों का कहना है कि उनका मजार काले गधे की पायंती है, मुजाविर कहते हैं सिरहाने। बहरहाल ये खोज न हो सकी कि किसमें कौन आराम कर रहा है। एक लाल बुझक्कड़ ने ये भी बताया कि दोनों एक साथ मरे और वो गधे पर बैठा हुआ, उसी पोज में दफना दिया गया और उसी पर अनंत नींद में सो रहा है। चुनांचे मजार की ऊँचाई उसकी लंबाई से जियादा है। दूसरी कब्र खाली है। खुदा ही बेहतर जाने....

कम खर्च ऊँचे घर का रहन - सहन : तरह-तरह की खबरें सुनने में आ रही थीं। खान साहब ही कहीं से ये खबर लाए कि सैकिंड लेफ्टिनेंट एन.एम.यू. एम.एन.पी.कुंजू सरासर फ्राड है। पहले दर्जे का झूटा लपटाई। सैकिंड लेफ्टिनेंट नहीं है। हद ये कि कुंजू भी नहीं है, अस्ल नाम कुछ और है। मद्रासी भी नहीं। वजीफे और जंतर-मंतर सब बकवास है। घटिया आदमी है। कपड़े के इम्पोर्टरों से एक गज लट्ठा तक लेने से नहीं चूकता। चावल के गोदाम चैक करने जाता है तो हर बोरी में तीन बार सुम्मा घोंपता है और जो बांगी निकलती है उसे झोले में बटोर कर ले आता है। कपड़ा और चावल नजीर मुहम्मद चपरासी को बख्श देता है। जिसके नौ बच्चे हैं। खुद इंश्योरेंस कंपनियों से कमीशन खाता है। बैंक के कर्जदारों से कर्ज लेता है। बीबी भी सगी नहीं है। एक यूँ ही सी औरत के साथ यूँ ही सा

रहता है। इस इकट्ठे होने में दोनों ने शरअ (इस्लामी कानून जिसके नियमों से निकाह बँधता है) का हस्तक्षेप नहीं होने दिया।

मन तिरा काजी बगोयम तू मिरा काजी बगो : मुँहबोली बीबी है। वही उसकी ऊपरी आमदनी का ऊपर उतारती है। इसके अलावा कर्ज के जोर पर गली-गली, दर-दर, औरत-औरत मारा फिरता है। पिछले साल तो एक तवायफ ने उसे घर में डाल लिया था। कम खर्च ऊँचे घर का रहन सहन।

हमने कहा 'आवारगी अपनी जगह, मगर इसमें भी तो चमन के सौंदर्य का सुबूत दिया जा सकता है।'

मिर्जा बोले 'किस दुनिया की बात करते हो। बकौल अशरफ सुबूही, रोना तो यही है कि जिसमें रस है, उस पे बस नहीं और जिसपे बस है उसमें रस नहीं और दिल की बात पूछो तो जब तक सीख कबाब में से दहकते अंगारों और धुएं की लपट न आए, चटखारा नहीं आता। जैसे भरी पूरी संपूर्ण रागिनी होती है, वैसे ही संपूर्ण नारी होती है। संपूर्ण रागिनी इकतारे पर नहीं बजा करती। मेरे सरकार!'

गबन गाथा : ये आज से लगभग पचास बरस पहले की बात है लेकिन हमें अच्छी तरह याद है कि उस दिन जुमेरात (बृहस्पतिवार) थी। इसीलिए कि जुमेरात को वो काम शुरू करने से पहले अपनी डैस्क पर एक मैसूरी अगरबत्ती जलाते थे। उस दिन वो तबियत की खराबी का बहाना करके घर चले गए। दूसरे दिन भी नहीं आए। तीसरे दिन खाते बैलेंस किए गए तो एक लाख का फर्क आया। रात भर दस बारह आदमी गलती की खोज लगाते रहे, सुबह पाँच बजे रहस्य खुला कि नहास पाशा कुंजू ने एक खाते से एक लाख रुपए अपने जाली एकाउंट में ट्रांसफर करके गबन कर लिए। आदमी दौड़ाए गए, मगर उनका सुराग न मिला। इतवार को ग्यारह बजे रात पुलिस अपनी तफ्शीश से इस निष्कर्ष पर पहुँची कि वो जुमेरात को बैंक से एक लाख रुपए निकाल कर सीधे एयरपोर्ट गए और ग्यारह बजे की फ्लाइट से बंबई चले गए जहाँ वो बैंक और कानून की पकड़ से बाहर थे। उस दिन चाचा फजलदीन बहुत रोया। गम में रोटी नहीं खाई। कभी तैश में आ कर कहता 'अगर तुझे चोरी ही करनी थी तो मर्दों की तरह गाय भैंस चुराता। यह क्या झक मारी?' फिर सिर पीट कर कहता 'बेटा यह तूने क्या किया अगर तुझे पैसे की ही हवस थी तो मुझे बताया होता। मैं अपनी सारे महीने की तनख्वाह तुझे दे देता। अब क्या होगा?' एक बार एकाउन्टेंट छुट्टी पर था और नया मैनेजर तिजोरी की दोनों चाबियाँ खुली दराज में रखी छोड़ गया। उस समय तिजोरी में दस लाख रुपए थे। चाचा फजलदीन चाबियों को सीने से लगाए रात भर ला इलाहा इल्लल्लाह रटता, टहलता रहा। उसकी बीबी टी.बी. की आखिरी स्टेज में मुँह से खून डालती, इलाज को तरसती खानेवाल में अपने मैके में दम तोड़ रही थी। चाचा को केवल चार सूरतें (कुरआन के भाग) और 73 तक गिनती आती थी कि यही उसकी तनख्वाह थी। दस लाख रुपए में तो बकौल उसके इतनी भैंसे आ सकती थीं कि सारे का सारा गाँव अपने प्यारों से खाली कराना पड़ता और उसने तो सिर्फ आदमी कमाए थे।

उस जमाने में एक लाख रुपए का गबन आज के एक करोड़ के बराबर होता था। बैंकों में बरसों ऐसी वारदात के चर्चे रहते बिल्कुल उसी तरह जैसे बातूनी औरतें अपनी पिछली जचगी (बच्चा पैदा करने) की डींगें उस पल तक मारती रहती हैं जब तक उन्हें या श्रोताओं में से किसी को ताजातरीन जचगी न हो जाए। जिसने सुना, सिर पीट कर रह गया। उस प्रतिक्रिया से कुछ छुट्टी मिली तो एक दूसरे पर जुर्म की असावधानियों के आरोप लगाए गए। पुलिस ने पहले तो चार गवाहों के बयान कलमबंद किए फिर खुद उन्हें बंद कर लिया, मगर रुपया न बरामद हुआ।

अलबत्ता कुंजू की दराज से इंक उड़ाने के कैमिकल के अलावा दो कापियाँ और चैक बुक भी बरामद हुईं। जिनमें वो जाली दस्तखत बनाने का अभ्यास किया करते थे। उनमें लेखक के हस्ताक्षर भी शामिल थे।

पाँच-छह महीने बाद बंबई से आने वालों ने बताया कि उस रुपए से उन्होंने बारह टैक्सियाँ चलाईं। जब वो चलते-चलते पाँच रह गईं तो औने-पौने ठिकाने लगा कर फिल्म प्रोड्यूसर बन गए और कोचीन की एक लोक कहानी फिल्मानी शुरु की लेकिन कहानी खत्म होने से पहले ओछी पूंजी खलास हो गई। हमारा खयाल क्या यकीन है कि फिल्म में हीरोइन की जगह जितनी साँवलियों और खुमरियों को उन्होंने डाला होगा। उसके लिए तो कारूँ का खजाना भी अपर्याप्त होता। लक्ष्मी जिस चोर दरवाजे से आईं थी उसी से रातों-रात उघल गईं। पैसे-पैसे और रात की बासी औरत के लिए मुहताज हो गए।

मगर वो यूँ हार मानने वालों में से नहीं थे। गुत्थी खोलने के लिए पैसा न हो तो फिर जबान की कैंची चलती है। अल्लाह ने उनकी जबान को बला की तासीर दी थी और आँख में जादू। उसी का करिश्मा कहना चाहिए कि अब वो बंबई के पीरों के पीर बने बैठे हैं और उनकी गिनती चमत्कारी पुरुषों में होती है। खानकाहे-आलिया दुनिया के दर्शन की जगह है और उनके जलाली वजीफों की सारे महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश में धूम है। आधी रात से तड़के तक मुसल्ले (नमाज की चटाई) पर बैठे रहते हैं और दुआ पढ़ते रहते हैं। अपना आपा मिट्टी में मिला चुके हैं। एक दिन कव्वाली की महफिल में हाल (उन्माद, सूफी मत के अनुसार तुरीय से पहले की अवस्था) आ गया तो उसी आलम में खानकाह से बाहर निकल आए और सिर के बाल नोचते और सीना पीटते, नंगे पैर चल दिए। पीछे-पीछे मुरीद और कव्वाल हारमोनियम उठाए 'बसद सामाने-रुसवाई सरे-बाजार मी रक्सम' गाते जा रहे थे। आधा मील तक इसी तरह सड़क पर दीवानों की तरह से रक्स चलता रहा। मैरीन ड्राइव पर ठठ लग गए। सारा ट्रैफिक जाम हो कर रह गया। 1970 में बंबई से आने वाले एक इस्माइली परिचित के हाथों उन्होंने मद्रासी कॉफी, चंदन की माला, सुर्मे और अपनी तस्वीर की भेंट भेजी। तस्वीर के नीचे वो पंजाबी टप्पा लिखा था जिसने कभी दिलों को गरमाया अैर जीवन की कठिनाइयों को आसान बनाया था। जाड़े-पाले में दिए भी तरफ देखने से भी गरमाई आ जाती है। गुजरी हुई सुहबतें एक-एक करके याद आईं और उनके साथ न जाने क्या-क्या याद आ गया। जब कोई किसी पुराने दोस्त को याद करता है तो दरअस्ल अपने को याद करता है। देर तक उस तस्वीर में अपने को देखा किए। वही चौड़ा माथा, वही हल्के से खुले होंठ, वही जहीन मुस्कुराती आँखें। पर न जाने किस ईर्ष्यालु जिन्नी की नजर लगी है कि दाढ़ी सफेद गाला हो गई है, फिर भी यह देख कर जरा ढारस बंधी कि आजकल आँखों में सुर्मा नहीं लगाते। काजल लगाते हैं। दुम्बालादार।

नक्शा हमारे पापी ताक का : हमें नाम, मर्दों के चेहरे, रास्ते, कारों के मेक, शेर की दोनों पंक्तियाँ, पहली जनवरी की वार्षिक शपथ, बेगम की सालगिरह और सैंडिल का साइज, ईद की नमाज के नारे, बीते साल की गर्मी-सर्दी, ऐश में खुदा का नाम और तैश (गुस्से) में नाखुदा का डर, कल के अखबार के हैडिंग, दोस्तों से नाराजगी के कारण और न जाने क्या-क्या याद नहीं रहता। नून. मीम. राशिद के भूगोल भूल जाने वाले हीरो की तरह हम इतना बड़ा दावा तो नहीं कर सकते कि -

उसका चेहरा उसके खद्दो - खाल याद आते नहीं

इक बरहना जिस्म अब तक याद है

इसलिए कि इस स्थिति में याददाश्त की खराबी से अधिक चाल-चलन की खराबी दिखाई देती है।

8 का अंक और हम : दिन महीने और सन याद नहीं रहे सिर्फ इतना याद है कि 26 तारीख थी। वो भी इसलिए कि किसी सन और महीने की 26 तारीख को ही एक ज्योतिषी ने यह वहम हमारे दिल में डाला कि 8 का अंक या वो अंक जिनका जोड़ 8 हो जैसे 17, 26, 1961 वो कार, मकान या फोन नंबर जिनके अंकों का जोड़ 8 बने हमारे लिए बुरे साबित होंगे। हद ये कि 8 जैसे फिगर वालियों, आठवीं शादी, 62 साला औरत और सत्तरवीं सदी ईसवी से भी सावधान किया था। ये अजीब संयोग है कि जीवन की अधिकतर मायूसियां और नाकामियाँ उन्हीं तारीखों में प्रकट हुईं जिनका जोड़ ये मनहूस अंक बनता है। जिसे अब तो लिखते हुए भी दिल डरता है। इसका डर दिल में ऐसा बैठा है कि पिछले साल हम मनगोरा से पिंडी रात के एक बजे पहुँचे और दिसंबर की पूरी रात होटल इंटरकाटिंनेंटल के लाउंज में बैठ कर गुजार दी कि मनहूस 575 नंबर के कमरे में ठहरने की हिम्मत नहीं पड़ती थी और दूसरा कोई कमरा सुबह 7 बजे से पहले खाली होने का चांस न था। हम यह दृश्य देखने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थे कि सुबह हम उस कमरे में मुर्दा हालत में पाए जाएँ।

यथा संभव हम कोई नया कपड़ा, नया काम या सफर, मनहूस तारीख (8,17,27) को शुरू नहीं करते। उस दिन हमें जन्नत में भी जाने का अवसर दिया जाए (जबरदस्ती की और बात है) तो हम किसी उचित तारीख तक दुनिया ही में गुजर-बसर करने को प्रधानता देंगे। होने को तो हमारे हक में 8 नंबर का जूता भी अक्सर मनहूस साबित हुआ है लेकिन 7 नंबर काटता बहुत है। लाख इस superstition को दिमाग से निकालने की कोशिश करते हैं मगर कुछ न कुछ बात ऐसी हो जाती है जिससे इसकी पुष्टि होती जाती है। एक दिन हमने अपनी पैदाइश की तारीख, महीने और सन के अंक जोड़े तो हासिल 8 निकला। उस दिन से हमारा यह वहम और पक्का हो गया। किसी ने सच कहा है जो बात भेजे में अक्ल और तर्क के जरिए नहीं घुसी वो अक्ल और तर्क से कैसे निकाली जा सकती है। इस कारखाने का निराला ढंग है। 'यां वही है जो एतबार किया।'

हमारे ज्ञान की परीक्षा : हम यह कह रहे थे कि हमें सिर्फ इतना याद है कि 26 तारीख थी और शाम के छह बज रहे थे। सुबह साढ़े छह बजे नाश्ते के बाद, पेट को पचाने की तकलीफ नहीं दी थी। बाहर सड़क पर एक ठेले वाला दिन भर दूधिया भुट्टों से रास्ता चलते लोगों को ललचाने के बाद अब खुद ही भून-भून कर खा रहा था। सोती-जागती अँगीठी पर भट्टों और कोयले की चड़-चड़ से राल बनाने वाली ग्रँथियाँ इस बुरी तरह भड़कीं कि जब तक हमने अपनी इकन्नी को भुट्टे में परिवर्तित न कर लिया, 'यार को मैंने, मुझे यार ने सोने न दिया।'

अँगीठी से भुट्टा शाहजहानी छेद के रास्ते हम तक पहुँचा और हमने बेताबी से मुँह मारा (भुट्टे, मुर्गी की टाँग, प्यार और गन्ने पर जब तक दाँत न लगें रस नहीं पैदा होता-मिर्जा अब्दुल वदूद बेग) अभी दस बारह दानों पर ही हमारी मुहर लगी होगी कि एंडरसन फाइल हाथ में लिए आ धमका। उसे देखते ही हमारे रोंगटे खड़े हो गए फिर खुद हम खड़े हो गए, दोनों हाथ छोड़ कर अटेंशन। अलबत्ता भुट्टे को, जिसमें हमारी गाढ़ी कमाई का दूधिया रस भरा हुआ था, दाँतों से पकड़े रखा। इस सूरत में भुट्टा उसकी पतलून पर गिराए बगैर 'गुड आफ्टर नून' कहना एक ऐसे शख्स के लिए, जिसके चेहरे पर प्रकृति ने केवल एक ही मुँह बनाया है, असंभव था। इसलिए हमने आतुरता से अपना दायाँ हाथ, जो नमक और नींबू के रस से लगभग धुल चुका था मिलाने के लिए आगे बढ़ा दिया। जितना लंबा हाथ हमने सम्मान से आगे बढ़ाया था ठीक उसी अनुपात में महोदय पीछे हट गए। तिस पर हमने अपना नींबू और

सम्मान में लिथड़ा हुआ हाथ तह करके पतलून की जेब में रख लिया और केवल सिर और भुट्टे की समानांतर चलने वाली डुबकी से सलाम किया।

कड़वी मुस्कुराहट के बाद फर्माया 'हैलो! नीरो भुट्टे से बाँसुरी क्यों बजा रहे हो?'

हमने इस वाक्य की दाद, बिना मुँह खोले, बंद हँसी यानी हल्क की अंदरूनी हँसी को ऊपर ही ऊपर नाक से निकाल करके देनी चाही तो महोदय ने उँगली के इशारे से मना करते हुए फर्माया अपनी कटलरी डिसइन्फेक्ट करके मुझसे मेरे चैंबर में मिलो। इसलिए हाथ धो कर हम बैंक के माई-बाप के सामने पेश हुए।

बोले 'ये चीज जिसके सिरे तुम्हारे दोनों कानों से बाहर निकलने हुए थे, बताओ कहाँ पैदा होती है?'

'पाकिस्तान में'

'शाबास! तुम इसे जन्नत का मेवा भी बात देते तो मैं तुम्हारे भरोसे में हस्तक्षेप न करता लेकिन तुम्हारी जानकारी के लिए सूबा सरहद में बेहतरीन मकई पैदा होती है। गन्ना भी। बताओ गन्ने से क्या चीज बनती है?

'शक्कर'

दुबारा शाबासी देते हुए फर्माया 'तुम उन लोगों के जियादा काबिल हो जो तुमसे काबिल है। हाँ खूब याद आया शक्कर से जिस दिन तुम लोग मीठी पुल्टिस बना कर मुर्दों entertain करते हो, उसे क्या कहते हैं?'

'हलवा। शबे-बरात का!'

'शुक्रिया! अच्छा अब यह बताओ कि फ्रंटियर में और कौन सी चीज ऐसी बहुतायत में पैदा होती है जो दूसरी जगह नहीं होती?'

'पठान'

'शोखी और गुस्ताखी की विभाजक रेखा बाल बराबर होती है। मिस्टर गौरी ने अभी आफ्टरनून में शिकायत की है कि तुमने हिसाब के कागजों की गलती को बर्नार्ड शॉ के अश्लील वाक्य से ढकने की कोशिश की। यह शिकायत दुबारा न सुनूं। बर्नार्ड शॉ के ड्रामों के बजाय एकाउंटेंसी और कामर्शियल ज्योग्राफी पढ़ा करो। खाली दिमाग शैतान की वर्कशॉप होता है लेकिन तुम्हारा दिमाग तो उसका बैडरूम भी है।

हा! हा! हा! चिमनी की तरह हर समय धुआँ देते रहते हो और यह भी पता नहीं कि फ्रंटियर में सबसे उम्दा किस्म का वर्जीनिया तंबाकू पैदा होता है। इंग्लैंड को तंबाकू से आलिंगित कराने का श्रेय सर वाल्टर राले के सिर है। इसकी खेती, पैदावार, व्यापार और कर्जों से संबंधित तुम्हारा ज्ञान जीरो है। क्यों न अगले सोमवार से अपने अज्ञान की सीमा को उचित सीमा तक सिकोड़ लो।

सैफुल मलूक खान उसी क्षेत्र का रहने वाला कबायली है। अली कुली खान ने इसे बैंक में रखवाया था, तुम्हारी तरह भविष्य की चिंता और हिसाब-किताब से बरी है। अनथक मेहनत और मूर्खता का इससे सुंदर मिश्रण एशिया में

मेरी नजर से नहीं गुजरा, मगर नेक आदमी है। गौरी तुमसे अप्रसन्न है। आगामी चार सप्ताह खान की डैस्क पर ट्रेनिंग लो और अपनी खुट्टल जानकारी का विस्तृत विवरण अगले महीने पेश करो।

तंबाकू पर हमारी रिसर्च के डायरेक्टर : और यूँ हम खान सैफुल मलूक खान के चार्ज में दे दिए गए। छरहरा बदन, चौड़ा हाड़, कंधे कुछ झुके हुए जिसका कारण विनम्रता न थी। चम्पई रंग धूप से सँवला चला था। नाक गंधारा की मूर्तियों जैसी, सारे दिन आँखों से मुस्कुराते रहते, सुता हुआ मगर खिला-खिला चेहरा, मजबूत ठोड़ी पर खिलंदड़े बचपन का अंतर्राष्ट्रीय ट्रेड मार्क यानी चोट का निशान, कान जैसे किसी ने जग का हैंडिल लगा दिया हो। सिर पर कराकुली टोपी बड़े टेढ़े ऐंगिल से पहनते, इंद्र माँग उससे भी अधिक टेढ़ी होती थी। मँझले ब्रेकिट .... को बहला-फुसला कर चित्त लिटा दिया जाए तो उनकी मूँछ बन जाए। उँगलियाँ सिगरेट के धुँए से हल्की बैंगनी। इतने लंबे थे नहीं जितने लगते थे। हँसी आती तो एक दम खड़े हो जाते फिर विकेटकीपर की तरह झुक जाते और अपने घुटने पकड़कर गर्दन उठाते और वहीं से संबोधित की सूरत देख-देख कर कहकहे लगाते रहते। यह उनकी खास अदा थी। सही उम्र नहीं मालूम लेकिन अपनी कोऑपरेटिव गलतियों की मुद्दत को हमारी जवानी के बराबर बताते थे। अपने माँ बाप की चौथी औलाद थे। पश्तो, हिंदको, पंजाबी, फारसी और उर्दू फर्राटे से बोलते थे और एक भाषा से दूसरी भाषा में इस सफाई से गीयर बदलते कि सुनने वाले को खबर भी न होती। अंग्रेजी उन विशेष अवसरों पर बोलते जहाँ आदमी कुछ न बोले तब भी बखूबी काम चल जाता है। अरबी की पकड़ का अंदाजा नहीं लेकिन हे और ऐन (दो विशेष ध्वनियाँ जो हल्क से निकाली जाती हैं) सही स्थान से निकालते थे, यानी उस स्थान से जहाँ से हम जैसे अज्ञानी उल्टी करते हैं।

उर्दू गजल , पित्ती और इतिहास : शेरो-शायरी से तबियत बेजार थी। एक बार यार लोगों ने उन्हें डान अखबार के वार्षिक 'अजीमुड्डान' मुशायरे में ले जाना चाहा, किसी तरह तैयार न हुए। हमारे मुँह से निकल गया, छोड़ो भी, टिकट जियादा बिक गए हैं और जगह तंग। दंगा फसाद का अंदेशा है। अब जिद पकड़े हैं कि जुरूर चलूँगा। 'जिगर' मुरादाबादी के एक शेर की दाद जम्हाई से दी और हफीज जालन्धरी की 'रक्कासा' को तो खर्राटों पर उठा लिया। हमने टहूका दे कर कहा, खर्राटे लेना मुशायरे की तहजीब के खिलाफ है।

फर्माया 'उर्दू की दो तीन गजलें लगातार सुन लूँ ध्यान से तो कसम खुदा की मेरे तो पित्ती उछल आती है।' गालिब की हर गजल का कम से कम एक शेर पहचान कर ऐलान करते कि गालिब ही का लगता है, हमारा इशारा मक़्ते (वो शेर जिसमें उपनाम डाला जाता है) की तरफ है। भागने का अवसर न हो तो मारे-बाँधे शेर सुन लेते थे, समझ में आ जाए तो मुस्कुरा देते, समझ में न आए तो हाथ मिलाते।

साहित्यिक और ज्ञान की बातें सुन कर खाँ साहब का कबायली खून खौलने लगता। अक्सर कहते, 'तुम्हारी ज्ञानभरी बातें सुन कर मेरे सिर में तो विद्वता के गूमड़ निकल आए। टोपी तंग हो गई है।' कोई भी ऊटपटाँग शेर पढ़ दे तो इस तरह झूमने लगते जैसे-क्या नाम उसका-साँप का फन संपेरे की पोंगी के सामने! अलबत्ता इतिहास से शौक था लेकिन बस इस हद तक जहाँ वो मैट्रिक के कोर्स में आता हो या लापरवाह और बेध्यान लोगों को टोकने के लिए प्रयोग किया जा सके। हमें नसीहत करनी या सहमाना हो तो किसी नकारा मुगल बादशाह की नजीर पेश करते। अपने अंजाम से हम काँप जाते, इसलिए कि हमारे पास कोई पुश्तैनी सल्तनत भी न थी, जिसे खो सकें। मुगल बादशाहों ने अगर खान साहब से मशवरा कर लिया होता तो आज भी सब पर हुकूमत करते होते और हम कमर में सुनहरे पटके और सिर पर राजपूती पगड़ियाँ बाँधे बाअदब-बामुलाहिजा खड़े होते।

हाथ ला उस्ताद , क्यों कैसी कही : अजब स्वभाव और ताकत पाई थी। दरवाजे पर अगर PUSH लिखा हो तो अपनी तरफ खींचते और PULL लिखा हो तो बाहर ही तरफ धक्का देते। रोना इस बात का था कि अक्सर दरवाजे उनकी मर्जी के ऐन मुताबिक खुल और बंद भी हो जाते थे। कभी कोई गंदा चुटकुला सुनाने बैठते तो सुनने वाले की समझ में न आता कब कहाँ हँसे। हँसी की भूमिका बनाने के तौर पर चुटकुला शुरू करने से पहले खुद हँसने लगते और सुनने वाले के पंजे में पंजा डाल कर बैठ जाते। हम भी घंटों उनके चुटकुलों से पंजा लड़ा चुके थे। बांए हाथ को खुला रखते ताकि संबोधित की रानों पर मार-मार कर चुटकुले से लाल कर सकें। लोग उनके चुटकुलों पर शिष्टाचारवश भी नहीं हँसते थे। इस डर से कि झूठों भी दाद दे दी तो दूसरे चुटकुले की काठ में जकड़ दिए जाएँगे।

गुस्सा नाक पर रखा था जो समय-असमय फिसल कर मुँह से गालियों की शक्ल में ढल कर निकलता रहता था। बाजीगर की तरह अपने मुँह के साइज से भी बड़े गालियों के गोले निकालते रहते थे। बुजुर्गों की गढ़ी गढ़ायी तरकीबों, परंपरागत शैली से परहेज करते थे। गालियों की अपनी राह अलग निकाली थी, कभी कोई बहुत ही अशिष्ट विषय अंतरिक्ष से अवतरित हो जाए तो जबान का उपयोग नहीं करते थे, कैलीग्राफिक स्टाइल में लिख कर हमें दिखा देते थे। गालियों की लिखावट का इससे बेहतर नमूना आज तक हमारी नजर से नहीं गुजरा। वैसे मुहब्बती आदमी थे। ब्वाय स्काउट की तरह रोजाना कम से कम एक नेकी ऐलानिया करते थे। एक दिन कहने लगे कल रात मैंने एक शख्स को बड़ी बेइज्ज ती और माँ बहन की गालियों से बचा लिया।

पूछा 'कहाँ? कैसे?'

बोले 'मैंने अपने गुस्से को कंट्रोल किया।'

देखने में आया है कि कई काहिल गलियर गाली को तकिया कलाम बल्कि गावतकिया कलाम की तरह प्रयोग करते हैं। लेकिन खान साहब हर गाली समझ कर देते थे। जैसे फरीदा खानम समझ के गजल गाती हैं।

एक दिन खान साहब ने बहस के बीच एक अवसरवादी लीडर और कुछ नौ-दौलतिये ठेकेदारों को दल्ले और भड़वे कह दिया। इस पर हसन डिबाइवी ने टोका कि 'खान साहब कम से कम यू.पी. में शरीफ लोगों का यह ढंग नहीं कि किसी को भड़वा कहें।' बोले 'आप भी उस जमाने की बात करते हैं जब सारे शहर में कुल दो भड़वे हुआ करते थे।'

अब्दाली : शिकार का शौक दीवानगी की हद तक था। इतवार को तड़के साइकिल पर निकल जाते। कहते तो यह थे कि कीर्थर अैर मंघू पीर की पहाड़ियों में जंगली बकरे Ibex मारने जा रहा हूँ लेकिन कराची से बीस मील के दायरे में फाख्ता तक नहीं छोड़ी थी। आखिर में चील-कव्वों पर गुस्सा उतारने लगे थे। भरमार टोपीदार बंदूक इस्तेमाल करते थे, जिसमें बारूद गज से ठोक-ठोक कर भरा जाता है। बंदूक की लंबाई हमारे कद से दुगनी थी, बशर्ते हम पंजों के बल खड़े हो जाएँ। उसकी मक्खी हमसे इतनी दूर स्थित थी कि हमें तो चश्मे की मदद से भी दिखाई नहीं पड़ती थी। उनका दावा था कि इसी उपकरण से उनके परदादा ने अहमद शाह अब्दाली के साथ हिंदुस्तान पर हमला किया था। इसी कारण हम इसे प्यार में अब्दाली कहते थे। फरमाते थे कि आदत सी पड़ गई है, इसे अपने पहलू में लिटा कर, लिबलिबी पर उँगली रखे, दाईं करवट सोता हूँ। एक पल को भी उँगली अलग हो जाए तो पट से आँख खुलती है। उनकी हालत उन जिद्दी बच्चों की सी थी जो दूध छुड़ाने के बाद चुसनी मुँह में लिए-लिए सो जाते हैं।

हमने पूछा लिबलिबी पर उँगली रख कर सोने में आपको डर नहीं लगता? फरमाया, विलायती बंदूक थोड़ा है। आप ही तो उस दिन मजे ले ले कर बता रहे थे, कि मौलाना शिबली नोमानी की बंदूक भी उनकी तबियत की तरह निकली, बिना इरादा चल गई, पर यह बंदूक आजकल की कटखनी, बेकही बंदूकों की तरह नहीं है जो छेड़छाड़ से ही बेचैन हो जाती हैं। बिना इरादा-बिना कोशिश, यह भी खान साहब की विनम्रता थी वरना हमने तो यही देखा कि इरादे और कोशिश से भी नहीं चलती थी। हमारे जुमलों की तरह धूल चाट जाती थी।

दाल रोटी , यानी अन्न से अन्न खाना : तबीयत खराब होने या किसी और मजबूरी के कारण इतवार को शिकार खेलने न जा सकें तो सनीचर को दोपहर और शाम की नमाज के बीच के समय में कजा खेलते थे। इतवार को शिकार के गोश्त का नागा हो जाए तो सुबह से बौलाए फिरते। उस दिन मुर्गे के गले पर अल्लाह की बड़ाई बयान करते। ऐसा मुर्गा हरगिज नहीं खाते थे जिसने अपनी अजान न दी हो। मुर्गी को छूते तक नहीं थे। कहते थे कि गजनी खैल गाँव में बालिग मुर्गा जनाने में घुस आए तो औरतें झट बुर्का ओढ़ लेती हैं। एम्पर्स मार्केट से खुद देखभाल कर बालिग मुर्गा खरीद कर लाते और किबलारू (पश्चिम) करके बंदूक से ढेर करते, फिर हलाल करते। अक्सर कहते कि दूसरे का हलाल किया हुआ गोश्त खाने से आदमी बुजदिल, एक बीबी वाला और वाचाल हो जाता है। इससे तो बेहतर आदमी दाल रोटी खा ले मगर हम कबायली भूखे भले ही मर जाएँ अन्न से अन्न नहीं खाते। जभी तो ये हाल है कि नसवार की चुटकी लेकर जरा छींक दूँ तो सारे दफ्तर की नाफ टल जाए। हम सुरक्षा के लिए घर से बाँह पर ताबीज बँधवा कर नहीं निकलते। गले में पिस्तौल डाल कर निकलते हैं।

फायदा?

'मुगल बादशाह जिस दुश्मन को अपने हाथ से मारना नहीं चाहते थे उसे हज पर रवाना कर देते या झंडा, घोड़ा, नक्कारा और खिलअत (शाही पोशाक) देकर दक्खिन या बंगाल जीतने के लिए भेज देते। लेकिन हम दुश्मन को शॉर्ट-कट से जहन्नुम रसीद करते हैं।'

'दुश्मनों के दुश्मनी की तीव्रता के हिसाब से तीन दर्जे हैं। दुश्मन, जानी दुश्मन और रिश्तेदार।'

'ईमान से, ये जुमला आपका नहीं मालूम होता। पश्तो में कहावत है कि रिश्तेदार अगर कत्ल भी करेगा तो लाश धूप में नहीं पड़ी रहने देगा।

तंबाकू खुर्दनी , दुखानी और चशीदनी : ये थे खान सैफुल मलूक खाँ जिनके सामने हमारे घुटने एक महीने तक सुबह से शाम तक मुड़ते और सीधे होते-होते सुन्न हो चले थे। तंबाकू पर एथोरिटी समझे जाते थे कि तंबाकू पैदा होने वाले क्षेत्र से संबंध रखने के अलावा सिगरेट और हुक्का पीते थे। तंबाकू खाते थे, नसवार लेते थे। गरज कि चर्चित वस्तु को अपने अस्तित्व में घुसेड़ने का जतन करते रहते थे। सलाम करने के बाद हमने अर्जी लगाई कि हम तंबाकू से संबंधित बुनियादी बातें जानना चाहते हैं। जवाब में नसवार की डिबिया आगे बढ़ाते हुए बोले, हाजिर है।

'हमारी मुराद तंबाकू खुरदनी व नौशीदनी या तंबाकू दुखानी से नहीं।'

'इसमें मेरी तरफ से किवाम चशीदनी का इजाफा फर्मा लीजिए। थूकने वाला और फूँकने वाला तंबाकू कहते हुए तकलीफ होती है?' उन्होंने हमारी फारसी की थूथनी जमीन पर रगड़ते हुए कहा।

'हम इसकी खेती, व्यापार, आढ़त वगैरा के बारे में जानना चाहते हैं।'

तंबाकू के बारे में पहली बात तो ये याद रखिए कि कराची का हवा-पानी इसे रास नहीं आता, इसे ही क्या किसी को रास नहीं आता। अलबत्ता जैसा तंदुरुस्त, कीमती और खालिस गधा यहाँ देखा, सारी धरती पर इसका जोड़ीदार नहीं मिलने का। अजब शहर है, हर बात उल्टी। वो किस्सा नहीं सुना धोबी वाला, बरेली से नया-नया आया था। एक हजार रुपए लेकर गधा खरीदने निकला तो गधे बेचने वाले ने झिड़क दिया, जा-जा! बड़ा आया गधा खरीदने वाला। अंटी में कुल हजार रुपल्ली ही हैं तो घोड़ा क्यों नहीं ले लेता। ना साहब तंबाकू कराची के रेता-बजरी में जड़ नहीं पकड़ सकता।

'खान साहब! मनी-प्लांट बगैर मिट्टी, खाद और धूप के; केवल पानी की बोतल में उगता है। इसी तरह हमारे यहाँ कामयाब लोगों की जड़ें ह्विस्की की बोतल में बढ़ती और फैलती हैं।'

उठ कर खड़े हो गए फिर घुटनों के बल झुके और तीन बार सुब्हान अल्लाह! सुब्हान अल्लाह! सुब्हान अल्लाह! कहने के बाद बोले, 'आप अच्छा डायलॉग बोल रहे हैं। ऐसा डायलॉग मैंने 1925 में पेशावर में सुना था। एक थियेट्रिकल कंपनी आई थी। हीरोइन का पार्ट एक मर्द ने गजब का किया था। आप ही की तरफ का था। ईमान से, आपकी के तरफ के मर्द अनूठे और बड़े काम के होते हैं। हालाँकि आप तो जयपुर की मशहूर चीजें सिर्फ साँड, खाँड, भांड और रांड ही बताते हैं। हाँ तो तंबाकू के सिलसिले में याद रखने लायक ये है कि व्यापार के अलावा ये और किसी मतलब के लिए फायदेमंद नहीं।'

'कुछ तो हवा पानी के बारे में बताएँ, प्रति एकड़ पैदावार क्या होती है?'

'पहले सवाल का जवाब आठवीं क्लास के भूगोल में है। मेरे बेटे के किताब में लिखा है। सुअर की औलाद तीन साल से इसी क्लास में मॉनिटर है। दूसरे सवाल का जवाब चार सद्दे (एक तहसील) का पटवारी देगा। बड़ा बदमाश आदमी है। हम दोनों एक ही सिख मास्टर के हाथ से बरसों पिटे हैं।'

'तंबाकू का पौधा कितना बड़ा होता है?'

'जितना आप समझ रहे हैं, उससे काफी बड़ा। फ्रंटियर का सेर 105 तोले का होता है।'

रैड क्लिफ के कान काटे गए : हम कागज पैंसिल लेकर तंबाकू पर नोट्स लेने लगे तो वो रूठ कर बैठ गए। कहने लगे अगर इल्म हासिल करने का ऐसा ही लपका है तो पहले चेला बनना पड़ेगा। छुट्टी के दिन कमरे पर आएँ। शागिर्द बना कर जंगली बकरे के कबाबों पर नियाज दिलाऊँगा।

अगले इतवार को हम भोर में सात बजे बिहार कॉलोनी पहुँचे, जहाँ उनका कमरा घुटने-घुटने कीचड़ में चाकीवाड़ा और बिहार कॉलोनी के संगम पर हिचकोले खा रहा था। सुनने में आया था कि ये सारी कॉलोनी समुद्र के लैवल से कई फिट नीचे स्थित है। कुंआ खोदने की जुरूरत नहीं पड़ती, गैरतमंद सिर्फ मुंडेर खींच कर चुल्लू भर पानी निकाल कर मुहावरे के शेष हिस्से पर कार्यवाही कर सकते हैं। कमरे के सामने इसी खदबदाती दलदल में दस-बारह लड़के और मेंढक सूरज की तरह 'इधर डूबे उधर निकले, उधर डूबे इधर निकले' कर रहे थे। लड़कों के बेतहाशा बढ़े हुए पेट नीले काँच की तरह चमक रहे थे। एक लड़का पाजामा पहने हुए था, लेकिन कमीज नदारद।

शेष लड़कों की अर्धनग्नता का क्रम इससे उल्टा था। इसे कमरा इस लिहाज से भी कह सकते हैं कि ये एक कच्ची-पक्की मस्जिद से लगा हुआ था जिसकी दीवार पर गेरू से लिखा था 'ये खुदा का घर है। खुदा के कोप से डरो। यहाँ पेशाब करना पाप है।' किसी जालिम ने पहले वाक्य और अन्य कुछ शब्दों पर इस तरह कोयला फेरा था कि दूर से अब सिर्फ, 'खुदा के कोप से पेशाब करना पाप है' पढ़ा जाता था।

हमने कमरे की कुंडी खटखटायी। वो प्रकट हुए, मलेशिया की शलवार पर सफेद बनियान जिस पर जगह-जगह ताजा खून के टापू बने हुए थे। हाथ में शिकारी चाकू जिससे जीता-जीता खून टपक रहा था। वो अपने कुत्ते का एक कान काट कर जख़्म को हुक्के के पानी से डिसइन्फेक्ट कर चुके थे और दूसरे की काँट-छाँट की तैयारी थी। कुत्ते की नाक ऐसी चमक रही थी जैसे अभी-अभी वार्निश का पुचारा फेरा हो। पूछा, खान साहब! ये क्या? बोले, हलवाई के इस हरामी पिल्ले को शिकारी कुत्ता बना रहा हूँ। मरदान में जवान गबरू घोड़े को आख्ता (वृषण काटना) कर दो। चूँ नहीं करता, ये नामर्द कान कटवाने में इतना बावैला करता है। आपका कराची भी अजब शहर है। न मर्दों का स्वभाव न औरतों का रूप। उनका खयाल था कि कान कटवाने के बाद कुत्ता अधिक वफादार हो जाता है, फिर कभी दगा नहीं करता। उसका नाम उन्होंने रेड क्लिफ रखा था। कुछ देर मसाला पीसने की सिल पर चाकू तेज करने के बाद हमारी हथेली पर एक पैसा रख कर कहने लगे 'इस सुअर का खून पतला है। जरा लपक कर फिटकारी तो ले आओ।' हाय वो भी क्या दिन थे जब एक पैसा एक पैसे के बराबर होता था और एक रुपया एक रुपए के ही बराबर होता था।

एक पैसे में फिटकरी का इतना बड़ा डला आया जो बकौल उनके, हमारे कानों के लिए भी काफी था। सस्ता समाँ था। मिर्जा कहते हैं कि आज केवल एक टब पर जितनी लागत आती है, इसमें उन दिनों पीर इलाहीबख्श कॉलोनी में पूरा मकान बन जाता था। इसके बावजूद खुदा के बंदे झुग्गियों में रहते थे। वेतन कम जुरूर थे मगर कीमतें भी तो कम थीं। फिर वेतन बढ़े। कीमतें भी चढ़ गईं। वेतन और बढ़े, कीमतें और चढ़ गई। नौकरी पेशा वर्ग की हैरानी भी बढ़ती गई। रहस की दो पंक्तियाँ -

बार - बार दरजन घर झगड़त ठारढ

जुई जुई अंगिया सीवत हुई सुई काढ़

नारी बार-बार दरजिन के घर जा जा कर झगड़ती है कि मैं तुझे रोज अंगिया ढीली करने के लिए देती हूँ, मगर तू जब सीती है, और तंग कर देती है। जवानी ऐसी भर कर आई है कि उसे ये भी होश नहीं कि दरजिन बेचारी तो रोज उसे ढीला कर देती है मगर वो तो एक और वज्ह से (जिसका भला सा नाम है) तंग ही होती चली जाती है। तो साहिबो! यही हाल सफेदपोशों के वेतन का है।

हमने कहा, खान साहब! कहीं जानवरों के साथ अत्याचार करने में चालान न हो जाए।

'मैं 1946 में हुंजा गया, सुनहरे मुर्गे और बर्फ़ानी चीते का शिकार करने। वहाँ न्यूजीलैंड का एक Bird watcher मिल गया। उसने बताया कि जब मैं बच्चा था तो गड़रियों और गल्लाबानों को दुम्बों को अपने दाँतों से जी हाँ अपने दाँतों से काट-काट कर आख्ता करते देखा। मैंने तो फिर छुरी फिटकरी इस्तेमाल की है।

एक झलक कमरे की : खान साहब के कमरे को गौर से देखा तो अपने मकान से कोई शिकायत न रही। छत टिन की नालीदार चादर की, जिसमें कनस्तर की चादर के तीन-चार पैवंद लगे हुए थे, हर पैवंद के चारों तरफ कोलतार का टापू। एक दीवार में, फर्श से छत तक टेढ़ी-मेढ़ी दराड़ें पड़ गई थीं जिस पर प्लास्टर दुर्बल आदमी के हाथ की रगों की तरह उभर आया था। दीवारों पर नसीहत और प्लास्टर टपकने के अलावा पिछले किराएदार के बच्चों की क्लासों और पढ़ाई की कठिनाइयों का बखूबी अंदाजा होता था। शहतीर के बीच में जो लोहे का कड़ा था उसमें एक खुली हुई छतरी उल्टी लटकी हुई थी। यही उनका छींका और अलगनी थी। एक कोने में अब्दाली इस ऐंगिल से पसरी खड़ी थी जैसे दो बजने में बीस मिनट हैं। पास ही एक बारहसिंघे का सिर लगा था जिसकी एक आँख और खाल झड़ चुकी थी। हर सींग पर कुछ न कुछ लटका हुआ था। एक पर प्लास्टिक मढ़ा हुआ सौला हैट, दूसरे पर बनियान सूख रहा था। तीसरे पर बैंक की चाबियाँ। दरवाजे की कील पर टंगी हुई पतलून पर मक्खियाँ अपनी पाचन क्रिया का असर छोड़ गई थीं। लेकिन कमरे में कहीं भी मक्खियाँ भिनभिनाती दिखाई नहीं देती थीं। सब हमारे मुँह पर बैठी थीं।

दरवाजे से जरा हट कर एक चीड़ का खोखा रक्खा था। यह रैड क्लिफ का आराम घर था। इसकी छत पर मेहमान बिठाए जाते थे। सरकंडे का एक बड़ा मूढ़ा भी था जिसकी बान की सीट गल चुकी थी। उसमें एक छोटा मूढ़ा, जिसकी पीठ झड़ चुकी थी, जड़ दिया गया था। दूसरे कोने में फटे हुए नमदे पर एक मटका औंधा देख कर हम मुस्कुरा दिए तो बोले, 'आपके हाँ तो मटके सिर्फ पीने, बजाने और सिर पे रखने के लिए प्रयोग होते हैं।' दालान (जिसका क्षेत्रफल दो चारपाइयों के बराबर होगा बशर्ते कि वो दूल्हा-दुल्हन की हों यानी पट्टी से पट्टी मिली हुई हो) की ओर खुलने वाले दरवाजे में एक पिंजरा झूल रहा था जो शायद विनम्रता और शालीनता सिखाने के लिए लटकाया गया था। उसके नीचे झुक कर बड़ी सावधानी से निकलना पड़ता था कि पेंदें से पानी, बाजरे और बीट की फुहारें पड़ती रहती थी। उसमें एक सहमा हुआ सुंदर रंगों वाला पंछी बंद था। पूछा, 'इसे क्या कहते हैं?' बोले, 'चकोर'। पूछा, 'पंछी बावरा चाँद से प्रीत लगाए- वाला चकोर? वही जो चाँद के गिर्द चक्कर लगाता है?' बोले, 'आपकी तरफ लगाता होगा। फ्रंटियर का चकोर इतना उल्लू नहीं होता। खैबर के पहाड़ों में चाँदनी के अलावा उसका दिल बहलाने के लिए कुछ और भी होता है।' पूछा 'हुजूर ने दिल बहलाने के लिए पाला है?' बोले, 'नहीं। हमारे यहाँ चकोर नेक शगुन के लिए पाला जाता है। मालिक की हर आफत को अपने ऊपर ले लेता है फिर अचानक एक दिन मर जाता है। जो उसकी बीमारी है कि मालिक की आई उसको आ गई। कराची भी अजीब शहर है। तीन चकोर मर चुके हैं। यह सुअर भी परसों से ऊंघ रहा है। इसे आप ले जाइए । आपकी हालत तो इससे भी जियादा खराब है।'

हुजूर आहिस्ता - आहिस्ता , जनाब आहिस्ता - आहिस्ता : उन्हें कृपालु देखा तो हिम्मत बढ़ी 'खान साहब तंबाकू की कितनी किस्में होती हैं?' बोले 'दो, पहली वर्जीनिया दूसरी (हिचकिचाते हुए) गैर वर्जीनिया।'

पूछा, 'सूबा सरहद में तंबाकू कहाँ-कहाँ पैदा होता है?'

बोले, 'जहाँ-जहाँ खेती की जाती है, खूब पैदा होता है।'

पूछा, 'सुना है मरदान, चार सद्दा, नवां कली और तहसील सवाबी में तंबाकू के आढ़ती पाए जाते हैं।'

बोले, 'जहाँ माल है वहाँ व्यापार, जहाँ व्यापार है वहाँ आढ़त जुरूर होगी।'

उन्होंने तंबाकू का ज्ञान पानी कर दिया।

सरवर साहब ने कुछ दिन बाद तंबाकू की तीसरी किस्म बता कर हमारे अज्ञान की खाई भरी तो नहीं, हाँ उस पर पुल जुरूर बना दिया जिस पर से एंडरसन की सवारी निकल सकती थी। बोले, तंबाकू का स्तर तो सरकारे-आलिया हर हाइनैस नवाब सुल्तान जहाँ बेगम के जमाने में हम रामपुरी पठान बढ़ाते थे। चित्रित चिलम में पुराने गुड़ का किवाम और दो आतिशा तंबाकू कड़वा दो रसा बगैर तवे के रख कर पूरी क्षमता से कश लगाते तो एक बालिश्त ऊँचा शोला लपक उठता। जिसके सुल्फ़े का शोला जियादा ऊँचा जाता वही मर्द ठहरता। सबसे तेज तंबाकू रमजानी कहलाता था। रमजान में हुक्के के रसिया इसी से समूह में रोजा खोलते। पहला कश लेते ही हजरते-दाग जहाँ बैठ गए बल्कि जहाँ लेट गए-लेट गए। रोजा रखने वाले बारी-बारी अपने स्तर के अनुसार दम लगा कर रोजा खोलते और उसी क्रम से बेहोश होते चले जाते। रामपुरी तंबाकू से किसी को कैंसर होते नहीं देखा, हार्टफेल होता था। उनकी फातिहा भी इसी पर दिलाई जाती थी।

खान साहब की तबियत बिगड़ने लगी थी, हमने विषय बदलने में खैरियत समझी।

'जबसे आपकी दाईं आँख खुली है (बाईं हमने तो हमेशा ही बंद देखी, संबोधित का चेहरा भी निशाना बाँध कर देखते थे।) आपको शिकार की लत है, हमें बचपन ही से हाथी और व्हेल के शिकार के किस्सों में दिलचस्पी है।'

दिल जीत लेने वाली मुस्कुराहट के बाद बोले '8 नंबर की बस में बैठ कर व्हेल का शिकार थोड़ा मुश्किल है। आप इल्म के बड़े लालची साबित हुए हैं। सब कुछ एक ही हल्ले में जान लेना चाहते हैं। मेरा मास्टर सरदार गुरुबचन सिंह मस्ताना कहता था कि पुत्तर जी। इल्म भंग नहीं अफीम है। इसका नश्शा धीरे-धीरे नस-नाड़ियों में उतरता है। क्या बताऊं हीरा उस्ताद था। कुल तीन मुल्ला थे। सबसे पास की डामर की सड़क सत्तर मील दूर थी। बहुतों के घरों में लालटेन तक न थी। मास्टर गुरुबचन सिंह कड़कड़ाते जाड़े में हैरीकेन लालटेन ले कर निकलता। घर-घर जा कर लड़कों को इकट्ठा करता। अपने घर ले जाता और वहाँ चटाई पर बिठा कर हमें रात के ग्यारह बजे तक इम्तहान की तैय्यारी करवाता। एक दिन अपने किरपान पर हाथ फेरते हुए बोला 'ओये बुकरात दे पुत्तरो। साइंस इल्म का दरिया है, भंग का गिलास नहीं कि सीधा दिमाग को चढ़ा और चंगा-भला बंदा भक से उड़ गया। और भंग छानने वाले कपड़े को रेशे-काजी कहते हैं। काजी कहकहे वाले काफ से। जहाँ काफ और काफ से जरा भी शक हो वहाँ काफ लिखा करो।

त से तिलेर , तीतर और तिलवर : तो आज मैं आपको सबसे छोटे परिन्दे (पंछी) के शिकार की तरकीबें बताऊँगा, फिर क्रमानुसार चरिन्दों (चौपाए), खतरनाक गजिन्दों (डंसने वाले), फाड़ खाने वाले दरिन्दों और आखिर में काले सिर वाले की बारी आएगी। आपने तिलेर देखा है?

'शेव करते समय रोज दर्शन कर लेता हूँ,' खास अदा के साथ कमर दोहरी कर झुक गए और घुटने पकड़े-पकड़े हमारी सूरत देख कर देर तक हँसते रहे। फिर फर्माया 'चितकबरा होता है इसलिए अबलका भी कहते हैं। मुट्ठी में दबा लें तो पता भी न चले कि खाली है या भरी। आप उसे तन्हा कभी नहीं देखेंगे। दो-तीन सौ का झुंड बना कर बसेरा करते हैं। चुटकी भी बजा दो तो साथ भर्रा मार कर उड़ जाएँगे। तिलेर सिर्फ फस्ल के वक्त नजर आता है। फस्ल को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़ों मकोड़ों को खा जाता है। इसी लिए शासन की सुरक्षा प्राप्त है। चोरी-छिपे मारना पड़ता है। प्रकृति ने कैमोफ्लाज के लिए ऐसा रंग और शक्ल बनाई है कि पेड़ पर बैठा पत्तों में बिल्कुल

दिखाई नहीं पड़ता लेकिन दुनिया की कोई ताकत इसे चोंच खोलने से नहीं रोक सकती। बस इसी पर मार खाता है। आवाज पर निशाना लगाया जाता है। इसे मरना स्वीकार है मगर चुप नहीं रह सकता। इसकी जबान का तीन आँच का काढ़ा बना कर गूंगे आदमी को पिलाएँ तो सात दिन में पटर-पटर बोलने लगे। बेजबान बहू एक घूँट पी ले तो दो दिन में उसकी सास बावली हो कर मर जाए और मुर्दे की जबान पर दफ्नाने से पहले एक बूंद टपका दी जाए तो मुनकिर-नकीर (मौत के फरिश्ते-यमदूत) उस कब्रिस्तान की तरफ ही न आएँ।'

'बड़े छर्रों को बर्दाश्त नहीं करता, डस्ट इस्तेमाल करना पड़ता है। एक फायर में सौ तिलेर गिरा लीजिए। दो तो छर्रे के कणों से घायल हो कर गिरते हैं, पचास-साठ केवल आवाज की धमक से जान छोड़ देते हैं, बाकी देखा-देखी। हाँ एक बात का ध्यान रहे, जमीन पर गिरने के डर से रास्ते में ही ठंडा हो जाता है। इसलिए कलमा पढ़ कर फायर करें वरना मुरदार हो जाता है। जरा छुरी फेर दो तो बेर सी गरदन अलग हो जाती है। चहे से भी अधिक खुशबूदार गोश्त, हड्डियाँ सिवैयों से अधिक बारीक और कुड़कुड़ी, हड्डी समेत करर-करर खाते हैं। शक्ल और जुस्सा सबका एक सा। कम से कम आदमी की आँख नर-मादा में अंतर नहीं कर सकती। तिलेर और उर्दू शब्दों के स्त्री लिंग-पुल्लिंग पहचानने में छठी इंद्रिय चाहिए। इसकी नस्ल बड़ी तेजी से बढ़ती है, इसमें तो यही मालूम देता है कि इसमें नर भी होते हैं। खुदा बेहतर जाने। उर्दू में तो तबले के भी नर-मादा होते हैं।'

'अच्छा! अब अगले इतवार को तीतर के शिकार पर बात होगी। मैदानी पंछी है, लड़ाका, सजातीय के अलावा किसी से नहीं लड़ता। दादू में एक अपाहिज रईस ने बेटे के अकीके पर बीस देग़ें काले तीतरों की पकवायीं थीं। जश्न में पूरा कस्बा निमंत्रित था। उसके अंदाज से तो मालूम होता था कि बच्चे की पैदाइश पर उसे खुशी से अधिक हैरत है। अच्छा परिंद है। सुब्हान तेरी कुदरत-सुब्हान तेरी कुदरत।'

निवेदन किया, 'अब तीतर सियाने हो गए हैं। सुल्तान तेरी कुदरत, सुल्तान तेरी कुदरत।'

बोले, 'इस जुमले की दाद किसी और से लीजिए। मैं मौजूदा हुकूमत के खिलाफ नहीं।'

'फिर किसी दिन आपको सजावल ले चलूँगा। झील में पड़ी हुई मुर्गा बियाँ ऐसी लगती हैं जैसे अभी-अभी किसी सभा में लाठी चार्ज के बाद लोग जूते छोड़ कर भाग गए हों। सुंदर वन चलें तो शेर का शिकार भी खिलवा सकता हूँ। शेर के शिकार में दो-तीन सौ आदमी चारों तरफ से हाँका करें तो सबसे पहले सुअर निकलते हैं।'

निवेदन किया, 'राजनीति में भी यही होता है,' बोले, 'फिर वही! आपने बस्टर्ड (तिलवर) देखा है। पहाड़ी चिड़िया है। ठट्ठा के पास बरादाबाद की पहाड़ियों में नवम्बर से उतरनी शुरू होती है।'

कहा, 'तो आज का सबक हुआ। त से तिलेर, तीतर और तिलवर...और तंबाकू?'

फरमाया, 'कभी पठोर मोरनी के कोफ्ते खाए हैं? बड़े खस्ता होते हैं।'

आप से तुम , तुम से तू होने लगा : अगले इतवार को शिकार पर जाने का वादा करके हम, तंबाकू से संबंधित जिन बातों से उन्होंने हमारी ज्ञान वृद्धि की थी, को सीने से लगाए विदा हुए। सोमवार को बैंक में दोपहर तक दोनों ही लिए-दिए रहे। तीसरे पहर को पश्तो की तीन-चार दिल को आनंद देने वाली गालियों से अहम् और अस्तित्व के परदे उठ गए। आपसे तुम, तुमसे तू होने लगा। तीन चार दिन में हम दोनों एक दूसरे की जिंदगी में इस तरह

प्रविष्ट हुए कि स्वयं भी निर्णय करना कठिन था कि कौन किसमें घुसा हुआ है। हमारी क्या मजाल कि छोटे मुँह से बड़ी बात कहें। यह तो ऐसा ही होगा जैसे कोई खरबूजा दावा करे कि वो दस्ते तक छुरी में घुस गया है।

वृहस्पतिवार तक अंतरंगता इतनी बढ़ गई कि हमने कहा,' आप गुरू, हम चेले। किसी दिन गरीबखाने पर भी पधारिए।' बोले, 'आपका गरीबखाना कहाँ है?' निवेदन किया, 'पीरबख्श कॉलोनी में। यहाँ से आठ मील।' बोले, 'रास्ते में कोई शिकार-शिकूर है?' हम चुप रहे। क्या कहते।

इन्हीं पत्थरों पे चलकर अगर आ सको तो आओ

मिरे घर के रास्ते में कोई फाख्ता नहीं है

हमें उदास देखा तो दिल बढ़ाया, 'दावत सिर आँखों पर, मगर बुरा न मानिएगा, कराची में आप लोग पुलाव में बराबर का गोश्त डालते हैं। हम दुगने के आदी हैं।' हमने जरा बुरा न माना। इसलिए कि अपने बयान के उस हिस्से में जिसका संबंध हमारे पुलाव से था, उन्होंने पहले ही 90 प्रतिशत गोश्त अधिक डाल दिया था वर्ना क्या पिद्दी क्या पिद्दी का शोरबा। फिर बोले, 'आप चारसद्दा आएँ तो रेता खिलाऊँगा। पूरे दुंबे को उसी की खाल में लपेट कर उसी की चर्बी में अंगारे पर भूनते हैं। काले दुंबे का गोश्त बड़ा मीठा और मुलायम होता है।'

गले में नथिया गली : शब्दों की दुर्गति-हमारे मुँह से निकल गया कि फाख्ता तो सुख-शान्ति की प्रतीक है और कबूतर तो बड़ा ही भोला पंछी है। इसे मारना महापाप है। कहने लगे, 'राम! राम! तू बेटी ब्राह्मण की, क्या जाने इसका स्वाद। मास्टर गुरुवचन सिंह, खुदा उसे मुआफ करे, कहता था कि मुसलमान किसी जानवर को जिंदा नहीं देख सकते, सिवाय सुअर के। आपको शायद जानकारी न हो, अगले वक्तों में किसी रईस को अधेड़ उम्र में लकवा हो जाता-जो अक्सर होता था-तो हकीम उसका इलाज जंगली कबूतर के बाजुओं की गर्म फड़फड़ाहट और हरियाली बन्नी के आँचल की हवा से करते थे। खान साहब हर सोलहवें मिनट एक सिग्रेट पीते थे। उसमें पंद्रह मिनट अपने हाथ से सिग्रेट मैन्यूफैक्चर करने के लिए होते थे और एक सिग्रेट पीने का। सिग्रेट सुलगाने से पहले पँखा बंद कर देते। कहते कि तेज हवा से सिग्रेट खत्म हो जाता है और सारा धुआँ बरबाद हो जाता है। महीन कागज पर तंबाकू की तह जमाते। हर पत्ती हर कण की दिशा ठीक करते। बीच में पीपरमिंट की एक सलाई रखते और थूक से चिपका कर बर्फीले कश लेते और सिगरेट न पीने वालों की महरूमी पर एक मिनट तक मुस्कुराते रहते।

'आप इस खखेड़ में क्यों पड़ते हैं बने-बनाए सिग्रेट क्यों नहीं पीते?' हमने पूछा।

'रेडीमेड सिग्रेट? क्या, आपने तुख्मी आम चूसा है?'

'जी हाँ! हजार बार!'

'अगर कोई तुख्मी का रस निकाल कर बिल्लौरी गिलास में पेश करे तो क्या वही मजा होता जो खुद दुहने में आता है?

'एक तुख्मी की हम पर भी कृपा हो।'

फौरन यानी पंद्रह-मिनट में एक सिग्रेट बनाया और उसमें पीपरमेंट की सबसे बलिष्ठ सलाई रखी। हमने जो आँख मींच कर दम लगाया तो गला नथिया गली हो गया।

पूछा, 'आप पाइप क्यों नहीं पीते?' पाइप से सिर्फ उन लोगों को आराम आता है जो न सिग्रेट की कूवत रखते हैं, न हुक्के की ताकत। दस बरस पहले मरदान में उन्होंने हुक्का शुरू किया था लेकिन पहले तो उनकी बीबी ने गालिब की बीबी की तरह उनके खाने-पीने के बर्तन अलग रखे फिर खुद उन्हें भी अलग रखने लगीं।

सनीचर को पूछने लगे 'तो फिर चल रहे हैं कल शिकार पर, शागिर्दी के लिए कल का दिन अच्छा है। 8 तारीख है। 8 मेरा लकी नंबर है।'

'चलने को तो चले चलेंगे मगर एक निवेदन है। वो ये कि सफर और शिकार में सरकार कोई गाली नहीं देंगे।'

'मंजूर मगर एक शर्त पर, आप भी कोई शेर नहीं बकेंगे। दफ्तर की बात और है। बाहर बन्दा कोई बेहूदी या बेतुकी बात बरदाश्त नहीं कर सकता।'

लैला भी हमसफर हो तो महमिल न कर कुबूल

'फिर वही-आपकी दुम कभी सीधी नहीं होगी। आपको मालूम है गोलकुन्डा के सुल्तान का एक बेतुका शेर सुनकर जहाँगीर बादशाह इस कदर नाराज हुआ कि तुरंत गोलकुन्डे पर चढ़ाई करने की आज्ञा दे दी। जहाँगीर आज जिंदा होता तो खुदा की कसम मुगल फौज सारी उम्र आपका घेरा डाले पड़ी रहती।'

सीढ़ी और नास्टेलजिया : बैंकों में इतवार रो-रो कर आता है और सोमवार रुला-रुला कर जाता है। इतवार को जरा देर से आँख खुली। हम बिहार कॉलोनी वाली बस से उतरे तो देखा खान साहब हमारे स्वागत के लिए बस अड्डे पर आधे घंटे से खड़े सिग्रेट बना रहे हैं। आलिंगन, हाथ मिलाना और सलाम हुआ। ऐसी कबायली गर्मजोशी से गले लगे कि हम बड़ी मुश्किल से शेष रस्मों की पूर्ति के लिए स्वयं को उनके प्रेम के शिकंजे से आजाद करा सके। अगर हम अपने सीने पर इस तरह हाथ न बाँध लेते जैसे जन्नती बीबियाँ नमाज पढ़ते समय बाँध लेती हैं, तो चार-पाँच पसलियाँ टूट चुकी होतीं। कबायली आलिंगन में परस्पर प्रेम का अनुमान उन पसलियों की गिनती से लगाया जाता है जो इस कार्य के समय टूट जाएँ और मर्दानगी का उनसे जो बच जाएँ। हमारे दुबलेपन और पसलियों का मजाक उड़ाते हुए बोले कि आपको सीने से लगाने पर यूँ लगता है जैसे बाँस की सीढ़ी से गले लग रहा हूँ।

अजान के बाद बिजली के खंभे से लगी हुई साइकिल उठाई। हमने कहा 'ये तो पितरस (प्रसिद्ध व्यंग्यकार जिनका साइकिल पर अद्भुत लेख है) की साइकिल मालूम होती है।'

'नहीं तो! मेरी ही है। क्या वो भी चाकीवाड़ा में रहता है?' उसके नंगी तलवार के से डंडे बिठा कर हमें अपने घर ले चले। हमने पीछे आरामदेह कैरियर पर बैठना चाहा तो उन्होंने अनुमति नहीं दी। कहने लगे, 'पहले तो ये सीट जंगली बकरे की लाश के लिए रिजर्व है। दूसरे हमारे यहाँ मेहमान की तरफ पीठ करके बैठना शालीनता के विपरीत समझा जाता है। मेहमान किसी समय भी पीछे से छुरा घोंप सकता है। मालूम होता है आपने इतिहास का ठीक से अध्ययन नहीं किया। इतिहास पढ़ने के तीन लाभ हैं। एक तो यह कि पूर्वजों के विस्तृत हालात की जानकारी के बाद आज की हरमजदगियों पर गुस्सा नहीं आता। दूसरे याददाश्त तेज हो जाती है। तीसरे, लाहौल

विला, तीसरा फायदा दिमाग से उतर गया। कराची भी अजीब शहर है हाँ! तीसरा भी याद आ गया। खाने, पीने, उठने, बैठने, भाइयों के साथ मुगलिया बरताव की सभ्यता से परिचय होता है। आगे बैठने पर याद आया कि शाहजहाँ के समय में यह सवाल उठाया गया था कि महावत शाही अम्मारी के आगे बादशाह की तरफ पीठ करके बैठता है जो सिर से पैर तक शालीनता के विपरीत है। इसलिए हमारे अपने इलाका गैर से एक शुद्ध रक्त के सय्यद साहब इम्पोर्ट किए गए जो महावत की पीठ से पीठ मिलाकर बादशाह की तरफ मुँह करके बैठते थे। आश्चर्य है बादशाह को ये ध्यान कभी न आया कि गुस्ताख हाथी उस की तरफ परमानेंट पीठ किए रहता है।'

इस पर हमने कहा 'राजस्थान के राजपूतों में उल्टा रिवाज है, ऊँट पर बैठी हुई औरत के आसन को देख कर एक मील दूर से बता सकते हैं कि वो सवार की बहन है या बीबी। बहन को राजपूत सरदार हमेशा आगे बिठाते हैं ताकि खुदा न ख्वास्ता वो गिर पड़े तो फौरन पता चल जाए। बीबी को पीछे बिठाते हैं।'

'और महबूबा को?'

'अपहरण के लिए देस में हमेशा घोड़े इस्तेमाल होते हैं।'

'देस में!!! आपका मन अभी तक मीरा बाई के देस में, अटका हुआ है पंडित यूसुफी! रेत के टीले, बंजर धरती, ऊँट हद ये कि ट,ठ,ड,ड़ देख कर आप नास्टेलजिक हो जाते हैं। आपके देस जयपुर में ले दे कर एक झील थी, साँभर झील और यह सड़ांदी खारी झील है जो सारे हिंदुस्तान को नमक सप्लाई करती है। आपको यह ध्यान नहीं रहा कि ब्राह्मणों का धर्म अपनी रसोई में मुसलमान के पाथे हुए उपले जलाने से भ्रष्ट हो जाता था। पाकिस्तान का दाना पानी खाते इतने दिन हो गए मगर अब भी वही रट 'मैं चने मटर के खा लूँगी तू ले चल जमना पार' थान है थान। ये पाकिस्तान है। आप भी किस पोली, पिलपिली, पोपली धरती को याद करते हैं जिसमें दिग्विजयी घुड़सवार अपने भालों से तंबू भी न गाड़ सकें। कभी आकर खैबर की जमीन देखिए। जरा सी असभ्यता से पाँव पड़ जाए तो टन-टन खतरे का एलार्म बजता है। गोलियों के मुँह फेर देता है।'

वो चमक गए थे। हमने कांटा बदल कर गंभीर दार्शनिक सवाल किया।

'औरत के बारे में क्या खयाल है?'

'अक्सर खयाल आता है' उन्होंने जवाब दिया।

अजीब बात है, हमने बहुत बार राजपूतों के स्वाभिमान और बहादुरी की कथाएँ सुनायीं, जरा भी जो प्रभावित हुए हों। एक दिन बात करते हुए हमने कहा 31 दिसंबर 1949 तक जब हम जयपुर से चले हैं; वनस्पति घी बेचना, खरीदना, बनाना, रखना और खाना राजस्थान की सीमा में दंडनीय अपराध था। छह महीने का सश्रम कारावास मिलता था। फड़क उठे। बोले यह बात हुई। इसके बाद कभी राजपूतों का जिक्र आता तो बड़े ध्यान और सम्मान से सुनते।

हम ताजा-ताजा हिंदुस्तान से सफर और हिजरत की धूल झाड़ते हुए अवतरित हुए थे। एक नए जन्म और आदर्श की इच्छा में अपना कालावधि से बढ़ा नाल न केवल स्वेच्छा और सानंद बल्कि अपने हाथ से काटा। घाव भर चला

था, पर भरते घाव की मीठी सलसलाहट का आलम ये कि 'जहाँ मालूम होती थी वहीं मालूम होती है' इसी आलम में एक दिन उनके पूछा-

'आपको हिंदुस्तानी कल्चर पसंद नहीं?'

'इसके जो हिस्से हमें पसंद आते हैं, उनसे बेशक निकाह कर लेते हैं?'

शिकार को रवाना होने लगे तो उन्होंने हमें सख्ती से मना किया कि शिकार पर रवाना होने पहले चाकू का नाम हरगिज-हरगिज नहीं लेना चाहिए। शिकार नहीं मिलता। चुनांचे यही हुआ। फिर एक छागल पानी की अपने गले में डाली और एक थैला मूँगफलियों का हमारे गले में टाँगना चाहा ताकि हमारे दोनों हाथ जिनसे आगे चल कर बहुत से काम लेने थे, खाली रहें। हमने पीछा छुड़ाने के लिए कहा, 'हम मूँगफली नहीं खाते।' बोले हमने तमाम उम्र बादाम खाए हैं मगर इस मेवे में खराबी क्या है?' निवेदन किया 'मूँगफली और आवारगी में खराबी ये है कि आदमी एक बार शुरू कर दे तो समझ में नहीं आता खत्म कैसे करे?' हमारी राय से सहमत होते हुए मूँगफली का तोबड़ा उन्होंने अपनी गर्दन में लटकाया। हम चीखते चिल्लाते ही रह गए और उन्होंने ये कहते हुए पखाल हमारे कंधे पर डाल दी। 'ऊंठ अड़ांदे ई लद्दी दे नी' (ऊँट को बिलबिलाते हुए ही लाद देना चाहिए। ये इंतजार नहीं करना चाहिए कि ऊँट बिलबिलाना बंद करे तो हम लादना शुरू करें।)

पूछा, 'मेवों में हुजूर को कौन-सा मेवा पसंद है?

बोले, 'निकाह का छुआरा'

साढ़े आठ बजे हम दोनों साइकिल पर मंघू पीर की पहाड़ियों की तरफ जंगली बकरे की तलाश में रवाना हुए। थोड़ी दूरी तय करने के बाद हमें कैरियर पर बैठने की इजाजत मिल गई। जरा देर बाद हाँफते हुए कहने लगे 'अब आप पीछे बैठे-बैठे आराम से पैंडिल मारिए, मैं हैंडिल चलाता हूँ। जरा एहतियात से पैंडिल मारिएगा, कराची का ट्रैफिक बावला है।

आदेशानुसार हम उनकी कमर पकड़ कर पैंडिल से जोर-आजमाई करने लगे। साइकिल चलाने के इस ढंग में एक निहायत बारीक कानूनी नुक्ता उन्होंने ये बताया कि पुलिस डबल सवारी के जुर्म में दोनों में से किसी का चालान नहीं कर सकती। जो हैंडिल पकड़े हुए है वो पैंडिल मारने में शरीक नहीं है और जो पैंडिल मार रहा है उसका बाकी साइकिल से कोई कानूनी तअल्लुक नहीं है। अगर आपको मजिस्ट्रेट ने एक महीने की भी सजा की तो सुअर के पाँव के नाखून खींच लूँगा और पैदल इलाका गैर में ले जाकर कत्ल कर दूँगा।

साइकिल के वो तमाम अतिरिक्त बचे हुए पुरजे और सजावटी टीम-टाम जिनकी गिनती मैकेनिकल अय्याशी में हो सकती थी, खुद को मिट्टी में मिला चुके थे और देखने में अब यह ढांचा साइकिल का एक्सरे मालूम होता था। हैंडिल पर न जाने कैसे एक शीशा लगा रह गया था जिसकी पहली नजर में यही उपयोगिता मालूम देती थी कि सवार को पता चलता रहे कि पिछला पहिया अभी तक साइकिल में लगा हुआ है कि नहीं। पूछा, 'इसमें तेल क्यों नहीं देते?' बोले, 'तेल देने में झंझट ये है कि फिर घंटी लगानी पड़ेगी।' साइकिल के मडगार्ड ही नहीं ब्रेक भी गायब थे, लेकिन चलाने के बाद ब्रेक की कमी महसूस नहीं होती थी, इसलिए कि साइकिल का जो पुरजा जिस जगह था, वहीं से ब्रेक का काम कर रहा था, फिर भी हमारे सुपुर्द यह काम था कि जैसे ही वो इशारा करें, हम जूते की एड़ी से

नंगे पहिए को आगे बढ़ने से रोकें। चार पाँच मील ब्रेक लगाने के बाद हमारे जूते की दाईं ऐड़ी झड़ कर कहीं गिर गई। खान साहब ने बाईं ऐड़ी प्रयोग करने का संकेत किया तो हमारे पास आदेश का उल्लंघन करने के अलावा कोई विकल्प न रहा। उस्तादी शागिर्दी अपनी जगह, लेकिन इससे तो आप भी सहमत होंगे कि एक पाँव से लंगड़ाना दोनों पाँव से लंगड़ाने से अच्छा है।

वो जो पंजाबी कहावत है गधे का एक मील और कुम्हार का सवा मील, सो वो हम पर हर मील खरी उतरी। जब सहनशक्ति जवाब देने लगी तो हमने शिकायत की कि कैरियत बहुत चुभ रहा है। बोले, 'आप मेरी सीट पर बैठ कर देखें तो पता चले कि चुभना किसे कहते हैं। आपको गलतफहमी हुई है। आपके कूल्हों पर गोश्त नहीं है। ये अस्ल में आपकी ही पर्सनल हड्डियाँ हैं जो आपको चुभ रही हैं। आपके अगर कूल्हे होते तो आज ये हालत नहीं होती कि जरा पायचां साइकिल की चेन में आ गया तो सारी पतलून उतर के टखनों पे आ रही। दरअस्ल आपके यहाँ कमर से लेकर टखनों तक पतलून के लिए कोई रोक है ही नहीं। खैर से आपकी उम्र ही क्या है। इस उम्र में तो कूल्हे नई फस्ल के पहले गरमे (खरबूजे) की तरह होते हैं। आपने लखतई (लौंडों का) नाच देखा है? कत्ल हो जाते हैं।'

'हमारा पालन बहुत पवित्र माहौल में हुआ है। जवानी में हमने मोर के नाच के अलावा और कोई नाच नहीं देखा।'

उतर कर घुटने पकड़कर झुक गए। 'फिर भी आप लोग खुश होते हैं तो मुजरे, मुशायरे करवाते हैं। आतिशबाजी छोड़ते हैं, लेकिन हम हर भावना को बंदूक से प्रकट करते हैं। हमारे यहाँ फिल्म का कोई गाना या डायलॉग पसंद आए तो दर्शक इसकी दाद पिस्तौल से देते हैं। डिश, डिश, डिशाऊं, हॉल में जितने अधिक पिस्तौल चलें, उतना ही मालिक खुश होता है कि फिल्म हिट हो गई।'

'गोली छत से टकरा कर उल्टी दर्शकों को नहीं लगती?'

'छत ऐसी बनाते हैं कि बारिश और गोली को गुजरने में तकलीफ न हो।'

खान गुलाम कादिर खान : फर्लांग भर डायलॉग के बाद हमने चुभन से परेशान हो कर स्वयं को हथेलियों के जैक पर उठा लिया तो कहने लगे आप ये बंदरों की-सी हरकतें क्यों कर रहे हैं? निवेदन किया, 'बंदर में हमें इसके अलावा कोई बुराई नहीं दिखाई पड़ती कि वो मनुष्य का पूर्वज है। शेष वर्णन ये कि कैरियर का एक इंच गहरा साँचा हमारे बदन पर छप चुका है और अब इसमें कई ऐसे कैरियर ढाले जा सकते हैं।'

हैंडल से दोनों हाथ छोड़कर ताली बजाई फिर उस चमड़े की सीट को, जिस पर वो बैठे थे, अपनी रानों में दबाते हुए अपने दादा खान गुलाम कादिर खान का किस्सा सुनाने लगे कि उन्होंने एक बार अपनी रानें भींच कर एक मुँहजोर घोड़े की पसलियाँ तोड़ दी थीं।

हमने कहा 'आपके दादा जानी मरहूम...' बात काटते हुए बोले 'दादा जानी? जान क्या मतलब? आप रेख्ती (उर्दू की स्त्रैण शैली) कबसे बोलने लगे ...वो खान, इब्ने-खान, इब्ने खान था।'

'आपके दादा खान और अब्बा खान मरहूम तो बहुत गर्वीले और खूंखार होंगे? तलवार, जी नहीं बंदूक के धनी होंगे?'

मूँगफली की कागजी झिल्ली उतारते हुए बोले 'इस शक में आपको शुब्हा क्यों होता है?

'एक बार की बात है, मेरा दादा गाँव नवां-कली, तहसील सवाबी, जिला मरदान में (नोट कीजिए, यह इलाका तंबाकू का दिल है फिर न कहिए मैं तंबाकू के बारे में कुछ बता के नहीं देता) हाँ तो मेरा दादा खान गुलाम कादिर खान नवां-कली की सड़क पर गोली खेल रहा था। उर्दू वाली कच्ची गोली नहीं अस्ल काँच की गोली। सात साल का था। इतने में अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर सफेद घोड़े पर सवार उधर आ निकला। गन्ने की औलाद ने बड़े अपमानजनक ढंग से अपने अर्दली को हुक्म दिया इस डैम छोकरे को हमारे रास्ते से हटा दो। मेरा दादा गुस्से से कंधारी अनार हो गया। ये बंदूक तो खैर घर पर थी। आव देखा न ताव, गले में लटकी हुई गुलैल में वही शीशे की गोली भर कर ऐसी ताक कर मारी कि ठीक निशाने पर यानी सुअर की दाईं आँख में जा कर बैठ गई और ऐसी फिट हुई कि निकाले से नहीं निकली। सारी उम्र वही लगाए फिरा।'

हमने पूछा 'उस जमाने में नवां-कली में वर्जीनिया तंबाकू पैदा होता था?'

जवाब मिला 'वो शेर दिल और गैरतमंद पठान था, एक बार किसी काम से दर्रा गया। वहाँ एक कोठरी के सामने चारपाई पर शिमरोज खान चादर ताने दोपहर की नींद ले रहा था। महमंद कबीले का सरदार और पुराना परिचित था। मेरे दादा ने सलाम किया मगर उसने लेटे ही लेटे 'पखेर रा गल्ले!' कह कर मिलाने के लिए हाथ बढ़ा दिया। कबायली तहजीब के अनुसार सम्मान को न उठा। मेरा दादा इस हतक से बहुत नाराज हआ। इसके दो महीने बाद वो जिक्र है। बारिश के दिन थे, दादा खान गुलाम कादिर खान कच्ची सड़क पर खड़ा औरतों से हँस-बोल रहा था कि सामने से शिमरोज खान कीचड़ में फचाफच करता, आता हुआ दिखाई दिया। दादा वहीं कीचड़ में चादर ओढ़ कर लेट गया। लोगों ने पूछा, गुलाम कादिर खान! खैर तो है? दादा ने जवाब दिया, उसका खाना खराब हो, शिमरोज खान ने मुझसे लेटे-लेटे हाथ मिलाया था, मैं भी लेटे-लेटे ही मिलाऊँगा।'

'तंबाकू की फस्ल मंडी में कब आती है?'

सवाल का नोटिस न लेते हुए बयान जारी रखा 'खान गुलाम कादिर खान सरदारों का सरदार था। बिना कुलाह के साढ़े छह फिट कद, डौलों की मछलियाँ इतनी सख्त कि नाई उन पर उस्तरा तेज कर लेता था। 98 साल की उम्र पाई। एक महफिल में बनारस की बिब्बो तवायफ नाचते-नाचते उसके सामने आई। न जाने कौन-सी अदा भा गई, अपनी हथेली पर खड़ी-खड़ी को अधर उठा लिया। तख्त पर सोता था मगर जब तक उस पर उसका खास गद्दा बिछा न हो, नींद नहीं आती थी। इसमें काफिर दुश्मनों की मूँछें भरी थीं। नाश्ते में बारह अंडे साबुत निगल जाता था।'

'साबुत?' हमारे मुँह से अनायास निकला।

'जी हाँ! मैंने तो किसी मुर्गी को आधा अंडा देते नहीं देखा। आखिरी समय तक दाँतों से दुंबे की नली तोड़ कर गूदा निकाल लेता। भुना हुआ आधा बर्रा चट करके पारा चिनार के आधा दर्जन सेब खा जाता था। कभी देखे हैं? चितरालन के गालों जैसे होते हैं। पारा चिनार के आगे जो गगनचुम्बी पहाड़ ईरान, अफगानिस्तान और पाकिस्तान की सीमा का संतरी है, उसे सफेद पहाड़ कहते हैं। सारा पहाड़ काला और नंगा है, सिर्फ चोटी पर बर्फ की बिकनी (Bikni) बारह मास अटकी रहती है। दादा ने यहाँ दो बर्फ़ानी चीते मारे थे। ननिहाल की तरफ से उसकी रगों में तातारी खून था। वो जब जोश मारता तो घोड़ी का दूध जुरूर चख लेता था। चालीस सफेद घोड़ियाँ अलग

अस्तबल में बंधी रहती थीं, जहाँ मर्दों का जाना मना था, घोड़े के सिवा कोई पाँव नहीं रख सकता था। उसके गालों पर सुनहरी रुआं चमका और आवाज दोशाखा होने लगी तो बाप के हुक्म के मुताबिक एक सौ एक चिड़ियाँ पर बाँध कर सुबह ही उसके सामने डाल दी जातीं। वो अपने जूतों तले उनके सिर एक के बाद दूसरा कुचलता चला जाता था। कुरड़, कुरड़, कुरड़। एक साल तक यही चलता रहा ताकि दिल मजबूत हो जाए। मेरा दादा भी घोड़ों पर जान छिड़कता था। दो मील दूर से, टाप से यह पहचान लेता था कि घोड़े पर कोई चौड़ी छाती वाला शेर, दिलेर सवार है या डरपोक। कभी रकाब पे पाँव रख कर घोड़े पर नहीं चढ़ा। जब वो दुश्मन को ढूँढने के लिए तूरे-खम के पहाड़ी रास्तों में घोड़ा डालता तो दूर-दूर तक सुमों से छूटती हुई चिंगारियों की जगमग-जगमग बन जाती थी। रात-दिन घुड़सवारी के कारण उसकी टाँगें ब्रेकिट की तरह मुड़ गई थीं। उसने पूरे 49 साल यानी अपना आधा जीवन घोड़े की नंगी पीठ पर गुजारा।'

'और बाकी आधा?'

'उसने ग्यारह औरतें कीं। खरा, नर आदमी था। बगैर ढाल और कवच के तलवार चलाता था।'

'मगर आप तो कह रहे थे आपके स्वर्गीय दादा के पास यह बंदूक थी।'

'हाँ! थी, मगर बंदूक से सिर्फ काफिरों को जहन्नुम रसीद करता था। कबायली रिश्तेदारों और मुसलमानों को तलवार से शहीद करता था।'

कुरेदते हो जो अब राख , जुस्तजू क्या है

हमारी तंबाकू की खड़ी फस्ल को पाला मार गया। कुछ देर बाद हमने छेड़ा, 'उस्ताद कभी आपने इश्क किया है?'

बंदूक छितियाते हुए बोले 'खुदा के लिए चुप रहिए, मुझे जंगली बकरे की मस्त बू आ रही है। बोक बकरा लगता है?'

हम मूली की भुजिया और परांठे की बाकी बची हुई डकार निगलते हुए चुप हो गए। थोड़ी देर बाद हमने राख को फिर कुरेदा, 'खान साहब आपने कभी इश्क किया है?'

'आप लौंडे के बारे में पूछ रहे हैं या हिजड़े के?' वो खुद ठिठोली पर उतरे।'

'आपको कभी कोई औरत अच्छी लगी?'

'मैंने तो कोई जवान औरत बदसूरत नहीं देखी, मगर आप भी तो अपने पत्ते दिखाइए, कभी किसी से इश्क किया? शादी माँ-बाप की पसंद से की या अपनी पसंद से की?'

'मैंने अपनी बीबी की पसंद से शादी की।'

घुटने पकड़ कर हँसने लगे, 'आपकी शादी तो इस तरह हुई जैसे लोगों की मौत घटित होती है। अचानक, बिना मर्जी के।'

कुछ देर के बाद जिज्ञासा की, 'शादी के बाद कोई शिकार-शिकूर हुआ या मचान पे टंगे-टंगे हाँका-शांका ही देखते रहे। कोई affair ?'

'मुफलिसी वज्हे-पारसाई है!' (निर्धनता आत्मनियंत्रण का कारण है)

'तो मुफलिस ही से सही।'

'बहम्दुलिल्लाह! (ईश्वर की कृपा से) हम बहुत संतुष्ट और मुकमह हैं।

'यह मुकमह क्या बला होती है जी?'

'मुकमह उस ऊँट को कहा जाता है जो सैर-सपाटा करते हुए हौज पर सिर ऊँचा करके खड़ा हो जाए।'

'कुरआन की कसम खाके बताओ ये शब्द तुमने किससे सीखा?'

'जुमे की नमाज के बाद मौलवी खैरुद्दीन ने इसकी अच्छाइयाँ बयान की थीं!'

'तो यूँ कहो। मौलवी चाकीवाड़ा में ही रहता है। उसकी तो दो बीबियाँ हैं। तीसरी मौलवियाइन कुछ दिन हुए मौत के कुँए में मोटरसाइकिल चलाने वाले के साथ भाग गई और क्या-क्या अच्छाइयाँ बयान की थीं उस मुकमह ने?'

'जन्नत की शराब, हूर और गुलाम के अलावा कई चीजों का जिक्र किया था और कहा था कि जो मुसलमान अपनी नजरें नीची रखेगा और पवित्र रहेगा, उसको जन्नत में अपनी ही बीबी हूर की शक्ल में मिलेगी।'

'खू!!!! फिर मरने से फायदा ही क्या हुआ?'

रैड क्लिफ से हमारी आत्मीयता : इस अनूठे सफर में सबसे कम तकलीफ साइकिल को उठानी पड़ी बल्कि हमें तो साइकिल भी उठानी पड़ी। आगे-आगे रैड क्लिफ चल रहा था, उसके चरण चिन्हों पर हम। कुल मिलाकर फायदे और खूबियों के रैड क्लिफ का एक खुला फायदा ये दिखाई पड़ा कि लौंडों ने साइकिल पर पत्थर नहीं मारे, कुत्ते के मारे। रास्ते में खान साहब खूं-खूं खाँसने लगे, पूछा 'खांसी हो गई है?' बोले, 'ऊंह कोई विशेष बात नहीं। सिगरेट का तंबाकू खत्म हो गया। उससे निकोटीन की कमी हो गई है।'

हमने कहा 'नहीं आप कई दिनों से खाँस रहे हैं। इलाज क्यों नहीं कराते?

बोले 'डॉक्टर शफी को गला दिखाया था। फीस लेकर कहने लगा, सिगरेट छोड़ दो। मैंने कहा, अगर सिगरेट ही छोड़नी होती तो तेरे पास क्यों आता?' जरा देर दम लेने के लिए एक पपीते के पेड़ की नाम भर की छाँव में बैठे तो हमने रैड क्लिफ की पूँछ पर हाथ फेरा कि यही हिस्सा हमें उसके जबड़े से सबसे दूर नजर आया। अलावा इसके, उसे खुजली भी हो रही थी। एक महीने पहले खान साहब को हो चुकी थी। चलने से पहले उन्होंने इसे कार्बोलिक साबुन से खूब रगड़-रगड़ कर नहलाया। लेकिन साहिबो! गीला नहाया हुआ कुत्ता सूखे कुत्ते से अधिक पलीद होता है।

हमें रैड क्लिफ की पूँछ सहलाते और चर्चा के प्रारंभ को चर्चा के अंत को हिलाते देख कर बहुत खुश हुए। कहने लगे 'गौर कीजिए तो भौंकना कुत्ते का अधिकार और पूँछ हिलाना उसका कर्त्तव्य है। इस काफिर के सामने अफगान ग्रेहाउंड भी पानी भरता है। आस-पास की गलियों की कुतियाँ इस पर जान छिड़कती हैं। इस कुत्ते की वफादारी का अभी से ये हाल है कि जिस रास्ते से मैं गुजर जाऊँ-चाहे वो कितना उलझाव भरा हो इसके दो घंटे बाद आप इसे आँखों पर पट्टी बाँध के छोड़ दें तो ये मेरी खुशबू लेता इस लीक से एक इंच भी इधर-उधर नहीं होगा।'

'लीक न कहिए, नसवार का राजपथ कहिए।'

पान और कल्चर का रचाव : नसवार का नाम आते ही बिगड़ गए। 'सरकार मुजरा अर्ज है! पान, तंबाकू, गिलौरी, किवाम के बारे में हुजूर की क्या राय है?'

'पान की क्या बात है, पान में जब तक कत्था, चूना, छालियाँ और कल्चर एक खास अनुपात और नफासत से घोटे न जाएँ, पान पान नहीं बनता। हमने ये भी देखा कि आदमी को खाना अपनी बीबी के हाथ का पचता है और पान पराई के हाथ का रचता है। साजिद रजा लखनवी तो कहते हैं कि गंगा-जमनी खासदान से वरक लगी गिलौरी उठा कर सही उच्चारण और अंदाज से 'आदाब अर्ज' कहने के लिए तीन नस्लों का रचाव दरकार है।'

'गुस्ताखी मुआफ! मेरा खयाल है कि अगर तीन नस्लें इस तरकीब से पान खा लें तो चौथी नस्ल 'आदाब अर्ज' करने के लिए पैदा ही नहीं होगी और हाँ! ये भी तो आप ही ने बताया था कि... रानी केतकी... की हीरोइन ने अपने मुँह की पीक से अपने प्रेमी को प्रेम पत्र लिखा था और ये भी आपने बताया था कि वाजिद अली शाह जिस जमाने में मटिया बुर्ज में अंग्रेजों की कैद में थे तो उन्होंने लखनऊ से माशूक महल के हाथ के कटे हुए नाखून और अपनी एक चहेती लौंडी के पान का उगाल बतौर निशानी मँगवाया था। हम नसवार से कम से कम ये काम तो नहीं लेते। महबूबा को चिट्ठी हम मुँह की राल से नहीं, खून से लिखते हैं। अपना खून नहीं, दुश्मन का।'

'किबला! खत पत्तर तो पोस्ट ऑफिस के जरिए हम जैसे मजबूर, अपाहिज भेजते हैं। आप तो खुद चर्चा के विषय को मय चारपाई उठा लाते हैं।'

'अगर एक शब्द भी जबान से और निकला तो यहीं तुम्हारा रेता (पूरे दुम्बे को भून कर बनाया गया अफगानी गोश्त) बना दूँगा।'

अब्दाली की नाल का अगला हिस्सा पतलून की बैल्ट से हैंडिल के साथ बाँध दिया गया। उसका धड़ कभी हम बाएँ हाथ से थाम लेते कभी कंधे पर रख लेते। कुंदा पिछले पहिए से तीन फिट पीछे निकला हुआ था। टाई जियादा फड़फड़ाने लगी तो हमने उस पर बाँध दी-जिस तरह लोहे और सरियों के ट्रक के पीछे लाल झंडी लहरा दी जाती है। हमने पूछा हमारी गैर-मौजूदगी में आप अब्दाली किस तरह ढोते थे?

बोले, ' आप भी कैसे Embrassing सवाल करते हैं।' निवेदन किया, 'हम तो केवल अपने ज्ञान को बढ़ाने के लिए पूछ रहे थे।'

हमारे ज्ञान की प्यास पर धीरे से मुस्कुरा दिए, बोले, 'बिहार कॉलोनी का एक मलंग इतवार के इतवार मंघू पीर 'दे उसका भला, जो न दे उसका भला' करने जाता है। उसे पीछे बिठा लेता हूँ। अंधा है। आँख वाले सभी फकीर उससे

जलते हैं। फकीर के लिए आँखें न होना बड़ी नेमत है।'

अगर फिरदौस : आखिरी ब्रेक लगा कर इधर-उधर देखा तो विश्वास न हुआ कि ये जगह उनकी शिकारगाह हो सकती है। मंघू पीर के उथले तालाबों के किनारे जंगली बकरों के पगमार्क कहीं न दिखाई दिए। अलबत्ता कुछ बूढ़े मगरमच्छ और उनसे भी अधिक बूढ़े कछुए गोते लगा रहे थे और इस भयानक बीमारियों के पानी को मामूली खाल की बीमारियों के रोगी अपने बदन पर डाल रहे थे। यहाँ सायकिल एक तंदूर वाले के सुपुर्द करके और चार तंदूरी रोटियों की एडवांस बुकिंग कराके शिकार की तलाश में हम पैदल निकले। खान साहब ने मंघू पीर की पहाड़ियों पर नजर डाली तो देर तक अफसोस किया किए कि सैकड़ों साल से फिजूल, बेकार पड़ी हैं वरना कबायली जंग के लिए इससे बेहतर जगह कसम खुदा की, जमीन पर तो क्या फिरदौस में भी नहीं मिलेगी।

हमीं अस्तो हमीं अस्तो हमीं अस्त

अब्दाली चलती है : उन्होंने अब्दाली के कुंदे को एक तीन फिट गहरे गड्ढे में टिका दिया और खुद उसकी कगार पर खड़े हो गए। तब कहीं नाल उनके कानों तक आई। अब बंदूक भरने की क्रिया शुरू हुई। बंदूक भरते जाते और उसकी प्राण लेने वाली खूबियाँ बयान करते जाते।

'हॉलैंड एण्ड हॉलैंड, वैब्ले स्कॉट और परडी की बंदूकें तो इसके सामने टीन की फुकनियाँ हैं, फुकनियाँ'

टॉयलेट पेपर, गत्ते की टिकलियाँ, ऊँट की मेंगनी, बबूल के पीले-पीले फूल, बारूद, छर्रों और गालियों की अनगिनत तहें जमायी गईं। हर तह के बाद लोहे के गज से ठोंकने, कूटने का काम हमारे सुपुर्द हुआ और हम तह को कूटते रहे, कूटते रहे जब तक कि सारा मसाला और हम एक जान न हो गए।

आखिर में टोपी चढ़ायी गई अगर हम ये कहें कि इस कार्यवाही में एक घंटा लगा तो अतिशयोक्ति होगी, इसलिए कि 55 मिनट लगे थे जिनमें नाबालिग ऊँट की मेंगनी तलाश करने के 10 मिनट हमने शामिल नहीं किए। तीन-चार बार फुस्स होने और उतनी ही भाषाओं में गाली खाने के बाद अब्दाली चली तो एक आलम था।

हमने ऐसा धमाका जिंदगी में नहीं सुना था। हम तो हम, चरिंदे, परिंदे और गजिंदे तक अपनी पाँचों इंद्रियां या उनकी जितनी भी इंद्रियां होती हैं, खो बैठे। भेड़ों को हमने जीवन में पहली बार अलग दिशाओं में भागते देखा। मंघू पीर के मगरमच्छ घबरा कर तालाबों से बाहर निकल आए और दर्शक तालाबों में कूद पड़े। जिस जगह हम पानी की छागल छाती पे रखे चकरा कर गिरे थे वहाँ से हमने कुछ देर तक एक पहाड़ी को भी कलाबाजी खाते देखा। वो तो खुदा ने खैर की वरना बीच में अगर गड्ढा बाधा न बनता तो खान साहब बंदूक के धक्के से उस पार न जाने कितनी दूर पत्थरों में जाकर गिरते। भूचाल ही तो आ गया। वातावरण में दूर-दूर कागज के टुकड़े, सिगरेट की पत्ती, गत्ते के डाट, धूल, धुआँ और न जाने क्या-क्या उड़ने लगा। उन तमाम चीजों की मदद से उन्होंने छर्रों को शिकार तक पहुँचाया। हर तरफ धुआँ ही धुँआ था। जहाँ तक नजर काम करती थी-यानी छह इंच तक-कुछ नजर नहीं आता था। हमने अपने चेहरे पर जमी हुई कालिख को रूमाल से पोंछा। अभी तक माहौल में अनगिनत चीजें मय हमारे होश के उड़ रही थीं। छर्रे तो छर्रे, नाबालिग ऊँट की मेंगनी तक मय टॉयलेट पेपर शिकार का पीछा कर रही थी। अब कुछ-कुछ समझ में आया कि मराठे पानीपत में मैदान छोड़ कर क्यों भाग खड़े हुए थे। खान साहब ने कुछ देर रुकने का इशारा किया ताकि हर उड़ने वाली चीज धरती पर गिरे तो पता चले कि उनमें कौन सी अपंछी थी। फिर 5 मिनट तक दोनों ने हर गिरी हुई चीज को उठा-उठा कर देखा कि ये भूतपूर्व पंछी तो नहीं। बहुत ढूँढने

के बाद, कीकर की ओट में एक तीतर का बच्चा दिखाई पड़ा जिसे हमने रूमाल डाल कर आसानी से पकड़ लिया। ये उड़ नहीं सकता था और उसके बदन पर छर्रे का कोई निशान नहीं था।

खिसियाने हो गए। फरमाया! कि पैंतालीस साल पहले मैं अपने सौतेले भाई के सिर पर अखरोट रखकर उड़ा देता था लेकिन अब ध्यान नहीं बैठता। निशाना चूकते ही वो पंछी की वंशावली की जनाना शाखों पर हल्ला बोल देते। सब जानवरों और पंछियों को पश्तो में गाली देते लेकिन कबूतर से उर्दू में संबोधित होते। कहते थे कि कबूतर सैय्यद होता है।

हमारी चपाती का उल्टा - सीधा : तीन फाख्ताएँ गिराने के बाद उन्होंने हमें सूखी टहनियाँ, तिनके, छपटियाँ और झाड़-झंखाड़ जमा करने का हुक्म दिया और खुद चूल्हे का डोल डाला। अब्दाली में परिंदे के पर नोचने और पेट के अंदर की चीजें निकालने का ऑटोमेटिक इंतजाम था। वो इस तरह कि दस फिट की दूरी से (यही बंदूक की लंबाई होगी) छर्रों की बाढ़ से उसके सारे पर मय बाजू उड़ जाते थे। कई बार तो मरहूम का कीमा और बची चीजें देखकर ये बताना मुश्किल हो जाता था कि उसका संबंध किस नस्ल से है। खान साहब ने नुची-नुचाई फाख्ताएँ बंदूक के गज में पिरो कर आग पर भूनीं। भूनते-भूनते कहने लगे कि पतीली से सभ्य आदमी वो काम लेता है जो पुराने समय में पेट से लिया जाता था यानी खाने को गलाना। आपकी कराची में तो कीमे में भी पपीते की गलावट लगाते हैं। हद ये है कि सादा पानी पचाने के लिए उसमें फ्रूट सॉल्ट मिलाते हैं। हमारे यहाँ तो रोटी भी पत्थर पर पकती है और आटे का तो क्या कहना। जिस चक्की का पिसा हम खाते हैं वो नदी के किनारे फाख्ता की तरह कू-कू-कू-कू करती है और आदमी को जन्नत से निकलवाने वाली चीज (गेहूँ) पीसती है। गुस्ताखी मुआफ! कराची की रोटी तो दोनों तरफ से उल्टी मालूम देती है। कराची भी अजीब शहर है। आप हमारी नान खाकर बाड़ा का दो घूँट पानी पी लें तो कसम खुदा की या तो हुकूमत के खिलाफ बगावत कर दें या काजी के सामने फिर से हार-फूल पहन कर बैठ जाएँ।

खान साहब ने दो फाख्ताएँ इनायत कीं और एक छोटी सी टोटर और फाख्ता पर सब्र किया। हमने संकोच में एक बड़ी फाख्ता वापस करनी चाही तो उन्होंने ये कह कर इन्कार कर दिया कि ये ठीक से हलाल नहीं हुई थी। रोटी के बारे में ये तय हुआ कि उसका सूखा भुगतान तंदूर पर पहुँच के कर देंगे। हमारी साबुत फाख्ता में छर्रे ही छर्रे भरे हुए थे, जिन्हें हम पपोल-पपोल कर इस तरह थूक रहे थे जैसे जिनंग फैक्ट्री बिनौले फेंकती जाती है कि रूई की रूई, बिनौले का बिनौला अलग हो जाता है।

खाने के बाद छागल से पानी निकाल कर तामचीनी के मग में उबाला, थैले से चाय की पत्ती और चीनी निकाली और एक बकरी को पकड़ कर चौथा तत्व निकाला।

हमारा कच्चे घड़े से दरिया पार करना : शिकार खत्म हुआ तो हम फिर अपना मतलब जबान पर लाए। तंबाकू के बारे में भी कुछ हो जाए। कहने लगे 'इस हराम फस्ल के बारे में एक बात ये और याद रखिए कि अकेला पौधा है जिस पर कोई पंछी चोंच नहीं मारता। इसलिए आज तक कोई पंछी गले के कैंसर और आर्थिक परेशानियों में नहीं पाया गया। आप नोट्स लेने के शौकीन हैं, बेशक नोट कर लीजिए।'

हमारी हिम्मत बढ़ी। पूछा 'इसकी खेती के लिए क्या-क्या जुरूरी है?'

बोले 'तंबाकू के पौधे के लिए मिट्टी और खाद बहुत जुरूरी हैं।'

पूछा 'और पानी?'

बोले 'हाँ वो भी होना चाहिए'

ये थी अमृत की वो बूंद जो सारे सागर को मथ कर हमने निकाली। वापसी में इधर-उधर के विषयों की ओट से निकल कर हमने आखिरी वार किया।

'जिला मरदान में तंबाकू सबसे पहले किस सन् में उगाया गया?'

बोले 'ये कौन सा सन् है?'

'याद नहीं।'

'नूरजहाँ का बाप कौन से सन् में अपनी बेटी को सामान में बाँध-बूंध कर हिंदुस्तान में टपका था?'

'याद नहीं।'

'सिकंदर लोधी की माँ ने बाबर को कौन से सन् में कोहेनूर हीरे की भेंट दी थी?'

'याद नहीं।'

'आप कितने साल पहले पैदा होते तो नादिरशाही कत्ले-आम में मारे जाते?'

'खबर नहीं।

'तो फिर तंबाकू की खेती का सन् जाने बगैर आप अपनी मूली की भुजिया हज्म नहीं कर सकते? इल्म के जोर से आप स्कूल मास्टरी कर सकते हैं, बैंक में अफसरी नहीं कर सकते। कच्चे घड़े से ये दरिया पार नहीं होने का। फलसफा पढ़ के आदमी सिर्फ एक काम कर सकता है, दूसरों को फलसफा पढ़ा सकता है। फलसफा पढ़ने के बाद ब्याज खाने से सर्दी-गर्मी हो जाती है।

लो वो भी कहते हैं कि ये बेनंगो - नाम है

शाइस्ता लोग कैसे गाली देते हैं : पाकिस्तानी बिजनेसमैन, ब्यूरोक्रेट और बैंकर की डिक्शनरी में 'इंटेलेक्चुअल' से जियादा सड़ी गाली कोई नहीं और हम ये बात सारी उम्र यही गाली खाके बेमजा हुए बगैर कह रहे हैं। शुरू-शुरू में ये अजीब-सा लगा था कि डिप्टी जनरल मैनेजर से लेकर चपरासी तक, सभी हमारी एम.ए. की डिग्री का मजाक जुरूर उड़ाते हैं। हालाँकि हमने कई बार समझाया कि हमने फिलॉसफी में एम.ए. केवल समय काटने के लिए किया था। शिक्षा बिल्कुल उद्देश्य नहीं था। ज्ञान की बढ़ती लंबाई पर आर्थिक पोशाक तंग ही नहीं चुटकियों से जगह-जगह से मसकने लगी थी। हद ये कि बैंक के एकाउंटेंट भी जो एक मिडिल स्कूल से फारिग हुए थे और खुद को घोषित तौर पर अंडर-ग्रेजुएट कहते थे, वो भी जहाँ हमसे जोड़-घटाने की कोई छोटी-बड़ी गलती हो जाए तो इसी डिग्री पर हाथ डालते थे। एल.एल.बी. को तो फिर भी लोग एक पूरा अपाहिज समझ कर माफ कर देते थे मगर फिलॉसफी का एम.ए.??? हमारे यहाँ मजाक काने का उड़ाया जाता है। अंधे को अंधा और नाई को नाई नहीं कहते,

हाफिज जी और खलीफा कहते हैं। शालीनता की सीमा ये कि फैज साहब मुश्किल पसंद आदमी ठहरे, अपनी शायरी के बदले में वस्ल के अलावा कुछ और भी राहतें माँगते हैं। सूली और फाँसी से कम की बातें नहीं करते लेकिन हम तो अपने आप को धरती की सत्ह से इतनी ऊँचाई पर देखने के इच्छुक न थे। फिर ये बुजुर्ग क्यों हमें रोज़ सुबह 9 बजे से शाम के 7 बजे तक उस डिग्री की सूली पर चढ़ाये रखते थे। हम खुद भी नीचे उतरना अधिक जानलेवा समझते थे। इसलिए कि नीचे तो वो खुद होते थे। हमने कहीं पढ़ा था कि रूस के बादशाह जार ने अपनी मलिका कैथरीन को ये सजा दी थी कि उसके प्रेमी का सिर काट कर स्प्रिट के शीशे के मर्तबान में उसके कमरे में बिल्कुल आँखों के सामने सजा दिया था, सो हमारी डिग्री भी कुछ इसी तरह की चीज निकली।

हमने कहा 'आप सही कहते हैं। जो कुछ पढ़ा लिखा वो हमारे कुछ काम न आया। फिलॉसफी में एम.ए. तो बाद की बात है हम तो जीवन की कोई गुत्थी मैट्रिक के एलजबरे की मदद से भी न सुलझा सके। तीन दिन हुए बच्ची सख्त बीमार थी। उसके लिए इंजेक्शनों की जुरूरत पड़ी। हमने यूनिवर्सिटी में फर्स्ट आने का गोल्ड मेडल, जो कई साल से बेकार पड़ा था, प्रोफेसर काजी अब्दुल कुद्दूस के हाथ सर्राफे में बिकवा दिया। ढाई तोले का गोल्ड मेडल 27 रुपए में बिका। आगरा यूनिवर्सिटी ने चाँदी पर सोने का पत्तर चढ़वा दिया था। काजी अब्दुल कुद्दूस ने सात रुपए नक्द और 27 रुपए की पूरी रसीद हमें थमा दी। कहने लगे बीस रुपए जरा खर्च हो गए। बड़ी सख्त जुरूरत थी।'

खान साहब चौंक कर साइकिल से उतर पड़े। 'अच्छा हम पर भी जरा पैगम्बरी वक्त आन पड़ा है। ये अँगूठी बेचनी है। सर्राफ का पता क्या है? भरोसे का आदमी है?'

दूसरे दिन लंच की छुट्टी के बाद हमारे पास आए और अलग ले जाकर एक लिफाफा हमें थमा दिया। उसमें हमारा गोल्ड मेडल था, उनकी उँगली में अँगूठी नहीं थी।

शिकार तो एक बहाना था वरना अस्ली उद्देश्य तो अपनी तबीयत और अब्दाली का जंग दूर करना था। उस सहेली को कंधे पर रखते हुए एक बार बोले 'खैर मैं तो फिर भी पित्ता मार लूँ मगर इस पठानी को तो साप्ताहिक वर्ज़िश चाहिए। मंघू पीर की जिन पहाड़ियों को उखेड़ कर कबायली इलाके में ले जाना चाहते थे, हमें तो ऐसी लगीं जैसे रेगिस्तान को गर्मी दाने निकल आए हों, बारिश के एक ही छींटे में भूसी सी उड़ जाएँगी। इस ऐतिहासिक शिकार के बाद समानता सी हो गई।

न कोई बंदा रहा और न कोई बंदानवाज

उस्ताद शागिर्द का अंतर मिट गया। मतलब ये कि दोनों एक दूसरे के उस्ताद हो गए और निजी विषयों में एक दूसरे को न सिर्फ गलत मशवरा देने लगे बल्कि उन पर दृढ़ता से अमल भी करवाने लगे। शाम को तोड़ के समय एक दूसरे के काम में हाथ बंटाते। आपसी सलाह मशवरे के बिना कभी कोई गलती नहीं करते। बैंक के लेजर-पन्नों पर सामान्यतः तीस-पैंतीस एंट्रियां होती हैं। उन्हें तेजी के साथ टोटल करने में उन दिनों में हमें ाखासी मुश्किल होती थी। कभी पाई खा जाते, कभी आने बढ़ा देते और रुपयों का सही हासिल लगाना तो कभी याद ही नहीं रहता था। (खान साहब तो खींच तान के हमारे आनों की नाभि (नाफ) तो बिठा देते मगर दोनों तरफ की पसलियाँ तोड़ देते यानी पाइयों और रुपयों का टोटल नहीं मिलता था। प्रोफेसर काजी अब्दुल कुद्दूस एक शाम अपने दर्शन करवाने बैंक आए तो हमने हासिल भूल जाने की आदत का जिक्र किया। इर्शाद किया 'आप भी वही कीजिए जो वाजिद अली शाह करते थे।'

यहाँ बैंक में ? : 'और क्या वाजिद अली शाह मटिया बुर्ज में नजरबंद होने के बाद नमाज पढ़ने लगे थे मगर रकअतें भूल जाते थे। इसका हल ये निकाला गया कि एक चोबदार हर रकअत के बाद एक बादाम जानमाज के हाशिये पर रख देता था। अवध के नवाब हर सिजदे के बाद कनखियों से बादाम गिन कर यह फैसला करते उन्हें फिर खुदा के हुजूर रुकूअ और सजदे करने हैं या आराम से घुटनों के बल बैठ कर अत्तहियात पढ़नी है।'

हमारा अर्जी लिखनाः एक दिन कहने लगे कि आपकी अंग्रेजी हालाँकि इतनी अच्छी नहीं जितनी मेरी पश्तो फिर भी एक अर्जी अंग्रेजी में इस विषय की लिख दीजिए कि मुझे फौरन तरक्की दे कर मरदान का मैनेजर बना दिया जाए। जोर पैदा करने के लिए अंत में यह बढ़ा दीजिएगा कि उस इलाके में जो रकमें डूबेंगी उन्हें सिवा मेरे कोई सुअर वसूल नहीं कर सकता। पश्तो में एक कहावत है जिस इलाके का हिरन होता है वहीं के कुत्तों के काबू चढ़ता है। इसका शाब्दिक अनुवाद कर दीजिएगा। हमने कहा मगर मरदान में तो बैंक की कोई ब्रांच नहीं है। बोले मुझे तरक्की देनी है तो फटीचर बाप की औलाद को ब्रांच भी खोलनी पड़ेगी, और हाँ यह भी साफ-साफ लिख दीजिए कि अगर मेरी तरक्की नहीं हुई तो मैं पड़ौसी की लड़की को ट्यूशन पढ़ानी शुरू कर दूँगा। हमने कहा ये धमकी तो पड़ौसी को दहला सकती है, अंग्रेज जनरल मैनेजर इससे नहीं डरेगा। झल्ला कर बोले तो फिर ये वार्निंग दे दीजिए कि मैं Spanish civil war में चला जाऊँगा। हमने कहा मगर ये गृहयुद्ध तो बंद हो चुका। बोले, ओफ्फोह! मैंने दो दिन से अखबार नहीं देखा। निवेदन किया, इसे खत्म हुए तो तेरह साल हो गए। बोले अच्छा तो फिर कोई और धमकी लिख दीजिए।

हमने एक निहायत विनम्र अर्जी एक उँगली से हिज्जे कर कर के इस तरह टाइप की, जैसे मलिका पुखराज और ताहिरा सय्यद गाना टाइप करती हैं। इसमें माननीय का ध्यान निवेदक की काबलियत, बुढ़ापे, अधिक औलाद और गबन से पैदायशी नफरत की तरफ आकृष्ट कराया गया। तकलीफ के साथ दस्तखत करने के बाद उन्होंने उसके चारों तरफ अपने हाथ से काला मातमी हाशिया खेंचा। अब एक-एक से कहते फिर रहे हैं कि मैंने जनरल मैनेजर से जवाब तलब कर लिया है कि मेरी तरक्की तीन साल से क्यों रुकी हई है। कल ही सुअर ने मुझे बुलाया। मेरे शोकाज नोटिस को अक्षर-अक्षर पढ़ा। अपना पार्कर हथेली पे रख के मुझे पेश किया और कहने लगा खुद अपना प्रोमोशन आर्डर लिखो और जहाँ चाहो खुद को पोस्ट कर लो।

आश्चर्य हमें इस बात पर हुआ कि छह सप्ताह के अंदर-अंदर मरदान में बैंक की ब्रांच खुल गई और वो सचमुच उसके मैनेजर बना दिए गए। उन्होंने हमें कामयाब दरख्वास्त लिखने पर बधाई दी और वो उँगली चूमी जिससे हमने टाइप किया था। उस दिन से वो हमारी अंग्रेजी की योग्यता और हम उनकी अंग्रेजी की योग्यता की गुणग्राहकता के कायल हो गए। ये उनकी मुहब्बत थी कि उठते-बैठते हमारी अर्जी लिखने की दाद देते वरना उन्हीं के कथनानुसार, फंसी हुई घोड़ी निकलवाने के बाद कौन किसी को पहचानता है।

हमने इस घटना का जिक्र करते हुए मिर्जा से कहा 'देखा ये सब आत्मसंकल्प के करिश्मे हैं। आत्मसंकल्प से पहाड़ भी अपनी जगह से हिल जाते हैं।'

बोले 'अगर तुम पहाड़ के आत्मसंकल्प की बात कर रहे हो तो मैं भी सहमत हूँ।'

स्वतंत्र-स्वभाव नियम, कानून की पाबंदी नहीं मानता था। रमजान में हमारे साथ स्टेशनरी रूम में चाय पीते हुए बोले, 'रमजान में जरा ये परेशानी है कि सहरी (रोजे रखने से पहले भोर में खाया जाने वाला खाना) और इफ्तारी

(शाम को रोजा खोलने का खाना) करने से लंच और डिनर भूख में फर्क आ जाता है।' हमने पूछा, 'हुजूर ने कभी खाना भी छोड़ा है।'

बोले 'हाँ! बारह साल पहले तीन रोजे रखे थे। हर एक से तकरार, जिससे देखो गोली-गुफ्तार, इसको झिड़का, उसको डाँटा और तो और अपने बॉस को तमांचा मार दिया कि रोजा रखता है, नमाज क्यों नहीं पढ़ता? इसके बाद दोनों लोगों ने रोजों से तौबा की। चौथे रोजे से बासी ईद तक एक-एक के घर जा कर अलग-अलग माफी माँगता रहा। अब मुझमें इतनी क्षमता नहीं कि हर ऐरे-गैरे की ठोड़ी में हाथ दे दे कर माफियाँ माँगता फिरूं।

नौशेह्रा की लड़ाईः जिस समय का यह जिक्र है उसके अट्ठारह-उन्नीस साल बाद 1970 में नौशेह्रा जाने का अवसर मिला। जनवरी की एक निहायत ठंडी सुबह थी। झुके कंधे वाले तूरे-खम के पहाड़ों पर दो दिन से बर्फ पड़ रही थी। हम बैंक की निर्माणाधीन बिल्ंिडग के सामने धूप में नक्शा फैलाए ठेकेदार से उलझ रहे थे। झगड़े का पहला कारण तो यह था कि दूसरी मंजिल पर जहाँ जीना खत्म होना था, सीढ़ी से छत की ऊँचाई ठेकेदार के कद के बराबर थी। जिसका मतलब यह था कि पाँच फिट एक इंच से अधिक लंबा कोई शख्स रात को तेजी से चढ़ता चला जाए तो आखिरी सीढ़ी पर उसके घमंडी सिर का जुरूरत से जियादा हिस्सा अपने-आप अलग हो जाएगा। ठेकेदार का पक्ष था कि पहले तो नक्शा पास करते समय हमारी आँखें खुली हुई थीं दूसरे ये तो एक तरह का safty device है। बैंक से सेंध लगाने वालों और डाकुओं की सिर कटी लाशें आए दिन ऐसे निकलेंगी जैसे गरदनतराश चूहेदान से लालची चूहों की लाशें। दूसरी समस्या यह थी कि ड्राइंग रूम ऊपरी मंजिल पर था और जालिम ने ढलान ऐसा रखा था कि उस मंजिल के सारे कमरों और सारी छत का पानी पिछली बारिश में ड्राइंग रूम में खड़ा हो गया। खैर, इसका हल तो उसने यह निकाला कि ड्राइंग रूम में एक बड़ी नाली निकाल दी जाएगी। उससे पानी की आखिरी बूंद तक खिंच कर नीचे खड़ी हुई कार पर गिरेगी। जिससे वो धुलधुला कर झमाझम करने लगेगी। नक्शे में यह कार बराबर दिखाई गई थी। बेध्यानी में हमने यह नोटिस नहीं किया था कि यह इतनी चमक क्यों रही है?

तीसरा सिरदर्द यह था कि बिल्डिंग के सामने एक शीशम का पेड़ था। जिसने मुख्य दरवाजे और साइन बोर्ड को इस तरह अपनी ओट में लिया था कि बैंक के नाम का सिर्फ ऊप पढ़ा जा सकता था। ठेकेदार का विचार था, अक्लमंद को इतना ही इशारा काफी है, इसलिए कि और कोई बैंक अपने नाम से पहले the नहीं लगाता। फिर यह भी कि पाला-पोसा पेड़ काटना गुनाह होता है। ये पेड़ नक्शे में अखरोट का दिखाया गया था, जिसकी छाँव में कुछ कर्ज न लौटाने वाले सुस्ता रहे थे और कुछ नए कर्जदार उसकी छाल के दंदासे से दाँत उजाल कर बैंक पर मुस्कुराते, तेज-तेज कदमों से जाते दिखाए गए थे। एक अखरोट पर तो शाहीन अपनी चोंच रगड़ रहा था। सच तो यह है कि नक्शे पर इस पेड़ से पूरी बिल्डिंग में जान पड़ गई थी मगर वास्तविक स्थल पर प्रकृति इस पेड़ को नक्शे के मुताबिक उगाने में नाकाम रही थी।

यूसुफी का कुआ ँ : चौथा झगड़ा यह कि निचली मंजिल में मेहमान के कमरे के सामने बल्कि ऐन दहलीज पर एक 25 फिट गहरा कुआँ था जिसे वो भरने के लिए किसी तरह तैयार नहीं था, इसलिए कि इसका पानी बहुत मीठा था। नक्शे में उस कुएँ की जगह एक गोल निशान O बना हुआ था, जिसे हमने खम्बा समझ कर नक्शा पास कर दिया था। इस घटना के डेढ़ साल बाद हमने एक अमरीकी महिला आर्किटेक्ट से कराची के एक आफिस का नक्शा बनवाया तो उसमें हमें बीस ऐसे निशान O दिखाई दिए। हमारा माथा ठनका। हमने पूछा बीबी! इतने बहुत से कुओं का क्या करेंगे? ठंडे, मीठे पानी के हैं? वो हक्की-बक्की रह गईं। शादी की अँगूठी को तेजी से उँगली पर घुमाते

हुए बोलीं, मुझे पाकिस्तान में दफ्तर डिजायन करते हुए आठ साल हो गए मगर ऐसा मजाक किसी म्त्गहू ने आज तक नहीं किया। आपको यह खयाल कैसे आया? फिर यह कि पाँचवें फ़्लोर पर कुएँ कैसे खोदे जा सकते हैं? सुना है आप उर्दू में रदवे लिखते हैं, क्या उर्दू में खम्बे को कुआँ कहना FUNNY बात होती है?

चर्चा नौशेह्रा के ठेकेदार और मीठे कुएँ की हो रही थी, बात किसी और मीठे धारे में बह निकली। काफी देर झक-झक के बाद समझौता हमारे इस सुझाव पर हुआ कि कुएँ को soak pit में बदल दिया जाए। ठेकेदार इस शिष्ट विजय पर बहुत प्रसन्न और रोमांचित था कि गढ़ा अपनी जगह कायम रहेगा। नाम में क्या रखा है।

निर्माण कला की बारीकियों पर बहस और द्वंद का दरवाजा (जो अब तक बारादरी बन चुका था) बंद नहीं हुआ था कि बिल्डिंग के सामने एक तांगा, जिसका दायाँ पहिया भेंगा था, आकर रुका। उससे खान साहब प्रकट हुए। हमें रास्ते पर जोर-जोर से झगड़ते देखा तो दुआ-सलाम के तकल्लुफ को बंदूक की नोक पर रख कर पहले ठेकेदार से उसका और उसके बाप का नाम पूछा और फिर उसका नाम वल्दियत के साथ ले ले कर गालियाँ देनी शुरू कर दीं। उन्हें इससे गरज नहीं थी कि झगड़ा क्या है और कौन सच पर है। वो दोस्त के साथ थे, गालियाँ और रेता बनाने (पूरी भेड़ को भून कर बनाया गया गोश्त) की धमकियाँ बढ़ने लगीं और उनकी आँखों में खून उतर आया तो हमने मध्यस्थ बन कर बीच-बचाव कराया। उसे मौखिक सजा देने के बाद उन्होंने 'बाई दी वे' गड़बड़ समझने की कोशिश की और चुटकी बजाते समस्या नं. 3 और 4 का एक जुड़वाँ हल में पेश किया कि बैंक के सामने जो शीशम का घना पेड़ बिल्डिंग की खूबसूरती को खराब कर रहा है उसे उखाड़ कर विवादित कुएँ में लगा दिया जाए।

फूल की पराकाष्ठा : क्रोध की लाली चेहरे से विदा हुई तो खान साहब को देख कर कलेजा धक से रह गया। रिटायर होने के बाद एक अरसे से एकांतवास कर रहे थे। शायद बैंक के ही किसी आदमी ने उन्हें हमारे आने की सूचना दी और वो तांगा पकड़ कर ऐसी घोर ठंड में आठ-नौ मील नौशेह्रा मिलने आए थे। सिर पर कत्थई रंग का ऊनी कंटोप जिसे पूरा खोल लें तो मुँह का लैटर बाक्स सा बन जाता है। मलेशिया की शलवार, कमीज तह की हुई। सफेद चादर का सीने पर क्रास बनाए हुए। कफ के बटन और नकली दाँत गायब। मुँह की पुड़िया सी बँध गई थी। हाथ और उँगलियाँ जैसे बूढ़े पेड़ की जड़ें। एक आँख पर हरे रंग का छज्जेनुमा कपड़ा जो रौशनी से बचने के लिए आँख बँधवाने के बाद कई लोग बाँधते हैं। कंधे झुके हुए, चेहरा दुखों की धूल से अटा हुआ। अँगीठी के सामने भी हमने अपने दोनों हाथ बगल में दे रखे थे और लग रहा था जैसे जूतों में उँगलियों की जगह बर्फ की डलियाँ रखी हैं। पेशावरी चप्पल में उनके पाँव बिना मोजों के थे। वो हमारे लिए धूप छोड़ कर एक तरफ साए में बैठ गए।

वक्त ने कैसी इमारत ढाई थी। दुबारा आँख भरकर देखने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। बहुत सोचा, कुछ समझ में न आया कि क्या कहें। आखिर ये मुश्किल उन्होंने आसान कर दी। कहने लगे, 'हाय! यूसुफी साहब! यह आपको क्या हो गया? वो हमारा दिलदार कहाँ गया?'

हमने कहा, 'आपने बड़ी तकलीफ की, मैं कार भेजकर बुलवा लेता।'

जवाब में उन्होंने अब्दाली की तरफ इशारा किया जो कार में उस सूरत में खड़ी की जा सकती थी कि छत में एक छेद कर दिया जाए जिसमें से नाल चिमनी की तरह निकली रहे और सुलगती गालियों का धुआँ निकलता रहे।

पूछा 'आज कल क्या चल रहा है? बोले, इसी हराम फस्ल को उगाया था। पूरी खाद, पूरा पानी और प्राविडेंट फ़ंड डाला मगर अजब बावली मंडी है। जब फस्ल जोरदार हुई तो कीमतें गिर गईं और जब मेरी सारी फस्ल को पाला

मार गया तो चढ़ गईं। बस इसी ज्वार भाटे में सब कुछ बह गया। अब तबीयत में मंदी का रुझान पाया जाता है।

हमने आँख के आप्रेशन पर हमदर्दी और अफसोस जाहिर किया तो दूसरी आँख से मुस्कुराते हुए बोले 'जी हाँ! मेरी आँखें अब इतनी कमजोर हो गई हैं जितनी आपकी बीस साल पहले थीं।'

कुछ देर बाद उन्होंने एक ट्रे से कपड़ा हटाया, कहने लगे 'आपके लिए रेता लाया हूँ। बेटी ने सारी रात जाग कर पकाया है।'

'और भाभी....?'

उन्होंने दृढ़ता से अब्दाली को थामा और सिर झुका लिया।

हमें अपने से अधिक उदास देख कर कहने लगे (मैं तो तुम्हारे पास रोने को आया था मगर तुम्हारी आँखें तो पहले ही लाल हैं।) यह आपको क्या हो गया? आधा घंटा गुजर गया। आपने एक पंक्ति तक नहीं पढ़ी। कोई शेर सुनाइए । जी बहुत उदास है।

'वो बातें, वो रातें सब ख्वाब हुईं। वो जवान मर गया, अब तो आप सुनाइए ।'

(ऐ खुदा! मुझे गुलाब का फूल बना दे कि मैं महबूब के गोद में पत्ती-पत्ती होकर बिखर जाऊँ)

विदा होने लगे तो मलेशिया की कमीज पर मोतियों की माला बिखर गई। अब्दाली पर सिर टेक कर कहने लगे' बच्चे सब घर बार के हुए। वक्त नावक्त हुआ चाहता है। मंजिल अब दूर नहीं। बाबा ने यह बंदूक पहले-पहल चलवाई थी तो मेरी उम्र सात साल की थी। 65 साल की संगी साथी है। इसने बहुत दुख बँटाए हैं, कभी-कभी आहट सी इच्छा होती है कि इसे मेरे साथ ही दफ्न कर दिया जाए लेकिन कल रात ध्यान आया कि आपसे पहली बार वतन में भेंट हो रही है। एक दोस्त, एक पठान की तरफ से ये तुहफा कुबूल कर लीजिए। माना कि अनुपयोगी है।

'लेकिन एक शर्त पर, आप मेरी तरफ से वो सोने का ठीकरा-तमगा स्वीकार कर लेंगे जो जीवन में किसी काम न आया।'

जिंदगी ने उन्हें क्या दिया? कुछ भी तो नहीं। अपने अलावा कुछ भी तो नहीं मगर हाँ; जीने का एक निराला बांकपन; हर हाल में खुश रहने का और खुश रखने का हौसला, साँत्वना और हमदर्दी का एक सलीका, उन्होंने अपनी टेढ़ से जिंदगी को सम्मानित बना दिया। यादों और बातों के इन पन्नों को अभी पलट कर देखा तो खुद चौंक पड़ा।

इक महक सी लिखते हुए कैसे आई

जिंदगी को उन्होंने क्या दिया? अब जो गौर करता हूँ तो आश्चर्य होता है कि इतनी तंगी, इतने अभाव और ऐसी तन्हाई के बाद भी कितने प्रसन्न, कितने आनंदित। कितनी खुशियाँ, कैसी-कैसी खुशबुऐं बिखेरते चले गए कि आज दामन में नहीं समातीं। फूल जो कुछ धरती से लेते हैं उससे कहीं अधिक लौटा देते हैं।

... बहुत काम रफू का निकला : चपरासी ने आकर कहा, 'साहब सलाम बोलता है, हरामी का चश्मा खो गया है। आपको इंग्लिश गालियों का अनुवाद करने के लिए बुला रहा है।

एंडरसन के सामने पेश होने से पहले हमने एक असंबंधित फाइल हाथ में ले ली। जिसे casual ढंग से पीछे लगा लेने से गर्म पतलून की सीट के छेदों, हवादानों और रफू के ऊपर किया हुआ रफू छिप जाता था। उसने कभी नहीं पूछा कि तुम इस फाइल को हर समय सीने बल्कि कूल्हों से क्यों लगाए फिरते हो।

तुम हँस दिए , तुम चुप रहे

मंजूर था पर्दा मिरा

मेज के सामने हम उसकी नाक की सीध में खड़े हो गए। यह इसलिए कि जहाँ उसके अस्तित्व, अंगों-प्रत्यांगों से और बहुत सी बुराइयाँ जोड़ी जाती थीं, वहाँ यह भी प्रसिद्ध था कि एक कान से ऊँचा सुनता है कोई दायाँ बताता कोई बायाँ। शायद वो खुद भी स्पष्ट नहीं था। हाथ का प्रश्नवाचक चिह्न कभी दाएँ, कभी बाएँ कान से पास बना कर बात दुबारा सुनता। चपरासी के अनुसार, जो स्वभाव से न्यायप्रिय था, दोनों कान आधे-आधे बहरे हैं। इसलिए श्रवणशक्ति ठीक रखने के लिए हमने यह निष्पक्ष ऐंगिल ढूँढ लिया था।

चेहरा औरत का धड़ ? : बोला 'पहली बात तो ये कि सुबह से मेरा चश्मा गायब है। इस बास्टर्ड से पूछता हूँ तो मुँह ही मुँह में वर्नाक्यूलर (देसी) गालियाँ बकता है। दूसरे यह कि कुछ दिन से देख रहा हूँ कि तुम्हारे चेहरे का रंग पीला पड़ गया है। मुझे पीले रंग से कोई विरोध नहीं लेकिन इस रंग की सही जगह वो नहीं जहाँ तुमने लगा रखा है। तुम्हारे चेहरे का एक्सप्रेशन हर वक्त ऐसा रहता है जैसा बजट के बाद बिजनेसमैन का। दुबले होते जा रहे हो। तुम्हारी पतलून की कमर ढीली हो गई है जिसमें तुमने बैंक के स्टेशनरी डिपार्टमेंट की पिन लगा रखी है। पांयचे भी ढीले हो गए हैं। तुम्हें खुले वातावरण और समुद्री हवा की आवश्यकता है..... बेहद। परसों तीसरे पहर एक जर्मन मालवाहक जहाज से मिसेज शिवारिज पहुँचे रही है। पहुँच रही है का क्या अर्थ... पहुँच चुकी है। जहाज कल से बर्थ के इंतजार में खड़ा है मगर न जाने क्यों डिसएम्बार्क होने की अनुमति परसों मिलेगी। उसका पति खुलना में पोस्ट है। तुम और यासूब पश्चिमी किनारे पर उसका सम्मान के साथ स्वागत करो। इस यात्रा में सवा दो महीने लगे हैं। आराम और स्वादिष्ट खाने के लिए कार्गो बोट से अधिक रईसाना यात्रा की कल्पना भी नहीं की जा सकती। केवल एक केबिन होता है। जहाज का सारा स्टाफ इकलौते यात्री के आगे-पीछे फिरता है। ड्रिंक न केवल मुफ्त बल्कि इतने अधिक कि लगता है व्हिस्की के ड्रम में बैठे हजारों मील बहे चले जा रहे हैं। जी चाहता है खुदा करे मंजिल कभी न आए। समुद्री जहाज की एक विशेषता यह है कि इसका एयर क्रेश नहीं होता, कम-से-कम मेरी जानकारी में तो नहीं। परसों समय से पहले गोदी पहुँच जाना। तुम्हें उस औरत को पहचानने में अधिक कठिनाई नहीं होगी। एक तो तुम बहुत योग्य हो, दूसरे उस जहाज में उसके अलावा सभी मर्द हैं। दो साल पहले मिली थी, तब अपनी उम्र 35 साल बताती थी, अब का पता नहीं। 35 तक पहुँचते-पहुँचते औरत मिस्री sphinx हो जाती है। चेहरा औरत का और धड़ इत्यादि बबर शेर के। हा! हा! हा! तुम्हारी आयु क्या है? अच्छा तो प्रोटोकोल में कोई चूक नहीं होनी चाहिए। तुम मेरा प्रतिनिधित्व करोगे और यासूब पाकिस्तान का। प्रोटोकोल की जानकारी जुरूरी है। एक दिन तुम्हें ब्रिटिश हाईकमिश्नर से भी मिलवाऊँगा। तुम्हारी ट्रेनिंग मेरा दायित्व है। नियमानुसार तो मेहमान को लेने मुझे स्वयं जाना चाहिए था लेकिन मैं उन गोभी खाने वाले नाजियों का दिमाग खराब नहीं करना चाहता।

तुम्हें शायद मालूम न हो, हम जर्मनी को kraut land यानी गोभीखोरों का देश कहते हैं। उसके सामने गोभी का नाम न लेना वरना मुँह नोच लेगी और तुम्हारे मुँह पर नुचवाने के लिए चश्मे के सिवा कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं।

मशवरे हो रहे हैं आपस में : पिछवाड़े फाइल का घूँघट डाले हम इस कूचे से यूँ बेआबरू हो कर निकले। बाहर आ कर हमने अपने बॉस मिस्टर यासूबुल-हसन गौरी को ये जानकारी दी तो उनकी कलग़ी ढलक कर ऐड़ी से आ लगी, मुसीबत यह थी कि हमने कोई समुद्री जहाज नहीं देखा था और उन्होंने 35 साल की जर्मन औरत। इसलिए स्वागत के मोर्चे पर निकलने से पहले दोनों ने एक दूसरे के ज्ञान के गड्ढे को भरने की कोशिश की। उदाहरण के लिए हमने पूछा कि समुद्री जहाज गंतव्य तक पहुँचने के बाद भी शायद पानी में खड़ा रहता है या 'लेंड' करता है। रेल की तरह सीटी देता है या हवाई जहाज की तरह बिना हॉर्न के छुट्टा फिरता है? अरब सागर के पानी की ऊँचाई कराची की ऊँचाई और जहाज की ऊँचाई, इन दोनों से कितनी ऊँची या नीची होगी? सीढ़ी लगानी पड़ेगी? मालवाहक जहाज से पैसेंजर कैसे छुड़ाया जाता है? तूफान और बिजली के डर से अकेली औरत लोहे-लक्कड़ से लदे हुए कार्गो स्टीमर में किससे चिपटती होगी? जहाज में खम्बा होता है? उन्होंने भी 35 साल जर्मन औरत के बारे में कुछ ऐसे ही बेसिक सवाल उठाए। हम तो खैर थे ही रेगिस्तान के रहने वाले लेकिन वो भी कुछ कम प्यासे नहीं निकले। उनका बचपन एक छोटे से गाँव में बीता था और वो आज भी औरत की कल्पना घड़े के बिना कर ही नहीं सकते थे। जैसे-जैसे सवाल हुए, एक दूसरे के अज्ञान पर तरस आने लगा। उस समय उनकी एक दाढ़ में भयानक दर्द था, जिसके कारण उनका जबड़ा कान तक सूजा हुआ था। चेहरे का यह आधा हिस्सा बिल्कुल नार्मल और भला मालूम देता था। दूसरे आधे हिस्से में अनगिनत झुर्रियाँ और एक गढ़ा था जिसे केवल सूजन से भरा जा सकता था। बंबई से कराची तक की यात्रा एक मालवाहक जहाज में कर के पाकिस्तान आए थे जिसका भला-बुरा स्केच बनाकर हमारी खोजबीन की थोड़ी बहुत संतुष्टि कर दी वरना हमें तो बचपन में पानी के उद्देश्य और निर्माण के बारे में कुछ और ही जानकारी दी गई थी, जिसमें जहाज और जर्मन औरत दूरबीन से भी दिखाई नहीं पड़ते थे।

पानी में तैरने को मछली बनाई तूने

मछली के तैरने को तूने बनाया पानी

लेकिन हमें महसूस हुआ कि जब तक उनकी दाढ़ जबड़े से बल्कि जबड़ा दाढ़ से अलग न कर दिया जाए जर्मन औरत का नख-शिख उनके सूजे हुए भेजे में नहीं घुस सकता। उन्होंने केवल माल ले जाने वाला जहाज और हिटलर का फोटो देखा था और उन्हीं से जर्मन औरत का अनुमान लगाने की कोशिश कर रहे थे।

सच तो ये है कि हमें जिंदगी की बेसिक जानकारी और अधूरी जवानी के अभावों का ज्ञान फिल्मों के द्वारा होता है। निकटता और भेद भरी बातें तो दूर हमने तो किसी मदमाती के सामने अपने मोजे भी नहीं उतारे। आज भी हमारे विचार मुँह खोल कर अपना नाम नहीं बता सकते। जिन पत्थरदिल सुंदरियों पर हमारी जवानी की हाय पड़ी उनके मुँहासे निकल आए, कइयों के तो जुड़वाँ बच्चे भी हुए।

अंत में यह निर्णय हुआ कि हम परसों यानी इतवार को उनके होटल पहुँच जाएँ। वहाँ आपसी सलाह-मशवरे से एक दूसरे के ज्ञान की प्यास बुझाई जाएगी।

हम ठीक दस बजे सिंध इस्लामिया होटल पहुँच गए। कमरे के तीन कोनों में तीन चारपाइयाँ पड़ी थीं और चौथे में एक माचा। हमारा सिर उसके पायों के कंधे तक आता था। यह बैंक के चार अफसरों का कछार था, जिन्हें विभिन्न

ब्रांचों से अधेड़ावस्था, निकम्मेपन, उद्दंडता, रिश्वतखोरी के कारण तबादला करके यहाँ एक दूसरे पर छोड़ दिया गया था। जेल में अनाड़ी चोर-उचक्के और साधारण जेबकतरे आदी मुजरिमों और खूनियों के सामने थर-थर काँपते हैं सो यही हमारी हालत थी। दो चारपाइयाँ और माचा तो बसे हुए थे, हाँ यासूबुल-हसन गौरी की झलंगी चारपाई अंधेरी पड़ी हुई थी। टूट हुए बानों की दाढ़ियाँ कहीं खशखशी, कहीं चुग्गी, कहीं भरवाँ, कहीं एक मुट्ठी दो उँगल और कहीं जमीन पर झाड़ू दे रही थीं। उसी की पट्टी में टाँग का आँकड़ा अटका कर हम भी झूलने लगे। हमारे घुटने आँखों को छू रहे थे। मुहावरा कुछ भी कहता रहे मगर उस समय कोई हमारे घुटने पर मारता तो आँख जुरूर फूटती। गौरी साहब को पूछा तो पता लगा कुछ दिन पहले उन्होंने अपनी दाढ़ फुटपाथ पर प्रेक्टिस करने वाले एक दाँत-उखाड़ से 3श्च् आने में प्लास से निकलवाई थी, उसमें सेप्टिक हो गया। अब उसका इलाज करवाने एक होम्योपैथ के यहाँ गए हैं, आते होंगे।

चार दरवेश : न्यूनाधिक 6 महीने से यह जीजोड़ा कुनबा इस स्वर्ग में खा, पी, रह रहा था। पेटूपन के अतिरिक्त हमें उनमें कोई चीज साझी नजर नहीं आई। सुबह नाश्ते में पाव भर हलवा और एक-एक दर्जन पूरियाँ प्रति व्यक्ति। हाँ किसी का पेट खराब हो तो तीन परांठे। खाना बोल्टन मार्केट के 'अल्लाह की रहमत का मुहम्मदी होटल' (जी हाँ आज भी इसका यही नाम है। अब तो फोन भी लग गया है) में खाते। इसलिए कि वहाँ पाँच आने में एक भुना हुआ तीतर मिल जाता था। दस आने में पेट भर जाता था। पंद्रह आने में नीयत भी भर जाती थी। जिस चीज को हमने माचा कहा है वो वस्तुतः एक मचान थी जैसी खेत के बीचों-बीच दिखाई पड़ती है, जिनके नीचे से ग्याभन भैंस सरलता से निकल जाती है। इसके नीचे पहियों वाली एक अस्पताली चारपाई पार्क्ड थी। जो रात-बिरात अचानक आने वाले मेहमान के लिए लुढ़का कर कमरे के बीच में ऐन पँखे के नीचे बिछा दी जाती थी। पँखे के नीचे चारों में से कोई नहीं सोता था, इसलिए कि छत के जिस लोहे के कुंडे में बीस साल से वो हिल रहा था, वो 3/4 घिस चुका था। चारों अपनी चारपाई पर सोते और वो उस पर जागता था।

दरवाजे के दाईं तरफ वाली चारपाई पर मौलूद अहमद तिरमिजी नहाने के बाद तौलिया बाँधे बैठे थे। हमने उनके कंधों पर कुहनियाँ रख कर सम्मान में उठने से रोका। किसी समय उनके भतीजे की चीनी के बर्तनों की अच्छी बड़ी दुकान थी। नालायक को रेस खेलने का चस्का लग गया। उसे पकड़ने हर इतवार को रेसकोर्स जाते थे। वो खैर तवायफों के फेर में पड़ कर रेस छोड़ गया लेकिन चचा जान वहीं के यानी घोड़ों के हो रहे। हर घोड़े की वंशावली और उसके बाप-दादों की खरगर्मियाँ उन्हें डेटवाइज कंठस्थ थीं।

मुझे याद है वो जरा - जरा

उन्हें याद हो कि न याद हो

चारपाई के सिरहाने वाली दीवार पर एक फोटो था जिसमें वो जिताने वाले घोड़े की गर्दन में हाथ डाले होठों पर होठ रखे खड़े थे। होठों वाली बात समझ में नहीं आई, इसलिए कि चूमना आवश्यक था तो संबंधित सुम चूमते।

दाईं ओर की चारपाई पर अहमदुल्ला 'शशदर' पसरे थे। कहते थे कि अहमदुल्ला कुछ अधूरा-अधूरा सपाट-सा लगता था। पैंतीस साल पहले बंबई में नौकरी की तो अंग्रेज एकाउन्टेन्ट मिस्टर उल्ला कह कर पुकारने लगा इसलिए मैंने नाम के साथ शशदर जोड़ लिया। वैसे उसी काल में दस-बारह गजलें कह कर उतने ही मुशायरों में खुद को हूट करवा चुके थे। अक्सर बताते कि बंबई में अच्छे सुनने वाले दुर्लभ हैं। लखनऊ में तो उस गए-बीते

काल में भी ऐसे-ऐसे श्रोता शेष थे जो कि तीन दिन के मुशायरे में दाद देते-देते बेहोश हो जाते थे। दो-तीन गजलें हमें भी सुनायीं। 25 प्रतिशत शेर छंद से बाहर थे, शेष शालीनता से। आयु 57 के लगभग होगी। सारा जीवन कुंवारे रहे मगर निठल्ले नहीं रहे। अब पाप करने की क्षमता चुक रही थी। दो साल पहले अंतिम प्यार में नाकामी हुई और सुंदरियों के सामीप्य की संभावना न रही तो पीर हजरत सय्यद गुलंबर शाह का दामन पकड़ लिया।

गर नहीं वस्ल तो हजरत ही सही

गुलंबर शाह किसी खानदानी या पैदाइशी विवशता के कारण नहीं बल्कि अपनी इच्छा व क्षमता से सय्यद बने थे। हमारे देखते ही देखते सय्यद हो गए फिर रहमतुल्ला अलैह।

हर आदमी के साथ एक शैतान पैदा होता है। अहमदुल्लाह शशदर ने अपने शैतान को मुसलमान करके उसकी लवें कतर दी थीं और टखनों से ऊँचा पाजामा पहनवा दिया था। अब आके न जाने वाले बुढ़ापे ने चेहरे पर गहरी खन्दकें खोद दी थीं। वैसे सेहत और काठी मजबूत थी अगर वो जन्म-वर्ष जो उन्होंने नौकरी के फार्म में भरा था, वाकई ठीक था तो उन्होंने 3.5 साल की उम्र में मैट्रिक कर लिया होगा। जिस दिन उनकी पतलून में से पाजामा झाँकता दिखाई देता वो जुमे का दिन होता था। हकीमी में भी थोड़ा बहुत हाथ डालते थे। हर बीमारी का इलाज अंजीर से करते थे, पुराने और गुप्त रोगों का इलाज सड़े अंजीर से करते थे।

मचान पर कंबर अली शाह विराजमान थे। गर्म जलेबी खा रहे थे। पट्टी से आधा धड़ नीचे लटका कर चिपचिपाते हुए हाथ को हमसे हाथ मिला कर साफ किया। शाह जी का सही वज्न कभी निश्चित न हो सका। सुनने में आया था कि एक बार किसी के 'बाथरूम स्केल' पर चढ़ गए तो सुई बावली हो गई। चलना-फिरना तो बहुत बाद की बात है उठना-बैठना दूभर था। हर समय हाँफते रहते। गप के शौकीन हालाँकि एक साँस में तीन शब्दों के बाद चौथे पर पंक्चर हो जाता था। आठ-दस थोते साँस ले कर ताजा दम होते तो यह भूल जाते कि किस विषय पर वाक्य का दम टूटा था, इसलिए नए विषय पर फिर से नए वाक्य बनाते। इसी तरह दिन भर चिकने खंभे पर चढ़ते, फिसलते रहते। पूरा शरीर एक स्थायी कराह था जिस पर काली बैल्ट से भूमध्य रेखा खींच लेते थे ताकि उत्तर और दक्षिण पहचानने में आसानी रहे। रूप-स्वरूप मौलवी मुहम्मद इस्माइल मेरठी के आसमानी गुंबद की तरह -

बनाया है क्या दस्ते - कुदरत ने गोल

चुरस है न झुर्री न सिलवट न झोल

कछुआ प्रोफेसर से जीत गया : शाह जी का सारा जीवन एक स्लो मोशन फिल्म था सिवाय उन तीव्र क्षणों के जब मन खाने या दूसरे की बुराई पर लगा हो। एक बार कुर्सी पर दोपहर के खाने के बाद की नींद ले रहे थे कि सपने में एक मोटी रसीली सी जलेबी देख कर आँख खुल गई। हमें मुस्कुराते देखा तो बोले 'लो जी! मध्य एशिया और तुर्की में संसार के सबसे दीर्घजीवी पाए जाते हैं। मालूम है क्यों? लंबी उम्र का राज वस्ततः लंबी नींद, मोटी खाल और slow living में छिपा है। प्रोफेसर काजी अब्दुल कुद्दूस उसे उड़े। वाक्य जोड़े 'उदाहरण के लिए कछुए को ही लीजिए, सैकड़ों साल जीता है। अकबर के समकालीन कुछ कछुए आज भी जीवित हैं। यह मैकेनिज्म प्रकृति ने कछुए में ही रखा है कि कोई चीज जरा भी अरुचिकर लगी तो सट से गर्दन अंदर कर ली, दूसरी स्थिति में 'जब जरा गर्दन निकाली देख ली।' सूखे से जी ऊब गया तो घंटों पानी में दम साधे पड़े हैं। हद ये कि शार्क मछली तक कछुए को सुअर बराबर समझती है। अगर मैं आवागमन में विश्वास करता तो परमात्मा से यही प्रार्थना करता कि

हे भगवान! तेरी लीला न्यारी है, मुझे तू अगले जन्म में कछुआ बना दे। इंसान और वो भी प्रोफेसर बिल्कुल न बनाइयो।'

इंद्रधनुष रंग : हँसी बिल्कुल बच्चों जैसी, हँसते तो हँसते ही चले जाते। जरा सी बात पर सारा शरीर जेली की तरह थुलथुलाता। दूसरे को लंबी बात नहीं करने देते थे। कोई स्वभाव से अपरिचित बात को तूल देता तो केवल अपना विशेष नोट 'काम अधिक है और समय कम है' दे कर बैठे-बैठे सो जाते। थोड़ी-थोड़ी देर में आँख खोल कर सभा का रंग देखते और मुस्कुरा कर फिर सो जाते। शाह जी ने सारा जीवन संसार को इस तरह देखा जैसे किसी ने कच्ची नींद उठा दिया हो।

खिला स्वभाव, मीठी भाषा, महफिल सजाने में महारथ, बाहर-भीतर एक। किसी को परेशान नहीं देख सकते थे। अक्सर कहते थे कि कई आलोचक तो संसार में ऐसे कमी निकालते हैं जैसे P.W.D. का बनाया हुआ हो। उन्होंने स्वयं तो कभी नहीं कहा लेकिन सुना और बाद में देखा भी कि उनका इकलौता बेटा अविकसित और अल्पबुद्धि है। शाहजी से पहले-पहल परिचय हुआ तो चेहरे पर चेचक के गहरे-गहरे गड्ढे देखे थे, फिर कभी दिखाई न पड़े। बस मुस्कुराहट का एक इंद्रधनुष याद है जिसके दोनों किनारे इसी धरती से फूटे थे।

जेहलम के रहने वाले थे। वही जियाला, मर्द ही मर्द उगाने वाला जेहलम, जिसके लोग खुदा के बारे में कल्पना के लिए थानेदार को देखते हैं। लंबाई वही जिसका जिला जेहलम में कोई नोटिस नहीं लेता यानी छह फिट। पच्चीस साल टांगानिका में बिता गए थे लेकिन दिल अभी भी खजूर में अटका हुआ था। इसलिए जब वो यह भूमिका बाँधते कि 'हमारे हाँ तो चलन यह है कि...' तो यह समझा नहीं जा सकता था कि उनका मुँह टांगानिका शरीफ की ओर है या जेहलम की ओर। उदाहरण के लिए जब वो यह कहते कि 'हमारे हलवाई की जलेबी अँगूठे के बराबर मोटी होती है,' तो उनका इशारा जेहलमी पाँव के अँगूठे की ओर और प्रशंसा पात्र टांगानिका का हलवाई मूलचंद होता था।' होठ छुआते ही शीरे की पिचकारियाँ छूटने लगती हैं', (यह कह कर अपनी जीभ फर्जी शीरे में लिथड़े हुए होठों पर बार-बार फेरते। इस चीज पर जान देते थे) और जब वो यह कहते कि 'हमारे हाँ कोई B.A. फर्स्ट डिवीजन में पास कर ले तो प्राइमरी स्कूल में मास्टर हो जाता है और फेल हो जाए तो फौज में कप्तान।' तो उनका संकेत जेहलम की शिक्षा प्रणाली की निकम्मेपन की ओर होता था।

पच्चीस साल वतन से बाहर रहे। घाट-घाट का पानी पिया नहीं तो चखा जुरूर था लेकिन लहजे में पोठोहारी मिठास बाकी थी और बोली पर अब भी देहात की सोंधी शब्दावली चढ़ी हुई थी। नमूना देखिए 'मैं टांगानिका से बाई एयर फ्लाई करके गाँव आया। तरीख-शरीख तो याद नहीं। हमारे चक के दूधिया भुट्टों में रस पड़ गया था पर दाना कठोर नहीं हुआ था। दिया-जले हवाई जहाज ने रनवे पर तीन खेत दौड़ कर एक दम टेक ऑफ किया। अभी चार बाँस ही ऊपर उठा होगा कि ऐसी घुमेर आई कि क्या बताऊं। जैसा कि बचपन में पाखाने में पहला सिग्रेट पीकर हाल हुआ था। तीन बार सूरा-ए-यासीन (कुरआन का हिस्सा) के बाद दस हजार फिट ऊपर पहुँचे तो वाह वाह! बादलों के ये मोटे-मोटे गाले ऐसी आपाधापी से उड़ रहे थे जैसे गुस्से में भिन्नाये हुए अपने दुल्ला धुनिए की धुनकी हुई रुई। जब उसकी औरत शैदां और अलिफदीन पटवारी परस्पर सहमति से एक दूसरे का मुँह काला करते हुए पकड़े गए और परिणामतः वो खुदा बख्श जुलाहे के साथ भाग गई। अजी उधर अपने टांगानिका में अपहरण की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। करना खुदा का क्या हुआ कि अचानक एक एयर पॉकिट आया और जहाज ने

हाइट लूज की, लो जी 1/100 सेकिंड में पच्चीस तीस कुंऐं नीचे उतर गया। लगा जैसे दिल हल्क में आकर फँस गया है। जैसा कि मैट्रिक का रिजल्ट देख कर हुआ...'

शाह जी के बारे में प्रसिद्ध था कि मैट्रिक में फेल होने के बाद आत्महत्या की कोशिश की, उसमें भी फेल हुए।

हर चारपाई के नीचे एक टीन का ट्रंक, खड़ाऊं और लोटा रखा था। सिवाय शाहजी के मचान के। शाहजी अपने तमाम पतलून तकिए की प्रेस के नीचे, और बुशर्ट खूंटी पर रखते थे। कहते थे कि मोजे केवल शादी के दिन पहने थे। सेहरे के बिना बिल्कुल बेकार मालूम देते हैं। उन्हें जब चौथे चाँद से उतरना होता तो साथी बारी-बारी अपना ट्रंक बतौर पायदान रख देते और वो उस पर पाँव रख कर सहारे से नीचे उतर जाते। पहले यहाँ मौलूद अहमद तिरमिजी का बक्सा स्थायी रूप से पड़ा रहता था लेकिन एक दिन शाहजी ने बेध्यानी में पूरा भार उस पर डाल दिया तो लचक कर चपाती हो गया और कपड़ों में दबी हुई